प्रकाशक—

श्री साधुमार्गी जैन

पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय

का

हितेच्छु श्रावक मण्डल,

रतलाम (मालवा)

अखिल भारतीय

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस

बम्बई

द्वारा

प्रमाणित

मुद्रक—

के० हमीरमल लूणियाँ जैन

अध्यक्ष—

दि डायमण्ड जुबिली (जैन) प्रेस, अजमेर

श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहब के व्याख्यानों में से सम्पादित "सेठ धन्नाजी" नामक यह पुस्तक "व्याख्यान सारसंग्रह पुस्तक माला" का पन्द्रहवां पुष्प आपके सन्मुख उपस्थित है। इससे पहले व्याख्यानों में से सम्पादित कर करा कर चौदह पुष्प यह मंडल प्रकाशित कर चुका है। मंडल से प्रकाशित साहित्य को जनता ने हृदय में अपनाकर हमारे उत्साह को बढ़ाया है, इसीसे यह मंडल ऐसी आदर्श पुस्तकें सम्पादन कराने और प्रकाशित करने में समर्थ हुवा है।

मंडल से सम्पादित और प्रकाशित साहित्य के मुख्यतः दो विभाग हैं, एक तत्व विभाग और दूसरा चरित्र विभाग। तत्त्व विभाग में जैनागम के प्रमुख तत्त्व—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पांचों व्रत की विशद व्याख्या समझाई गई है। जिससे मनुष्य उनकी उपयोगिता समझ कर उन्हें ग्रहण करने के लिए उद्यत हो।

कथा विभाग में भी उन्हीं की कथाएँ हैं, जो इन तत्वों को

आचरण मे लाकर संसार के लिये उत्तम आदर्श छोड गये हैं। ऐसे पुरुष या सतियों के चरित्र में अनेक शिक्षाएँ भरी हुई हैं। प्रकाशित साहित्य में अहिंसादि चार व्रतों के साथ सम्बन्ध रखने वाली कथाओं की पुस्तकें तो आ चुकी हैं परन्तु परिग्रह परिमाण व्रत से सम्बन्ध रखनेवाली पुस्तक कोई नहीं आई थी। यह पुस्तक उसी की पूर्त्ति करनेवाली है।

परिग्रह का ममत्व त्यागने पर सम्पत्ति मनुष्य के साथ किस तरह दौड़ती है और उसका ममत्व करने उसके लिये झगडा करने पर वह किस तरह दूर भागती है यह आदर्श इस पुस्तक में आप को मिलेगा।

नियमानुसार यह पुस्तक छपवाने से पहले श्री अखिल भारतीय श्री श्वे० स्था० जैन कान्फ्रेन्स ऑफिस बम्बई को भेज कर साहित्य निरीक्षक समिति द्वारा प्रमाणित करा ली गई है और उसकी तरफ से प्राप्त सूचनाओं से उचित सुधार भी कर दिया गया है।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है, कि श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज साहब जो व्याख्यान फरमाते हैं, वे साधु-भाषा में ही होते हैं। फिर भी संग्राहक और सम्पादक द्वारा भाषा एवं भाव सम्बन्धी भूल होना बहुत सम्भव है। ऐसी भूल के लिए संग्राहक और सम्पादक ही उत्तरदायी हैं, न कि

पूज्य श्री । अतः जो महाशय हमें ऐसी भूल बतावेंगे, हम उनका आभार मानेंगे और आगामी संस्करण में उस त्रुटि को निकालने का प्रयत्न करेंगे । इत्यलम् ।

रतलाम	भवदीय—
फाल्गुन पूर्णिमा	बालचंद श्रीश्रीमाल वर्द्धमान पीतलिया
सं. १९९५ वि.	सेक्रेटरी प्रेसीडेण्ट

श्री साधुमार्गी जैन पूज्य श्रीहुक्मीचंदजी महाराज की
सम्प्रदाय का हितेच्छु श्रावक मंडल,
रतलाम (मालवा)

प्रकरण सूची।

सेठ धन्नाजी

कथारम्भ

भारत के महाराष्ट्र प्रदेश-मे पुरपइठान नाम का एक नगर था। अहमदनगर के पास पौठन नाम का एक छोटा सा कस्वा है, जिसके लिए यह कहा जाता है कि पूर्व समय में यह अच्छा नगर था और इसका नाम "पुरपइठान" था। जो भी हो, "पुरपइठान" एक समृद्ध नगर था। राजा प्रजा और विदेशी आदि सभी लोग आनन्द से रहते थे।

पुरपइठान में 'धनसार' नाम का एक सेठ रहता था। 'धनसार, धनवान तथा लब्धप्रतिष्ठ था और परिवारदार भी था। उसके तीन पुत्र थे, जिनके नाम संस्कृत कथानुसार धनदत्त, धनदेव और धनचन्द्राधिप थे, परन्तु भाषा-कथा में लाला, बाला तथा काला

नाम बताये गये हैं। इस प्रकार धनसार सेठ धनादि की ओर से भी सुखी था, और परिवार की ओर से भी।

धनसार सेठ के यहाँ शुभ नक्षत्र योग में चौथे पुत्र का जन्म हुआ। धनसार सेठ के घर के पीछे के बाग में एक छोटी-सी वाटिका थी। महाराष्ट्र में, प्राचीन घरों के पिछले भाग में आज भी वाटिकाएँ देखने में आती हैं। धनसार सेठ के इस नवजात बालक का नारविवार गाड़ने के लिए नौकरानी धनसार के घर के पीछे की अशोकवाटिका में गई। उसने, नारविवार गाड़ने के लिए अशोकवाटिका की भूमि में सहज ही कुदाली चलाई। अनायास वह कुदाली भूमि में गड़े हुए एक धातुपात्र से टकराई। दासी ने, उसी समय धनसार सेठ को बुला कर उससे कुदाली टकराने का हाल कहा। धनसार ने दासी द्वारा बताया गया स्थान खोदा, तो वहाँ से एक द्रव्यपूर्ण हण्डा निकला। द्रव्य से भरे हुए हण्डे को देख कर सेठ बहुत ही प्रसन्न हुआ। वह अपने मन में कहने लगा, कि यह नवजात बालक बहुत ही पुण्यवान जान पड़ता है। पहले तीन लड़कों का नार-विवार गाड़ने के समय तो मुझे टका-पैसा रखना पड़ा है, परन्तु इसका नार-विवार गाड़ने के समय धन मिला है; इससे जान पड़ता है कि यह बालक पुण्यवान एवं होनहार है।

द्रव्यपूर्ण हण्डा निकलवाकर सेठ ने उसी स्थान पर नवजात

बालक का नारविवार (नाल) गड़वा दिया। फिर उसने सोचा कि नार-विवार गाड़ते समय मुझे भूमि में से जो द्रव्य मिला है, वह द्रव्य इस नवजात पुत्र के पुण्य-प्रभाव से ही मिला है। मेरे यहाँ द्रव्य की कुछ कमी नहीं है, इसलिए मुझे इस अशोकवाटिका से प्राप्त द्रव्य से ममत्व न करना चाहिए, किन्तु जिसके पुण्य के प्रभाव से यह द्रव्य मिला है, उस नवजात पुत्र के जन्मोत्सव में ही लगा देना चाहिए। इस धन के द्वारा दीन-दुःखी लोगों की सेवा करनी चाहिए, इसे घर में न रख लेना चाहिए।

धनसार सेठ ने, अशोकवाटिका की भूमि में से निकले हुए धन द्वारा नवजात पुत्र का जन्मोत्सव किया। उसने दीन-दुःखी लोगों को अन्न-वस्त्र प्रदान किया और इसी प्रकार दूसरे लोगों का भी यथा-योग्य सत्कार किया। सब लोग, धनसार सेठ का जय जयकार करने के साथ ही, जिसका जन्मोत्सव किया गया था उस बालक के लिए शुभकामना करने लगे तथा उसे आशीर्वाद देने लगे।

नवजात बालक के नामकरण का समय आया। धनसार सेठ ने सोचा, कि इस बालक के जन्मते और इसका नार विवार गाड़ते समय ही मुझे धन प्राप्त हुआ है, इसलिए इस बालक का नाम 'धनकुँवर' रखना ठीक होगा। इस प्रकार सोचकर धनसार सेठ ने अपने चौथे पुत्र का नाम 'धनकुँवर' रखा। सेठ के सम्बन्धियों

एवं इष्ट-मित्रों ने भी सेठ द्वारा किये गये बालक के नामकरण का समर्थन किया।

बालक धनकुँवर, पाँच धाय और अठारह देश की दासियों के संरक्षण में वृद्धि पाने लगा। उसकी कान्ति, दिन प्रतिदिन चन्द्र की कान्ति के समान बढ़ने लगी। धनकुँवर जब आठ वर्ष का हुआ तब धनसार सेठ ने उसको कलाचार्य के पास विद्या पढ़ने तथा कला सीखने के लिए बैठाया। धनकुँवर थोड़े ही समय में विद्वान् एवं कला-निपुण हो गया।

धनकुँवर, माता-पिता और दूसरे सब लोगों को आनन्द देने लगा। उसकी आकृति प्रियवादिता एवं उसके स्वभाव से सब लोग प्रसन्न रहते। धनसार सेठ समय-समय पर अपने छोटे पुत्र धनकुँवर की प्रशंसा किया करता। वह कहता कि धनकुँवर बहुत पुण्यात्मा है। इसके जन्मते ही भूमि से द्रव्य निकला, यह थोड़े समय में विद्या तथा कला से भी सुपरिचित हो गया और सब लोग इससे प्रसन्न रहते हैं, तथा यह सब को प्रिय है, इससे इसका पुण्यात्मा होना स्पष्ट है। इसके जन्म के पश्चात् मेरे धन-वैभव एवं सम्मान में भी वृद्धि हुई है और जो लोग मेरे प्रतिकूल रहते थे, वे भी अनुकूल हो गये हैं। इस प्रकार धनकुँवर बहुत ही भाग्यशाली है।

धनसार सेठ समय-समय पर धनकुँवर को इस प्रकार प्रशंसा करता रहता। माता-पिता का अपने छोटे पुत्र पर अधिक स्नेह रहता ही है। इस कारण तथा धनकुँवर के गुण-स्वभाव आदि के कारण धनसार सेठ धनकुँवर से स्नेह भी अधिक रखता और अपने शेष पुत्रों एवं अन्य लोगों के सामने धनकुँवर के स्वभाव भाग्य आदि की सराहना भी किया करता। धनसार सेठ द्वारा धनकुँवर की इस तरह की प्रशंसा, धनसार के तीनों ज्येष्ठ पुत्रों को असह्य जान पड़ने लगी। वे, पिता द्वारा की जानेवाली धनकुँवर की प्रशंसा को अपनी निन्दा समझने लगे। तीनों भाई, आपस में पिता के कार्य की समालोचना करके कहने लगे, कि धनकुँवर की प्रशंसा द्वारा पिता हमारी निन्दा करते हैं, यह अनुचित है।

तीनों भाइयों ने आपस में सलाह करके एक दिन अवसर देखकर धनसार सेठ से कहा कि—पिताजी, धनकुँवर हमारा भाई एवं स्नेहभाजन है, फिर भी आप धनकुँवर तथा उसके भाग्य की समय-समय पर इतनी अधिक प्रशंसा कर डालते हैं, कि जो हमारे लिए असह्य हो जाती है। हम ऐसा समझने लगते हैं, कि धनकुँवर की प्रशंसा द्वारा आप हमारी निन्दा कर रहे हैं। आप धनकुँवर की बहुत प्रशंसा करते हैं इससे हमें दुःख होता है, हमारा अपमान होता है और धनकुँवर भी बिगड़ता है। इसलिए आप धनकुँवर की प्रशंसा न किया करें। दूसरे लोगों के तथा स्वयं धनकुँवर के

सन्मुख, आपका धनकुँवर की प्रशंसा करना नीति विरुद्ध भी है।
नीति में कहा है—

> प्रत्यक्षे गुरवः स्तुत्याः परोक्षे मित्र बान्धवाः ।
> कर्मान्ते दास भृत्याश्च पुत्राश्चैव मृताः स्त्रियः ॥

अर्थात्—गुरु की प्रशंसा गुरु के सन्मुख की जाती है। मित्रों तथा बन्धु बान्धवों की प्रशंसा परोक्ष में—उनकी अनुपस्थिति में—की जाती है। नौकर चाकर की प्रशंसा कार्य समाप्त हो जाने पर की जाती है और पुत्र एवं स्त्री की प्रशंसा उनके मरने के पश्चात् की जाती है।

इसके अनुसार पुत्र की प्रशंसा पुत्र की मृत्यु के पश्चात् तो की जा सकती है, परन्तु आप धन्ना की प्रशंसा धन्ना के सन्मुख ही करते हैं, जो इस नीति-वाक्य के प्रतिकूल भी है। इसलिए आप धन्ना की प्रशंसा न किया करें, तो अच्छा। आपके लिए धन्ना की प्रशंसा करने का कार्य शोभास्पद भी नहीं है।

अपने पुत्रो का कथन सुन कर धनसार सेठ सोचने लगा कि मेरे ये पुत्र मूर्ख और ईर्षालु हैं। धनकुँवर इनका छोटा भाई है, इसलिए उसकी प्रशंसा से इनको प्रसन्न होना चाहिए, परन्तु ये लोग उसकी प्रशंसा को अपनी निन्दा समझकर दुःखी होते हैं। इस प्रकार सोचते हुए उसने अपने लड़को से कहा, कि—मैं धनकुँवर की प्रशंसा करता हूँ उसमें तुम्हें अपनी निन्दा मानने का तो

कारण नहीं है! बल्कि वह तुम्हारा छोटा भाई है, इसलिए तुम्हें उसकी प्रशंसा सुन कर और प्रसन्न होना चाहिए। इसके सिवा मैं उसकी जो प्रशंसा करता हूँ वह झूठी भी नहीं है। फिर तुम्हें बुरा लगने का क्या कारण?

पिता का यह कथन सुन कर तीनों भाइयों की आँखें चढ़ गईं। वे कहने लगे कि—हम तो सोचते थे कि हमारा कथन सुन कर आप भविष्य में धन्ना की प्रशंसा न करने के लिए हमें विश्वास दिलावेंगे, लेकिन आप तो और उसकी प्रशंसा की पुष्टि कर रहे हैं! आप उसको पुण्यात्मा और सद्भागी कहते हैं, तो क्या हम तीनों पापात्मा और दुर्भागी हैं?

धनसार ने उत्तर दिया, कि—मैंने तुम लोगों को पापात्मा या दुर्भागी तो कभी नहीं कहा! मैंने तो केवल उसकी प्रशंसा की है और वह भी उसका नार-विवार गाड़ते समय धन निकलने, विद्या बुद्धि आदि में उसके निपुण होने और उसकी सर्वप्रियता के कारण।

लड़कों ने कहा—बस, नार-विवार गाड़ते समय धन निकलने के कारण ही आप उसको सद्भागी कह कर उसकी प्रशंसा करते हैं! हमारी दृष्टि में यह कोई सद्भाग्य की बात नहीं है, किन्तु हम तो ऐसा समझते हैं कि धनकुँवर को आप सुयश देना चाहते थे, उसके जन्मोत्सव में आप हम लोगों के जन्मोत्सव की अपेक्षा

अधिक व्यय करना चाहते थे, इसलिए आप ही ने वाटिका में धन का हण्डा गड़वा दिया और हण्डा निकाल कर यह प्रसिद्ध कर दिया कि नार-विवार गाड़ते समय धन निकला। ऐसा करके आपने धन्ना को सद्भागी भी बताया और उसके जन्मोत्सव में वह द्रव्य भी व्यय कर दिया। घर में से निकाल कर इतना धन व्यय करने में हम लोगों के कारण आपको संकोच रहता, आपको यह भय था कि इतना धन व्यय करने में लड़के किसी प्रकार की बाधा डाल देंगे, इसलिए आपने यह मार्ग निकाला। ऐसी दशा में हम लोग धनकुँवर को सद्भागी कैसे मान सकते हैं! हमारी समझ से तो धनकुँवर दुर्भागी है। उसके जन्मते ही घर में से इतना धन व्यय हुआ, व्यापार की भी अवनति हुई और हमारे आपके बीच मतभेद भी उत्पन्न हुआ। धन्ना में अभी से ऐसे-ऐसे दुर्गुण हैं कि कुछ कहा नहीं जाता, और सम्भव है कि कुछ समय पश्चात् वह कुल-कलङ्क सिद्ध होकर सारा कुल ही नष्ट कर डाले। कहा ही है—

एकेन शुष्क वृक्षेण दह्यमानेन वह्निना ।
दह्यते तद्वनं सर्वं कुपुत्रेण कुलं यथा ॥

अर्थात्— जिस तरह आग से जलता हुआ एक ही सूखा वृक्ष सारे वन को जला देता है, उसी प्रकार एक ही कुपुत्र सारे कुल को नष्ट कर देता है।

लड़कों की बात के उत्तर में धनसार सेठ ने कहा कि—तुम्हारा यह कथन सर्वथा झूठ है, कि वाटिका में से जो धन निकला वह मेरा ही गड़वाया हुआ था। धनकुँवर के जन्मोत्सव में अधिक व्यय करने के लिए मुझे ऐसा करने की आवश्यकता भी न थी, न मुझे तुम लोगों की ओर से किसी प्रकार की बाधा उपस्थित होने का भय था। घर का सब द्रव्य मेरा ही कमाया हुआ है, इसलिए मैं किसी प्रकार का भय करता भी क्यों? वास्तव में तुम लोग असहनशील हो, इसी कारण तुम से धनकुँवर की प्रशंसा नहीं सही जाती और तुम लोग उसके लिए ऐसा कहते हो। तुम लोग जब मेरे पर भी धन गाड़ने आदि का दोषारोपण करते हो, तब धनकुँवर में दुर्गुण बताओ इसमें क्या आश्चर्य है।

धनसार के तीनों पुत्र अपने पिता की बातें सुनकर कुछ क्रुद्ध से हो उठे। वे कहने लगे कि यदि अशोकवाटिका में आपने धन नहीं गड़वाया था, किन्तु धन्ना के सद्भाग्य से ही धन निकला था और इसी कारण आप उसको सद्भागी कह कर उसकी प्रशंसा करते हैं तथा उसकी अपेक्षा हमें हतभागी मानते हैं, तो हम यह कहते हैं कि सद्भागी कौन है इसका निर्णय कर लिया जावे। आप इस विषयक परीक्षा का उपाय निकालिये और उस-उपाय द्वारा सद्भाग्य दुर्भाग्य की परीक्षा कर डालिये। यदि परीक्षा में हम लोगों की अपेक्षा धनकुँवर सद्भागी सिद्ध होगा तब तो हम

लोग स्वयं ही चुप हो जावेंगे, अन्यथा आपको उसकी प्रशंसा करनी होगी।

पुत्रों के इस कथन के उत्तर में धनसार सेठ ने कहा, कि— इस विषयक परीक्षा में तुम लोग यशस्वी बन सकोगे इसमें मुझे तो सन्देह ही है। मेरी समझ से जहाँ नम्रता, सरलता, गुण ग्राहकता तथा प्रियवादिता है, वहीं सद्भाग्य है और जहाँ ईर्षा, द्वेष उद्दण्डता एवं असहिष्णुता है, वहीं दुर्भाग्य है। इसलिए मैं यही कहता हूँ कि ऐसे प्रपंच में न पड़ो, किन्तु सरलता रखो और धन्ना के प्रति कृपापूर्ण व्यवहार करो।

तीनों लड़कों से इस प्रकार कह कर धनसार सेठ ने अपने कनिष्ठ पुत्र धनकुँवर अथवा धन्ना को बुलाकर उससे कहा, कि— बेटा धन्ना, ये तीनो तुम्हारे बड़े भाई हैं। बड़ा भाई पिता के तुल्य आदरणीय होता है, इसलिए तुम्हारी ओर से इनका किसी भी समय अनादर न हो इसका ध्यान रखना और इन्हे अपना श्रद्धेय मानकर इनकी आज्ञा का बराबर पालन करना। इसी प्रकार इन लोगों का भी यह कर्त्तव्य है कि तुम्हे पुत्र से भी अधिक प्रिय मान कर तुम पर सदैव कृपा रखें।

पिता का कथन सुन कर धनकुँवर ने कहा—पिताजी, आज यह कहने की आवश्यकता क्यों हुई? मैं तो इन भाइयों को आप ही के तुल्य मान कर सोचता हूँ, कि मेरे चार पिता हैं, इसलिए

मेरे समान सद्भागी दूसरा कौन होगा ! मैं, इनके चरणों की रज अपने मस्तक पर धारण करने के लिए सदैव तैयार रहता हूँ, और ऐसा करना मेरा कर्त्तव्य भी है।

धनसार और धन्ना की बातें सुनकर धन्ना के तीनों भाई आपस में कहने लगे, कि—पिता-पुत्र कैसी कपटभरी बातें सुना रहे हैं ! जैसे इनका कपट कोई समझता ही न हो। इस तरह की मीठी बातें करना कपटियों का स्वभाव ही होता है। नीतिकारों ने कहा ही है—

असती भवति सलज्जा, क्षारं नीरंच शीतलं भवति।
दम्भी भवति विवेकी प्रियवक्ता भवति धूर्त्तजनः॥

अर्थात्—दुराचारिणी स्त्री, लज्जावती होती है। खारा जल, ठण्डा होता है। पाखण्डी, ज्ञानी बनता है, और धूर्त्त लोग प्रिय बोलनेवाले होते हैं।

आपस में इस तरह कहते हुए तीनो भाई धनसार से बोले कि—पिताजी, आप इस तरह की बातें रहने दीजिये। ऐसी बातों से कोई लाभ नहीं है। धनसार ने उनसे पूछा कि फिर तुम लोग क्या चाहते हो ? उन तीनों ने उत्तर दिया कि—आप हम तीनों की अपेक्षा धन्ना को बड़ा सद्भागी मानते हैं, इसलिए किसी परीक्षा द्वारा इस विषयक निर्णय हो जाना चाहिए।

अपने तीनो लड़कों का आग्रह मान कर धनसार सेठ ने अपने

चारों लड़कों को तीस-तीस माशा सोना देते हुए कहा कि—इस सोने द्वारा एक दिन कमाई करके जो यह मेरा सोना मुझे लौटा देगा और उस एक दिन की कमाई से अपने सारे कुटुम्ब को भोजन करा देगा वही सद्‌भागी है। जो कुटुम्ब को जितना अच्छा भोजन करावेगा, वह उतना ही बड़ा सद्‌भागी माना जावेगा और जो अपेक्षा कृत जितना खराब भोजन करावेगा, वह उतना ही हतभागी माना जावेगा।

धनसार के तीनो लड़कों ने पिता द्वारा कही गई बात स्वीकार करके तीस-तीस माशा सोना ले लिया, और फिर कहा कि—भाग्य-परीक्षा के लिए आपने जो मार्ग निकाला है वह तो ठीक है, परन्तु आप, हम तीनों भाइयों में भेद क्यों डालना चाहते हैं! धन्ना के भाग्य के सामने हम तीनों ही के भाग्य की परीक्षा होनी है, इसलिए हम तीनो आपके द्वारा दिये गये सोने द्वारा तीन दिन तक सम्मिलित व्यापार करेंगे, और तीन दिन तक कुटुम्ब के लोगो को भोजन करा देंगे। लड़को के कथन को सुनकर सेठ ने उनसे कहा कि—ठीक है, तुम लोग ऐसा करो। उन तीनों से यह कह कर सेठ ने धन्ना से कहा कि—तुम अभी तीन दिन तक कुछ व्यापार न करो, चौथे दिन व्यापार करना। धन्ना ने पिता का यह कथन स्वीकार किया और सोना लौटा दिया।

धनसार के तीनों पुत्र, पिता द्वारा दिया गया तीस-तीस माशा

सोना लेकर व्यापार करने के लिए चले। उन्होंने तीन दिन तक बहुत परिश्रम किया, फिर भी उन्हे पर्याप्त लाभ नहीं हुआ। उन तीन दिनों के लिए उन्होंने कुटुम्ब के लोगो को पहले से ही भोजन के वास्ते आमन्त्रण दे रखा था, इसलिये उन्हे कुटुम्ब के लोगों को भोजन तो कराना ही पड़ा, परन्तु उनको व्यापार मे अधिक लाभ नहीं हुआ था इसलिए वे कुटुम्ब के लोगों को अच्छा भोजन न दे सके। उनने कुटुम्ब के लोगो को ऐसा रूखा-सूखा भोजन कराया, जो नित्य के साधारण भोजन से भी गया बीता था। उनके द्वारा कराये गये भोजन से कुटुम्ब के लोग असन्तुष्ट ही रहे, और कुछ लोग तो अवस्थय भी हो गये। धनसार सेठ ने तीनों लड़कों से कहा कि—तुमने यह क्या किया! यदि तुम लोगों को पर्याप्त लाभ नहीं हुआ था, तो मुझसे कहते। मैं कुटुम्ब के लोगो को ऐसा भोजन करा देता, जिससे वे अस्वस्थ या असन्तुष्ट तो न होते। पिता के इस कथन के उत्तर में तीनों भाई रुष्ट होकर कहने लगे कि—हम तीनों ने अपनी शक्ति भर व्यापार में प्रयत्न किया, फिर भी यदि अधिक लाभ नहीं हुआ तो इसका हम क्या करें! क्या कुटुम्ब के लोगो को अपने किसी गरीब कुटुम्बी के यहाँ गरीबी का भोजन न करना चाहिए! हम से जो कुछ हुआ वह हमने किया, अब देखेंगे कि आपका सद्भागी बेटा धन्ना क्या करता है और कैसी कमाई करके कुटुम्ब के लोगों को कैसा अच्छा भोजन देता है! पुत्रों के कथन

के उत्तर में धनसार ने कहा कि—जो हुआ सो हुआ, लेकिन अब शान्त रहो और भाई-भाई प्रतिस्पर्द्धा न करो। धन्ना तुम तीनों से छोटा है। जब तुम लोग भी अधिक कमाई न कर सके, तो वह कैसे कर सकेगा! ऐसी दशा में कुटुम्ब के लोगों को व्यर्थ ही कष्ट में डाल कर अपने घर की हँसी कराना अनुचित है।

धनसार सेठ के कथन के उत्तर में तीनों लड़के नाराज होकर कहने लगे, कि—ऐसा न होगा! आपको धन्ना की परीक्षा लेनी ही होगी! लड़कों की हठ देख कर धनसार ने धन्ना को बुलाया और उससे कहा, कि—तुम मुझ से तीस माशा सोना लेकर उससे एक दिन व्यापार करो और उस एक दिन के व्यापार की आय से कुटुम्ब के लोगों को भोजन कराओ। पिता की बात सुनकर धन्ना ने धनसार से प्रार्थना की कि—पिताजी, यद्यपि वणिकपुत्र होने के कारण वाणिज्य करना मेरा व्यवसाय ही होना चाहिए, परन्तु अभी मैं बालक हूँ, इस योग्य नहीं हूँ कि स्वतन्त्र रूप से व्यापार करके अच्छी आय कर सकूँ। यदि मैं ऐसा कर भी सकूँ तब भी मुझे भाइयों की प्रतिस्पर्द्धा में न उतरना चाहिए। यदि मेरे ज्येष्ठ बन्धुगण मुझ से असन्तुष्ट हों, तो या तो मुझे विदेश भेज दीजिये, या अलग कर दीजिये, परन्तु भाइयों की प्रतिद्वन्द्विता में न उतारिये। ऐसा करने से हानि की ही सम्भावना है।

धन्ना का कथन सुन कर धनसार ने अपने तीनों लड़कों से

कहा, कि—धन्ना ठीक कहता है। यदि तुम लोग कहो, तो मैं धन्ना को विदेश भेज दूँ, या इसे अलग कर दूँ। यह अपने बड़े भाइयों की प्रतिस्पर्द्धा नहीं करना चाहता।

धनसार के कथन के उत्तर में धन्ना के तीनों भाई कहने लगे कि—आपको इस युक्ति को रहने दीजिये! आपने हम लोगों की परीक्षा लेकर कुटुम्ब के लोगों के सामने हमको तुच्छ बनाया, और अब धन्ना की परीक्षा के समय टालाटूली करते है! धन्ना को विदेश भेजने या अलग करने की बात पर फिर विचार करेंगे अभी तो जिस तरह हमारी परीक्षा ली, उसी तरह धन्ना की भी परीक्षा लीजिये।

भाइयों का कथन सुनकर धन्ना भी आवेश में आगया। उसने धनसार से कहा कि—पिताजी, मेरे भाइयों की इच्छा ऐसी ही है तो मैं भी परीक्षा दूँगा।

कला और विद्या में धन्ना ने शकुनशास्त्र आदि भी सीखा था। उसने शकुन देखकर धनसार सेठ से तीस माशा सोना लिया तथा व्यापार करने के लिये घर से निकल पड़ा। धनसार सेठ के घर से कुछ ही दूर ईश्वरदत्त नाम के एक सेठ की दुकान थी। अपने घर से निकल कर धन्ना, ईश्वरदत्त सेठ की दुकान पर आया। उस समय ईश्वरदत्त सेठ एक पत्र पढ़ रहा था। उस पत्र के उल्टे अक्षर पत्र की दूसरी ओर भी दिखाई दे रहे थे।

धन्ना ने उन उल्टे अक्षरों को पढ़कर पत्र का आशय समझ लिया। उसने जान लिया कि यह पत्र अमुक जगह का है, और इसमें लिखा है कि अमुक वंजारा अमुक-अमुक माल लेकर आ रहा है, माल अच्छा है, खरीद लेना।

पत्र का आशय समझ कर धन्ना अपने घर आया। इधर ईश्वरदत्त सेठ ने पत्र पढ़ कर अपने मुनीम-गुमाश्तों को आज्ञा दी, कि तुम लोग भोजन करके नगर के अमुक मार्ग पर जाओ। उधर से अमुक वंजारा अमुक-अमुक माल लेकर आ रहा है। वह माल खरीद लेना। सेठ की आज्ञानुसार उसके मुनीम गुमाश्ते भोजन आदि से निवृत्त होकर रवाना हों उससे पहले ही धन्ना घोड़े पर बैठकर उस ओर रवाना हो गया जिधर से वंजारा आ रहा था। वंजारे के समीप पहुँच कर धन्ना ने अपना परिचय देते हुए उससे कहा, कि—मैंने रात को स्वप्न मे यह देखा, कि तुम माल लेकर पुरपइठान नगर को आ रहे हो। यह स्वप्न देख कर मैंने सोचा, कि मुझे व्यापार करना है, अब तक मैंने व्यापार कभी नहीं किया है, इसलिए तुम्हारे माल की खरीद द्वारा मैं व्यापार प्रारम्भ करूँ।

धन्ना ने वंजारे से मृदुता-भरी बातें कीं। धन्ना की बातों से वंजारा प्रभावित हो गया। उसने कहा कि—मुझे तो अपना

माल बेचना ही है। तुम माल देख कर भाव कहो। यदि हो गया, तो सब माल तुम्हें ही दे दूँगा।

धन्ना ने माल देख कर वंजारे से भाव तय किया, और सब माल का सौदा करके सौदे की साई (बयाना) में उसने अपने पिता के प्राप्त तीस माशा सोना वंजारे को दे दिया। सौदा पक्का कर के, धन्ना वहीं पर एक वृक्ष के नीचे विश्राम करने लगा।

सौदा हो जाने के कुछ देर पश्चात् ही ईश्वरदत्त सेठ के मुनीम गुमाश्ते वंजारे के पास आये। वे लोग वंजारे से कहने लगे, कि—आप हमारे शहर में माल लाये यह बहुत प्रसन्नता की बात है। देखें, आप कौन-कौनसा और कैसा माल लाये हैं। ईश्वरदत्त के मुनीम गुमाश्तों के कथन के उत्तर में वंजारे ने कहा, कि—अब माल देखने से क्या लाभ! माल का सौदा हो चुका है, और मैं माल बेच चुका हूँ। अब तो मैं माल दे कर मूल्य लेने का ही अधिकारी हूँ।

वंजारे का यह कथन सुनकर ईश्वरदत्त सेठ के मुनीम गुमाश्ते आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने वंजारे से पूछा कि—तुम्हारा माल किसने खरीद लिया है! वंजारे ने उत्तर दिया, कि—धनसार सेठ के लड़के धन्ना ने खरीद लिया है, जो उस वृक्ष के नीचे विश्राम कर रहा है।

ईश्वरदत्त सेठ के मुनीम गुमाश्ते आपस में कहने लगे, कि—यह

तो अच्छा नहीं हुआ! इस माल के भरोसे सेठ ने बहुतों से सौदा कर लिया है, और माल धन्ना ने खरीद लिया! धन्ना को यदि यह मालूम हो जावेगा, कि ईश्वरदत्त सेठ ने माल देना कर लिया है, तो वह माल का बहुत मुनाफा मांगेगा। इसलिए यहीं पर धन्ना को कुछ मुनाफा देकर उससे माल खरीद लेना चाहिए। खाली हाथ जाकर सेठ को मुँह कैसे बतावेंगे।

इस प्रकार सोचकर ईश्वरदत्त सेठ के मुनीम गुमाश्ते धन्ना के पास गये। उन्होंने धन्ना से माल के सम्बन्ध में बातचीत की, और अन्त में यह तय हुआ कि धन्ना एक लाख रुपया मुनाफा लेकर माल ईश्वरदत्त सेठ को दे दे। धन्ना ने एक लाख रुपया मुनाफे पर माल छोड़ दिया। उसने ईश्वरदत्त सेठ के मुनीम से एक लाख रुपये की हुण्डी लिखवा ली, और साई में दिया हुआ तीस माशा सोना वापस लेकर अपने घर चला आया। घर आकर उसने धनसार सेठ को तीस माशा सोना वापस कर दिया। धनसार सेठ ने उससे पूछा, कि—इस सोने द्वारा तूने क्या कमाया? धन्ना ने बंजारे के माल के सौदे का वृत्तात सुनाकर धनसार से कहा, कि—आप की कृपा से मैंने एक लाख रुपया प्राप्त किया है।

दूसरे दिन धन्ना ने प्राप्त एक लाख रुपये में से एक हजार रुपये द्वारा तो कुटुम्बियों को भोजन कराने की व्यवस्था की और शेष ९९ हजार रुपयों के वह तीन जोड़ आभूषण लाया। यह

करके धन्ना ने कुटुम्बियों को भोजन के लिए आमन्त्रित किया। कुटुम्ब के लोगों ने धन्ना के भाइयों द्वारा कराये गये भोजन को दृष्टि में रखकर—पहले तो धन्ना का आमन्त्रण अस्वीकार कर दिया, परन्तु अन्त में धन्ना की नम्रता और वाक्पटुता से सब ने आमन्त्रण स्वीकार कर लिया। धन्ना ने, सब कुटुम्बियों को श्रेष्ठ तथा रुचिकर भोजन कराया। धन्ना द्वारा दिये गये भोजन से प्रसन्न होकर कुटुम्ब के सब लोग धन्ना की प्रशन्सा करने लगे। कुटुम्बियों को भोजन करा चुकने पर धन्ना ने सब के सामने अपनी तीनों भौजाइयों को एक-एक जोड़ आभूषण भेंट करके उनसे प्रार्थना की, कि—आप तीनों मेरे लिए माता के समान हैं, आपने प्रेम पूर्वक मेरा पालन-पोषण किया है, इसलिए आप यह तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिये।

धन्ना द्वारा भेंट किये गये आभूषण पाकर और उसकी नम्र प्रार्थना सुन कर धन्ना की तीनों भौजाइयाँ गद्गद् हो उठीं। वे धन्ना को धन्यवाद देने लगीं। उपस्थित कुटुम्बी लोग भी धन्ना की प्रशन्सा करने लगे। धनसार सेठ भी धन्ना द्वारा की गई सब व्यवस्था देख कर बहुत प्रसन्न हुआ। इस प्रकार और सब लोग तो धन्ना से प्रसन्न हुए, लेकिन धन्ना के तीनों भाई धन्ना द्वारा कुटुम्ब को दिया गया भोजन देख कर तथा सब लोगों के मुँह से धन्ना की प्रशन्सा सुनकर जल गये। धन्ना ने उनकी पत्नियों को

आभूषण दिये यह बात भी उनका हृदय जलानेवाली ही हुई।

धन्ना के भाइयो को इस परीक्षा की घटना पर से शान्त हो जाना चाहिए था और उन्हे पिता द्वारा की जानेवाली धन्ना की प्रशन्सा ठीक माननी चाहिए थी। धनसार की ही तरह उन तीनों भाइयों की पत्नियों ने भी अपने-अपने पति से धन्ना की प्रशन्सा की, और उसे सद्भागी बताया। साथ ही कुटुम्ब के लोग भी धन्ना की प्रशन्सा करते थे। इन सब बातों को दृष्टि में रखकर धन्ना के लिए उनकी प्रशन्सा असह्य न होनी चाहिए थी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। धन्ना की प्रशन्सा सुनकर उन तीनों का हृदय दग्ध हो उठा। दुष्टों का यह स्वभाव ही होता है। भर्तृहरि ने कहा है—

अकरुणत्वमकारण विग्रह. परधने वरयोपिति च स्पृहा।
सुजन बन्धु जनेष्वसहिष्णुता प्रकृति सिद्ध मिदं हि दुरात्मनाम् ॥

अर्थात्—निर्दयता रखना, निष्कारण लड़ाई झगड़ा करना, पर धन, परस्त्री पर मन चलाना, और सज्जनों तथा बन्धुजनों की उन्नति पर कुढ़ना, ये छ अवगुण दुष्टों में स्वभाव से ही होते हैं।

धन्ना की प्रशन्सा से जलते हुए धन्ना के तीनों भाई आपस में कहने लगे, कि—अबतक तो केवल पिताजी ही धन्ना की प्रशंसा करते थे, लेकिन अब तो कुटुम्ब के सभी लोग धन्ना की प्रशंसा करने लगे हैं। साथ ही, नगर मे भी उसकी प्रशन्सा हो रही

है। नगर के लोग भी कहते हैं, कि धन्ना बहुत होशियार और व्यापारकुशल है! उसने ईश्वरदत्त सेठ के यहाँ पत्र को पीछे की ओर से पढ़कर बंजारे का माल खरीद लिया, और फिर ईश्वरदत्त से ही एक लाख रुपया मुनाफा ले लिया। इस तरह दूसरे लोग तो धन्ना की प्रशन्सा करते ही हैं, लेकिन हमारी पत्नियाँ भी उसकी प्रशन्सा कर रही हैं। धन्ना ने, आभूषण देकर उन्हें भी स्वय की ओर कर लिया है। इस प्रकार धन्ना की प्रशन्सा के सन्मुख हम लोग तुच्छ बन रहे हैं।

धन्ना की प्रशंसा पर पानी फेरने का विचार करके तीनों भाई फिर धनसार सेठ के पास गये। उन्होंने प्रसङ्ग निकालकर धनसार सेठ से कहा, कि—पिताजी, हमने आप से कहा ही था, कि धन्ना में बहुत दुर्गुण हो गये हैं, आप धन्ना की प्रशन्सा मत कीजिये। लेकिन आप नहीं माने। अन्त मे उसका दुर्गुण प्रकट हुआ ही, और नगर के सब लोग उसकी निन्दा कर रहे हैं। आपने भाग्य-परीक्षा के लिए जो तीस-तीस माशा सोना दिया था, हम लोगों ने उस सोने द्वारा व्यापार ही किया, अधिक लाभ प्राप्त करने के लिये कोई अनुचित कार्य नहीं किया। लेकिन धन्ना ने तो ईश्वरदत्त सेठ के यहाँ उसके नाम का पत्र पीछे की ओर से पढ़कर उसकी आढ़त में आनेवाला माल खरीद लिया और फिर उसी से एक लाख रुपया मुनाफा ले लिया। धन्ना का यह कार्य कैसा

अनुचित था ! इस कार्य के कारण धन्ना की सब जगह निन्दा हो रही है। भविष्य में उसे अपनी दुकान पर कौन आने देगा ! साहूकार के लड़के के लिए यह कितने कलङ्क की बात है ! इसके सिवा इसने केवल तीस माशा सोने के आधार पर कितना अधिक माल खरीद डाला था। यह तो अच्छा हुआ कि ईश्वरदत्त को उस माल की आवश्यकता थी इसलिए उसने नफा देकर माल ले लिया, लेकिन यदि वह माल न लेता और सब माल धन्ना के ही गले पड़ता तो कैसी कठिनाई होती ! उस दशा में प्रतिष्ठा बचाना कठिन हो जाता। इसीलिए हम आप से कहते हैं, कि—आप धन्ना की व्यर्थ प्रशन्सा करके अनुचित काम करने के लिए उसका साहस मत बढ़ाइये।

लड़कों की बात सुनकर धनसार सेठ ने अपने मन में सोचा, कि मेरे इन लड़कों से अपने छोटे भाई धन्ना की बड़ाई नहीं सही जाती। जिस प्रकार वर्षा होने पर और सब वृक्ष तो हरे हो जाते हैं, लेकिन जवास सूख जाते हैं, उसी तरह दूसरे सब लोग तो धन्ना की प्रशन्सा करके या प्रशन्सा सुनकर प्रसन्न हो रहे हैं, लेकिन जान पड़ता है कि ये तीनों भाई धन्ना की बड़ाई से जल गये हैं। मैंने, इन्हीं का कथन मानकर इनकी तथा धन्ना की परीक्षा की थी। उस परीक्षा में धन्ना इन सब से श्रेष्ठ रहा इस लिए इनको शान्त हो जाना चाहिए था तथा धन्ना के प्रति अधिक

प्रेम रखना चाहिए था, लेकिन ये लोग तो और जल रहे हैं।

इस तरह सोचता हुआ धनसार, अपने तीनों लड़कों को—धन्ना के प्रति स्नेह रखने और उसकी प्रशन्सा से प्रसन्न होने के लिए—समझाने लगा। इसके लिए उसने एक दृष्टान्त भी दिया।

अपने तीनों लड़को को समझाने के लिए धनसार सेठ कहने लगा, कि—तीन मुनि थे। जिन में से एक उत्कृष्टविहारी थे। एक दिन वे उत्कृष्टविहारी मुनि एक श्राविका के यहाँ भिक्षा के लिए गये। वह श्राविका मुनि को शुद्ध आहार देने लगी, लेकिन मुनि को अपने अभिग्रहानुसार किसी प्रकार की कमी जान पड़ी, इसलिए वे आहार न लेकर श्राविका के यहाँ से चुपचाप चले गये। उन मुनि के जाने के पश्चात्, उसी श्राविका के यहाँ दूसरे मुनि भिक्षा के लिये गये। श्राविका ने उन दूसरे मुनि को भोजन दिया, और फिर उनसे कहा, कि—महाराज, अभी कुछ समय पहले अमुक मुनि आये थे। यही आहार मैं उन्हें भी देने लगी थी, लेकिन उन्होंने नहीं लिया, और बिना कुछ कहे चुपचाप चले गये। मैं आप से जानना चाहती हूँ, कि उन मुनि ने यह आहार क्यों नहीं लिया था?

श्राविका के प्रश्न के उत्तर में उन मुनि ने कहा, कि—वे महामुनि अभिग्रहधारी हैं। हम उनके चरणों की रज के समान भी नहीं हैं। उनने अपने अभिग्रह में किसी प्रकार की कमी देखी

होगी, इससे यह आहार न लिया होगा। दूसरे मुनि का यह उत्तर सुनकर श्राविका ने अपने मन मे कहा, कि—वे पहिले मुनि भी धन्य हैं, और ये दूसरे मुनि भी धन्य हैं।

दूसरे मुनि के जाने के पश्चात् उसी श्राविका के यहाँ तीसरे मुनि भिक्षा के लिए गये। श्राविका ने तीसरे मुनि को आहार-पानी देने के पश्चात् उन से कहा कि—पहले अमुक मुनि आये थे। मैं उन्हे इसी आहार में से आहार देने लगी थी, परन्तु वे बिना आहार लिये ही चले गये। फिर अमुक मुनि आये, जिन्होने इस आहार में से आहार लिया। मैंने उनसे पहले मुनि के आहार न लेने की बात कही तो उन्होंने कहा कि वे पहले मुनि उत्कृष्टविहारी और अभिग्रहधारी हैं। उन्होंने अपने अभिग्रह में किसी प्रकार की कमी देखी होगी इसलिए आहार न लिया होगा। पहले मुनि के विषय मे, दूसरे मुनि ने तो ऐसा कहा, लेकिन आप उन दोनों मुनियो के विषय मे क्या कहते हैं?

श्राविका के प्रश्न के उत्तर में उन तीसरे मुनि ने कहा, कि—वह पहला साधु बगुलाभक्त है। वह एक जगह आहार न लेकर दूसरी जगह आहार लेता है, और इस प्रकार पाखण्ड फैलाता है। तथा वह दूसरा साधु मुखमंगली है। वह मीठी-मीठी बातें बहुत करता है, और जैसा समय देखता है, वैसी बात कहने लगता है। उन दोनों से तो मैं ही अच्छा हूँ, जो व्यर्थ की मीठी बात भी नहीं

करता, न उस पहले मुनि की तरह ढोंग ही करता हूँ।

तीसरे मुनि का यह कथन सुनकर श्राविका ने अपने मन में कहा, कि—ये तीसरे मुनि ईर्षालु हैं। ये दूसरे की निन्दा करके स्वयं बड़े बनना चाहते हैं।

यह कथा सुनाकर धनसार सेठ ने अपने तीनों लड़कों से कहा, कि—इस दृष्टान्त पर से तुम लोग अपने लिए भी विचार कर लो, और यदि पहले मुनि की तरह नहीं बन सकते तो दूसरे मुनि की तरह के तो बनो! तीसरे मुनि की तरह धन्ना से ईर्षा तो न करो! वे दूसरे मुनि स्वयं पहले की तरह के न थे, फिर भी उनने पहले मुनि की निन्दा तो नहीं की। यह तो नहीं कहा, कि पहले मुनि ढोंगी हैं। उनने पहले मुनि को, स्वयं से उत्कृष्ट ही माना। लेकिन तीसरे मुनि ने तो दोनों ही को बुरा बताया। इसका कारण यह था, कि उन तीसरे मुनि में कुछ शिथिलता थी। अन्त में उन तीसरे मुनि की शिथिलता लोगों को मालूम हो ही गई और सब लोग उन्हें धिक्कारने लगे। इसी तरह यदि तुम लोग स्वयं भी धन्ना की तरह बन सको तब तो अच्छा ही है, लेकिन यदि वैसे नहीं बन सकते तो जिस तरह दूसरे मुनि ने पहले मुनि की निन्दा नहीं की, किन्तु उन्हें स्वयं से उत्कृष्ट माना, उसी तरह तुम भी धन्ना को अपने से उत्कृष्ट तो मानो! तीसरे मुनि की तरह धन्ना की निन्दा तो न करो! यदि व्यर्थ ही धन्ना की निन्दा करोगे, तो

होगी, इससे यह आहार न लिया होगा। दूसरे मुनि का यह उत्तर सुनकर श्राविका ने अपने मन में कहा, कि—वे पहिले मुनि भी धन्य हैं, और ये दूसरे मुनि भी धन्य हैं!

दूसरे मुनि के जाने के पश्चात उसी श्राविका के यहाँ तीसरे मुनि भिक्षा के लिए गये। श्राविका ने तीसरे मुनि को आहार-पानी देने के पश्चात उन से कहा कि—पहले अमुक मुनि आये थे। मैं उन्हें इसी आहार में से आहार देने लगी थी, परन्तु वे बिना आहार लिये ही चले गये। फिर अमुक मुनि आये, जिन्होंने इस आहार में से आहार लिया। मैंने उनसे पहले मुनि के आहार न लेने की बात कही तो उन्होंने कहा कि वे पहले मुनि उत्कृष्टविहारी और अभिग्रहधारी हैं। उन्होंने अपने अभिग्रह में किसी प्रकार की कमी देखी होगी इसलिए आहार न लिया होगा। पहले मुनि के विषय में दूसरे मुनि ने तो ऐसा कहा, लेकिन आप उन दोनों मुनियों के विषय में क्या कहते हैं?

श्राविका के प्रश्न के उत्तर में उन तीसरे मुनि ने कहा, कि—वह पहला साधु बगुलाभक्त है। वह एक जगह आहार न लेकर दूसरी जगह आहार लेता है, और इस प्रकार पाखण्ड फैलाता है। तथा वह दूसरा साधु मुखमंगली है। वह मीठी-मीठी बातें बहुत करता है, और जैसा समय देखता है, वैसी बात कहने लगता है। उन दोनों से तो मैं ही अच्छा हूँ, जो व्यर्थ की मीठी बात भी नहीं

पुनः भाग्य-परीक्षा

कौड़ी मिले न भाग्य बिन, हुन्नर करो हजार ।
को नर पावे साहबी बिना सुकृत के सार ॥
बिना सुकृत के सार सात सागर फिरि आवे ।
भटक मरे बिन काज गाँठ की लाज गमावे ॥
कहे दीनदरवेश दशों दिशि देखो दौड़ी ।
हुन्नर करो हजार भाग्य बिन मिले न कौड़ी ॥

प्राणी को, पूर्व कर्मों द्वारा निर्मित भाग्य के अनुसार ही वस्तु की प्राप्ति अप्राप्ति होती है। वस्तु-प्राप्ति के लिए कोई कितना भी प्रयत्न करे, लेकिन यदि उसके भाग्य मे वस्तु प्राप्त होना नहीं है

तो वे सब प्रयत्न निष्फल जाते हैं। बल्कि कभी-कभी वे ही प्रयत्न विपरीत परिणाम देनेवाले हो जाते हैं। लेकिन यदि भाग्य में वस्तु प्राप्त होना है, तो वह प्राप्त होकर ही रहती है, फिर चाहे उसकी प्राप्ति का मार्ग कितना ही क्यों न रोका जावे। भाग्य में होने पर वस्तु विना प्रयास के अनायास ही मिल जाती है। यह बात पिछले प्रकरण से स्पष्ट है ही। धन्ना के भाइयों ने बहुत प्रयत्न किया, फिर भी वे कुटुम्बियों को एक-एक दिन भोजन करा सकने इतना द्रव्य भी प्राप्त न कर सके, लेकिन धन्ना को नाम मात्र के प्रयत्न से ही एक लाख रुपया प्राप्त हो गया। इस प्रकरण से भी यही मालूम होगा, कि मनुष्य को अपने भाग्यानुसार ही लाभ हानि की प्राप्ति होती है, प्रयत्नानुसार नहीं। ऐसा होने पर भी मनुष्य को भाग्य के सहारे न बैठ रहना चाहिए किन्तु प्रयत्न करना चाहिए और प्रत्येक कार्य बहुत सोच-विचार कर करना चाहिये। एक विद्वान् ने कहा है—

> कर्मायत्तं फलं पुंसां बुद्धिः कर्मानुसारिणी।
> तथापि सुधिया भाव्यं सुविचार्यैव कुर्वता॥

अर्थात्—यद्यपि मनुष्य को कर्म के अनुसार ही फल मिलता है और बुद्धि भी कर्मानुसार होती है, फिर भी प्रत्येक काम सोच विचार कर करना चाहिये।

और भी कहा है—

क्लीबादैवमुपासते

अर्थात्—भाग्य के भरोसे हीजड़े (कायर) रहते हैं, वीर तो पुरुषार्थ करते ही रहते है, भाग्य के भरोसे अकर्मण्य बन कर नहीं बैठते।

इसके अनुसार मनुष्य को भाग्य के सहारे अकर्मण्य बन कर न बैठना चाहिए, न बिना विचारे कोई काम ही करना चाहिए। किन्तु विचारपूर्वक पुरुषार्थ करते रहना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है। भाग्य भी पुरुषार्थ करने पर फलता है। धन्ना भाग्यशाली था, फिर भी उसने पुरुषार्थ नहीं त्यागा, न बिना सोचे समझे कोई कार्य ही किया। परिणाम क्या हुआ, यह कथा से प्रकट ही है। वास्तव में पुरुषार्थी पुरुष को ही भाग्य की सहायता प्राप्त हो सकती है। आलसी या निरुद्यमी को भाग्य भी सहायता नहीं देता।

धनसार ने अपने तीनो पुत्रों को बहुत समझाया, किन्तु उन पर कोई अनुकूल असर नहीं हुआ। वे धनसार से कहने लगे, कि—हमने तो धन्ना के विषय में आप से ठीक बात कही, लेकिन आप तो उसका उल्टा अर्थ करते हैं। हम कहते हैं, कि धन्ना की प्रवृत्ति किसी दिन अपने घर का सारा धन भी नष्ट कर देगी, और अपनी प्रतिष्ठा भी मिट्टी में मिला देगी। लेकिन आप तो उल्टे धन्ना की प्रवृत्ति का समर्थन करके हमें अपराधी ठहरा रहे हैं! आप समझते हैं कि धन्ना सद्भागी है और हम लोग दुर्भागी हैं। इसी

कारण आप हमारे कथन की उपेक्षा कर रहे हैं। उसने ईश्वरदत्त सेठ से एक लाख रुपया लिया इस बात से आपका यह विश्वास और भी दृढ़ हो गया है कि धन्ना सद्भागी है, तथा आप हम लोगों से भी यही चाहते हैं, कि हम लोग स्वयं को हतभागी और धन्ना को सद्भागी मान कर उसकी प्रशंसा करें। परन्तु ऐसा कदापि नहीं हो सकता। धन्ना सद्भागी नहीं है। आप फिर परीक्षा कर लीजिये। धन्ना की चालाकी एक बार चल गई, बार-बार उसकी चालाकी नहीं चल सकती।

धनसार के तीनों पुत्रों ने इस प्रकार कह कर धनसार से इस बात का आग्रह किया, कि आप हमारी और धन्ना की फिर परीक्षा लीजिये। उन्होंने परीक्षा के लिए धनसार सेठ को विवश कर दिया, तब धनसार सेठ ने अपने उन तीनों लड़कों को साठ-साठ माशा सोना देकर कहा, कि—यह सोना मुझे वापस कर देना, और इसके द्वारा एक दिन में जो आय हो, उससे तुम तीनों एक एक दिन कुटुम्ब के लोगों को भोजन करा देना।

पिता से सोना लेकर तीनों भाइयों ने आपस में परामर्श किया कि—अब अपने को भी किसी न किसी उपाय से धन्ना की तरह अधिक द्रव्य प्राप्त करना चाहिए। इस प्रकार परामर्श करके तीनों भाई तीन दिन तक बहुत दौड़े, लेकिन अधिक द्रव्य प्राप्त न कर सके। तीनों ही दिन, उन्होंने कुटुम्बियों को रूखा-सूखा भोजन

कराया। कुटुम्बी लोग उनके द्वारा दिये गये भोजन से असन्तुष्ट ही रहे और कहने लगे कि—ये लोग व्यर्थ ही धन्ना की ईर्षा करके हम लोगों को भी कष्ट क्यों देते हैं!

चौथे दिन तीनों भाइयों ने धनसार से कहा कि—हमारी परीक्षा तो हो गई। इस समय हमारे दिन अच्छे नहीं हैं, इसलिए प्रयत्न करने पर भी हम लोग अधिक धन प्राप्त न कर सके, लेकिन अब धन्ना की परीक्षा लो। देखें धन्ना क्या करता है! हमारा तो यह दृढ़ विश्वास है कि यदि आज नहीं तो और कभी, विजय सत्य की ही होगी तथा धन्ना की चालाकी प्रकट हो ही जावेगी।

सेठ ने धन्ना को बुला कर उससे कहा कि—इन तीनों की तरह तुम भी परीक्षा दो। मेरे से साठ माशा सोना लेकर उसके द्वारा एक दिन में जो आय करो उससे कुटुम्बियों को एक दिन भोजन करा देना, तथा मेरा सोना मुझे वापस लौटा देना। धन्ना ने पहले की ही तरह धनसार से यही कहा कि—मैं अपने बड़े भाइयों की प्रतिस्पर्द्धा में नहीं उतरना चाहता, आप मुझे इनसे दूर कर दीजिये आदि, और धन्ना के इस कथन पर से धनसार ने भी अपने तीनों लड़कों को समझाया, परन्तु वे नहीं माने। उनने यही कहा कि—धन्ना को भी हम लोगों की तरह परीक्षा देनी ही होगी।

भाइयों का दुराग्रह देख कर धन्ना ने पिता से साठ माशा-

सोना ले लिया। उसने शकुन देखकर यह निश्चय किया कि-आज मुझे पशु द्वारा लाभ होगा, इसलिए मुझे इस सोने द्वारा पशु सम्बन्धी व्यापार करना चाहिये। इस प्रकार निश्चय करके वह उस बाजार में गया, जहाँ पशुओं का क्रय-विक्रय होता था। उस बाजार में उसने एक ऐसा मेंढ़ा देखा, जो उसकी दृष्टि में सुलक्षण एवं अपराजयी था। धन्ना ने पाँच माशा सोना देकर वह मेंढ़ा खरीद लिया। धन्ना के तीनों भाई, धन्ना के पीछे-पीछे यह देखने के लिए लगे ही हुए थे, कि देखें आज धन्ना क्या व्यापार करता है! धन्ना को मेंढ़ा खरीदते देखकर वे लोग हँसने लगे और आपस में कहने लगे, कि—अपन ने तो पिताजी से पहले ही कह दिया है कि धन्ना अपनी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला देगा। इसने मेंढ़ा खरीदा है! सेठ का लड़का होकर मेंढ़ा लड़ावे, या मेंढ़े का क्रय-विक्रय करे, यह कितना अनुचित है!

धन्ना, मेंढ़ा लेकर चला। वहाँ कुछ दूर पर मेंढ़ों की लड़ाई हो रही थी। मेंढ़ा लिए धन्ना वहीं पर गया। पुरपइठान का राजकुमार अरिमर्दन, पशु-युद्ध का बड़ा रसिक था। इसलिए मेंढ़ों की लड़ाई के स्थान पर वह भी अपने मेंढ़े सहित उपस्थित था। अरिमर्दन ने, एक लाख रुपये की जीत-हार लगा कर अपना मेंढ़ा दूसरे के मेंढ़े से लड़ाया। अरिमर्दन का मेंढ़ा पराजित हो गया, इसलिए अरिमर्दन एक लाख रुपया हार गया। अपने मेंढ़े के

हार जाने से अरिमर्दन को बहुत ही खेद हुआ। उसी समय धन्ना ने आगे बढ़कर अरिमर्दन से कहा, कि—आप व्यर्थ ही दुःख करते हैं। आपके इस मेंढ़े मे विजयी होने के लक्षण ही नहीं हैं, ऐसी दशा में यह विजयी होता तो कैसे! आप इस मेरे मेंढ़े को लड़ाइये, और देखिये कि यह किस प्रकार विजय प्राप्त करता है! अरिमर्दन ने कहा, कि—कहीं यह तुम्हारा मेंढ़ा भी हार गया तो? धन्ना ने उत्तर दिया, कि—मेरा मेढ़ा कदापि नहीं हार सकता। यदि यह मेढ़ा हारा, तो वह हार मेरी होगी और जीता तो जीत आपकी होगी। आप निश्चिन्त रहिये।

अरिमर्दन ने धन्ना के हाथ में से मेढ़ा ले लिया और दो लाख रुपये को बाजी लगा कर उस मेंढ़े को दूसरे मेंढ़े के साथ लड़ा दिया। थोड़ी ही देर मे धन्ना का मेंढ़ा जीत गया। सब लोग मेंढ़े की प्रशंसा करने लगे। अरिमर्दन भी बहुत प्रसन्न हुआ। उसने धन्ना से कहा, कि—आज से तुम मेरे मित्र हो। इस मेढ़े ने जो दो लाख रुपये जीते हैं वे तुम लो, और यह मेंढ़ा मुझे दे दो। धन्ना ने उत्तर दिया, कि—आप यह मेंढ़ा भी रखिये और रुपये भी रखिये। जब आप मुझे अपना मित्र बनाते है, तब मैं आपसे रुपया कैसे लूँ!

धन्ना का यह कथन सुनकर, अरिमर्दन ने उसे अपनी छाती से लगा लिया और कहा, कि—तुम्हारा दिया हुआ मेंढ़ा तो मैं

स्वीकार करता हूँ, लेकिन ये दो लाख रुपये तुम कुछ भी समझकर स्वीकार करो। धन्ना ने उत्तर दिया, कि—मैं आपकी इस बात को तब स्वीकार कर सकता हूँ, जब आप भी मेरी एक बात स्वीकार करें। आप राजकुमार हैं। साधारण जनता आपके कार्य का अनुकरण करती है। इसलिए आप यह जुआ खेलने का कार्य त्याग दीजिये। हार जीत लगा कर इस तरह पशु लड़ाना, यह जुआ ही है। जब आप ही जुआ खेलते हैं, तब प्रजा क्यों न खेलेगी!

अरिमर्दन ने धन्ना का कथन ठीक मान कर कहा, कि—मैं भविष्य में जुआ न खेलूँगा। अरिमर्दन की प्रतिज्ञा सुन कर उपस्थित लोग, अरिमर्दन और धन्ना की प्रशंसा करने लगे, लेकिन धन्ना के तीनों भाई आपस में कहने लगे, कि—यह बड़ा धूर्त्त है! यह बाजार से एक मेंढ़ा पकड़ लाया, जिसके द्वारा इसने दो लाख रुपये भी कमा लिये और राजकुमार से मित्रता भी कर ली! साथ ही राजकुमार का जुआ खेलना भी छुड़ा दिया!

राजकुमार से मित्रता करके और दो लाख रुपये लेकर, धन्ना अपने घर आया। उसने सब रुपया धनसार के चरणों के पास रख कर उसे प्रणाम किया। दो लाख रुपया देख कर धनसार आश्चर्य में पड़ गया। उसका हृदय प्रसन्न हो उठा। उसने धन्ना से कहा, कि—तूने केवल साठ माशा सोने से एक दिन में इतनी कमाई कर डाली! धन्ना ने उत्तर दिया, कि—यह सब आप ही का प्रताप है।

दूसरे दिन, धन्ना ने सब कुटुम्बियों को भोजन के लिए आमन्त्रण दिया। उसने दो हजार रुपये लगा कर कुटुम्ब के लोगों को भोजन तथा किसी को वस्त्र किसी को आभूषण देकर, १९८ हजार रुपया अपनी तीनों भौजाइयों को दिया और उनसे प्रार्थना की, कि-मुझ बालक द्वारा दी गई यह तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिये। धन्ना की भौजाइयाँ, धन्ना द्वारा भेंट किया गया द्रव्य देखकर साश्चर्य प्रसन्न हुईं। वे कहने लगीं, कि—ये देवर अपने लिए आशीर्वाद रूप हैं। अपने को इतना धन न तो पिता से ही मिला, न पति से ही। ये देवर अपने को इतना धन देकर भी किस प्रकार की नम्रता प्रदर्शित करते हैं? आपस में इस प्रकार कहती हुई धन्ना की तीनों भौजाइयाँ, धन्ना को आशीर्वाद देने लगीं और उसका कल्याण मनाने लगीं। साथ ही कुटुम्ब के सब लोग भी धन्ना की प्रशंसा करने लगे।

भौजाइयों को धन देने और उनका सम्मान करने के विषय में धन्ना ने यह सोचा था कि यदि भौजाइयाँ मेरे प्रति सन्तुष्ट रहेंगी, तो सम्भव है कि इनके समझाने से भाई भी सन्तुष्ट रहें, और उनके हृदय में मेरे प्रति जो ईर्षा है उसे वे त्याग दें। कदाचित ऐसा न हुआ, किन्तु मेरे इस कार्य से भाइयों के हृदय में मेरे प्रति द्वेष हुआ, तो उनके कार्यक्रम की सूचना मुझे भौजाइयों द्वारा मिलती रहेगी, जिससे मैं सावधान तो रह सकूँगा।

इस प्रकार भौजाइयों को प्रसन्न रखने से दोनों ही तरह लाभ है। इसके सिवा, इन रुपयों को मैं अपने पास रखूँगा तो इनके लिए किसी समय अनर्थ की सम्भावना हो सकती है। इसलिए मेरे पास जोखिम भी न रहे और मेरी भौजाइयाँ भी प्रसन्न रहे, ऐसा उपाय करना ही अच्छा है।

धन्ना द्वारा किये गये भौजाइयों और कुटुम्बियों के सम्मान सत्कार से तथा राजकुमार से उसकी मित्रता हुई इस कारण सब लोग तो प्रसन्न हुए, परन्तु धन्ना के तीनों भाई जलभुन गये। लोगों के मुख से होती हुई धन्ना की प्रशंसा उन्हें असह्य ही हुई।

राजकुमार से धन्ना की मित्रता हो गई थी इस कारण समय-समय पर राजकुमार के यहाँ से धन्ना के लिए बुलौआ भी आया करता, और सवारी भी आया करती। धन्ना, राजकुमार से मिलने के लिए सम्मानपूर्वक जाया करता, तथा राजनैतिक एवं सामाजिक बातों की चर्चा में भाग लेकर राजकुमार को उचित-परामर्श भी दिया करता। इस कारण राजकर्मचारियों के साथ ही, नगर निवासियों की भी दृष्टि में धन्ना प्रतिष्ठित माना जाने लगा। लोग, अपना दुःख धन्ना को सुनाने लगे और धन्ना, दुःखियों का दुःख मिटाने का प्रयत्न करने लगा।

धन्ना की यह सम्मान-वृद्धि उसके भाइयों के लिए भी प्रसन्नता

देनेवाली होनी चाहिए थी, तथा धन्ना भी अपने भाइयों का सम्मान बढ़ाने और उन्हे प्रसन्न करने का प्रयत्न करता रहता था, परन्तु उसके तीनों भाई धन्ना से अधिकाधिक असन्तुष्ट ही होते जाते थे। वे धन्ना की निन्दा किया करते, उसके कार्य में बुराई ही देखते बताते और धन्ना के मार्ग मे कठिनाई उत्पन्न करने का प्रयत्न किया करते। समय-समय पर वे धनसार से भी कहते, कि—धन्ना जुआ खेलता है और ऐसा वैसा बुरा काम करता है आदि। उसने दो लाख रुपये की हारजीत लगा कर मेंढ़ा लड़ाया था। यदि वह दूसरा मेंढ़ा थका हुआ न होता और इस कारण धन्ना के मेंढ़े से हार न जाता, तो दो लाख रुपये देने पड़ते या नहीं! जुए द्वारा धन का जाना तो बुरा है ही, लेकिन धन का आना भी बुरा ही है। धन आने से जुए का दुर्व्यसन घर कर लेता है, जो सर्वनाश तक कर डालता है। धन्ना को जुए के खेल से लाभ हुआ है, इसलिए वह अवश्य ही जुआ खेलता होगा और इस कारण कभी उसके द्वारा इस घर का सत्यानाश भी हो जायेगा। ऐसा होते हुए भी आप धन्ना से कुछ नहीं कहते, बल्कि उसकी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होते हैं तथा स्वयं भी प्रशंसा करते हैं यह कैसी बुरी बात है! ऐसा करके आप धन्ना को और खराब कर रहे हैं। नीतिकारों ने कहा ही है कि—

लालने वहवो दोषाः ताड़ने वहवो गुणाः ।

तस्मात् पुत्रंच शिष्यंच ताड़येन्नतु लालयेत् ॥

अर्थात्—पुत्र तथा शिष्य का प्यार करने में वहुत दोष हैं, और ताड़न करते रहने में वहुत गुण हैं। इसलिए पुत्र और शिष्य का लाड़ न करना चाहिये, किन्तु ताड़न करना चाहिए।

धनसार जानता ही था, कि ये तीनों अपने छोटे भाई धन्ना के प्रति ईर्षा रखते हैं। इसलिए वह उन तीनों की वातें सुन कर टाला दे दिया करता, और समय-समय पर उनको समझाया भी करता। एक दिन जव तीनों भाई धनसार के सामने धन्ना की वहुत निन्दा करने लगे, तव धनसार ने उनसे कहा कि—धन्ना तुम्हारा छोटा भाई है। संसार में भाई का मिलना वहुत ही कठिन है। धन्ना तुम्हारा छोटा भाई है, साथ ही वह सद्भागी और राजा-प्रजा द्वारा सम्मानित है। इसलिए तुम्हें उसके प्रति अधिक स्नेह रखना चाहिए, परन्तु तुम तो उससे ईर्षा रखते हो और उसकी वुराई करते हो ! तुम्हारी इस पद्धत्ति से जाना जाता है, कि तुम लोग ईर्षालु हो, दूसरे की वढ़ती तथा दूसरे के सद्गुण नहीं देख सकते, न दूसरे की प्रशंसा ही सह सकते हो। ऐसा होना मानसिक रोग है। यह रोग कैसी हानि करनेवाला है, इसके लिए मैं

तुम लोगों को एक बात सुनाता हूँ, जो मैंने महात्माओं के मुँह से सुनी थी।

यह कह कर धनसार सेठ कहने लगा, कि—अयोध्या में पंकप्रिय नाम का एक कुम्हार रहता था। पंकप्रिय, धन परिवार की ओर से सुखी था, परन्तु उसमें एक यह बीमारी थी कि वह दूसरे की प्रशंसा नहीं सह सकता था। दूसरे की प्रशंसा का वह मौखिक विरोध तो करता ही, लेकिन कभी-कभी इसी कारण को लेकर वह घर के लोगों को मारने-पीटने तक लगता। पंकप्रिय के व्यवहार से उसके घर के सब लोग दुःखी हो गये। एक दिन घर और परिवार के लोगों ने आपस में परामर्श करके पंकप्रिय से कहा, कि—आप दूसरे की प्रशंसा सह नहीं सकते, और घर में कोई न कोई किसी न किसी की प्रशंसा करता ही है। इस कारण आप को भी दुःख होता है, और आपके व्यवहार के कारण घर एवं परिवार के लोग भी दुःखी हो जाते हैं। इसलिये कोई ऐसा मार्ग निकालिये, कि जिससे आप भी दुःख से बचे रहें और हम सब लोगों को भी दुःखी न होना पड़े। सब लोगों के यह कहने पर पंकप्रिय ने कहा, कि—मेरे से दूसरे की प्रशंसा नहीं सही जाती यह तो तुम लोग भी जानते ही हो। मेरी यह आदत आज की नहीं किन्तु जन्म की है, और इस स्वभाव का छूटना भी कठिन है। इस बात को दृष्टि में रखकर तुम लोग जैसा कहो,

मैं वैसा करूँ। परिवार के लोगों ने एक मत होकर पंकप्रिय से कहा, कि—हम लोग तुम्हारे रहने के लिए जंगल में एक स्थान बना दें। तुम वहीं रहा करो। तुम्हारे लिए वहीं पर भोजन-पानी भी पहुँचा देंगे। वहाँ रहने से तुम किसी की प्रशंसा न सुनोगे, और इस तरह तुम स्वयं भी दुःखी न होओगे तथा हम लोग भी दुःख से बच जावेंगे।

पंकप्रिय ने जंगल में रहना स्वीकार कर लिया। घरवालों ने उसके लिए जंगल में एक झोंपड़ा बना दिया। पंकप्रिय, जंगल में उसी झोंपड़े में रहने लगा। घर के लोग उसके लिए समय पर भोजन-पानी भी पहुँचा दिया करते।

एक दिन अश्वारूढ़ अयोध्या का राजा कुकुत्स्थ, जंगल में भटकता हुआ पंकप्रिय के झोंपड़े की ओर जा निकला। राजा के सब साथी जंगल में छूट गये थे, और वह प्यास से व्याकुल हो रहा था। राजा, पंकप्रिय के झोंपड़े पर गया, लेकिन जैसे ही वह घोड़े से उतरा, वैसे ही श्रम एवं तृषा के कारण मूर्छित होकर गिर पड़ा। पंकप्रिय ने राजा के मुख पर शीतल जल छींटकर उसे सचेत किया तथा शीतल जल पिलाया। जब राजा स्वस्थ हुआ, तब उसने पंकप्रिय का उपकार मानकर उससे जंगल में रहने का कारण पूछा। पंकप्रिय ने अपने स्वभाव का वर्णन करके राजा से कहा, कि—स्वभाव के कारण होने वाले दुःख से स्वयं को

एवं घर के लोगों को बचाने के लिए ही मैं यहां रहता हूँ। राजा ने कहा, कि—तू मेरी रक्षा करनेवाला मित्र है, इसलिए मेरे साथ चल। मैं ऐसा नियम बना दूंगा, कि तेरे सामने कोई किसी की प्रशंसा न करे। पंकप्रिय ने राजा की बात स्वीकार कर ली, और इसके लिए राजा को धन्यवाद दिया। राजा, पंकप्रिय को सम्मानपूर्वक अपने साथ ही रखने लगा। उसने यह घोपणा करा दी, कि कोई भी व्यक्ति पंकप्रिय के सामने किसी की प्रशंसा न करे, अन्यथा वह दण्ड पावेगा।

एक दिन राजा जंगल में गया। पंकप्रिय भी साथ ही था। जंगल में राजा ने देखा, कि एक वेर वृक्ष के नीचे एक युवती कन्या खड़ी हुई है, जो बहुत सुन्दरी है और बेर के फल वीनकर खा रही है। कन्या को देखकर राजा उसके पास गया। उसने कन्या से पूछा, कि—तुम कौन हो, तथा किस कारण इस जंगल में वेर खाकर पेट भर रही हो ? राजा के प्रश्न के उत्तर मे कन्या कहने लगी, कि—मैं एक धनसम्पन्न पिता की पुत्री हूँ। मेरी माता मर गई थी, इसलिए मेरे पिता समुद्र-यात्रा के समय मुझे भी अपने साथ ले गये। अनायास जहाज डूब गया। मैं और मेरे पिता एक-एक लकड़ी के सहारे बह चले। पिता तो बहते हुए न मालूम कहाँ चले गये, लेकिन मैं किनारे लग गई। मैं असहाया वर्था भूखी हूँ, इसीलिए जंगल में वेर वीनकर खा रही हूँ।

उस कन्या की दुःखगाथा सुनकर राजा ने उससे कहा, कि—मैं अयोध्या का राजा हूँ। यदि तुम मुझे स्वीकार करो, तो मैं तुम्हे अपनी पटरानी बनाने के लिए तैयार हूँ। राजा के कथन के उत्तर में उस कन्या ने कहा, कि—इस विपदावस्था में मुझे आप ऐसा संरक्षक मिले, इससे अधिक प्रसन्नता की बात क्या होगी! कन्या के इस उत्तर से राजा प्रसन्न हुआ। वह, उस कन्या को अयोध्या ले आया। उसने उस कन्या के साथ विवाह करके उसे अपनी पटरानी बनाया।

राजा जब भी जंगल में जाता, वह अपनी इस नई पटरानी को भी साथ ले जाया करता, और पंकप्रिय तो साथ रहता ही। एक दिन राजा, बड़े ठाट-बाट से हाथी पर बैठकर जंगल मे गया। उसी हाथी पर उसकी नई पटरानी भी बैठी हुई थी और पंकप्रिय भी बैठा हुआ था। हाथी पर बैठा हुआ राजा उसी बेर-वृक्ष के समीप जा निकला, जिसके नीचे उसकी पटरानी बेर बीनती हुई प्राप्त हुई थी। उस बेर के वृक्ष को देखकर, राजा को पटरानी के मिलने की बात स्मरण हो आई। पटरानी को वह दिन याद कराने के लिये राजा ने उससे कहा, कि—क्या तुम जानती हो कि यह काहे का वृक्ष है, और इसके फल कैसे होते हैं? राजा के इस प्रश्न के उत्तर में पटरानी ने कहा, कि—मैं नहीं जानती कि यह काहे का वृक्ष है और इसके फल कैसे होते

परन्तु इस वृत्त में कांटे देख पड़ते हैं, इससे जान पड़ता है कि इसके फल ऐसे खराब होते होंगे, जिन्हे कोई भला आदमी तो न खाता होगा, कोई मूर्ख चाहे खाता हो।

रानी की बात सुनते ही, पंकप्रिय छाती पीट-पीट कर हाय-हाय करने लगा। राजा ने पंकप्रिय से ऐसा करने का कारण पूछा। पंकप्रिय कहने लगा, कि—अभी कुछ ही दिन पहिले ये ही रानी इसी वृक्ष के नीचे बेर बीन बीन कर खाती थीं, और आज आपके पूछने पर ये कहती हैं, कि मैं इस वृक्ष या इसके फल के विषय में कुछ भी नहीं जानती। रानी का यह झूठ कथन सुनकर ही मैं अपनी छाती पीट रहा हूँ। राजा ने पंकप्रिय से कहा, कि—रानी ठीक कहती है! जब इसका कोई रत्तक न था तब यह बेर बीनकर खाती थी, परन्तु इसे जब मुझ-सा रक्षक प्राप्त हुआ है, तब भी यदि यह बेर के वृक्ष या फल को विस्मृत न कर दे तो इसकी गणना बुद्धिहीना में होगी! ऐसी दशा में तू छाती पीट कर हाय-हाय करे, इसका कोई कारण नहीं है।

राजा का यह कथन सुनकर, पंकप्रिय और भी सिर छाती पीटकर हाय-हाय करने लगा और कहने लगा कि—राजा भी स्त्री का गुलाम हो गया है! पंकप्रिय की बातें सुन कर, राजा बहुत ही अप्रसन्न हुआ। वह अपने मन में कहने लगा, कि पंकप्रिय जंगल

में ही रहने योग्य है। वल्कि जंगल में भी इसको भूमि के भीतर बनी हुई गुफा मे रखना चाहिए, जिसमें न तो यह स्वयं ही किसी की वात सुने, न इसकी ही वात कोई सुने। पृथ्वी के ऊपर बने हुए झोंपड़े में इसको दूसरे की वात सुनाई दे सकती है, और इसकी भी वात दूसरा सुन सकता है।

घर लौट कर राजा ने, पंकप्रिय के लिए जंगल में एक गुफा बनवाई। उसने यह व्यवस्था की, कि पंकप्रिय उसी भूमि-गृह मे रहे और भूमि-गृह का द्वार एक शिलाखण्ड द्वारा वन्द रहा करे। जो आदमी पंकप्रिय को भोजन-पानी देने के लिए जावे, वह शिलाखण्ड हटा कर भोजन-पानी दे दिया करे और शिलाखण्ड द्वारा गुफा के मुख को फिर वन्द कर दिया करे।

राजा की व्यवस्थानुसार, पंकप्रिय जंगल में भूमि के भीतर वनी हुई गुफा में दुःखपूर्वक रहने लगा। एक दिन गुफा के पास-वाली नदी में पानी का पूर आया। पानी, गुफा के भीतर भी घुस गया। गुफा का द्वार वन्द था, तथा गुफा में वहुत पानी भर जाने से पंकप्रिय घवरा भी गया था, इसलिए वह वाहर न निकल सका और गुफा के भीतर ही मर गया।

यह कहकर धनसार ने अपने लड़को से कहा, कि पंकप्रिय की अकालमृत्यु दूसरे की प्रशन्सा न सहने के कारण ही हुई। यदि उसे दूसरे की प्रशन्सा से द्वेष न होता, तो न तो उसे कष्ट

ही भोगना पड़ता न बुरी तरह मरना ही पड़ता। जो दूसरे के गुण, दूसरे की प्रशन्सा और उन्नति नहीं देख सह सकता, उसकी ऐसी ही गति होती है। तुम लोग भी धन्ना की प्रशन्सा से नाराज रहते हो। यह तुम्हारा दुर्गुण तुम्हें दुःख ही देगा, इसलिए तुम लोग अपने हृदय में धन्ना के प्रति ईर्षा-द्वेष न रखा करो, किंतु वह तुम्हारा छोटा भाई है इसलिए उसके प्रति स्नेह रखा करो। इसी में तुम्हारा हमारा सब का कल्याण है। आपस में ईर्षा-द्वेष करना किसी भी तरह कल्याणकर नहीं है।

धनसार का कथन सुनकर, उसके तीनों ही लड़के क्रुद्ध हो उठे। वे धनसार से कहने लगे, कि—क्या हम उससे ईर्षा-द्वेष करते हैं? हम तो उसकी और उसके साथ ही सारे घर की भलाई की बात कहते हैं, परन्तु आपकी तो दृष्टि ही दूसरी है, इसी से आप हमारी उचित बात को भी यह रूप देते हैं। आप ही बताइये कि धन्ना का जुआ खेलना क्या हानिप्रद नहीं है?

धनसार—जुआ खेलना अवश्य ही बुरा है और ऐसा मान कर ही धन्ना ने राजकुमार से जुआ न खेलने की प्रतिज्ञा कराई है। जब धन्ना ने राजकुमार का भी जुआ खेलना छुड़ाया, तब वह स्वयं जुआ कैसे खेलेगा!

तीनों लड़के—यह आपका भ्रम है। धन्ना धूर्त है, इसी से वह जुआ खेलने की बात प्रकट नहीं होने देता। यदि वह जुआ

नहीं खेलता है, तो उसका एक राजकुमार की तरह का खर्च कैसे चलता है ?

धनसार—उसके सद्भाग्य से ही उसको धन और यश प्राप्त हो रहा है। इस पर भी यदि तुम लोग कहो, तो मैं उसे अलग कर दूँ।

लड़के—बस ! धन्ना को अलग कर देने की बात ! हम जानते हैं, कि आप हम लोगों की अपेक्षा धन्ना से अधिक स्नेह करते हैं, और इसलिये किसी न किसी बहाने घर की अधिकांश सम्पत्ति देकर उसे अलग कर देना चाहते हैं, परन्तु हम लोगों के सामने आपकी यह चालाकी नहीं चल सकती। आप धन्ना के सद्भाग्य की बार-बार प्रशंसा करते हैं, इसलिए हम लोग कहते हैं, कि पहले की तरह एक बार फिर हमारे और धन्ना के भाग्य की परीक्षा हो जाय।

धनसार—क्या पहले ली गई परीक्षाओं से तुम्हें सन्तोष नहीं हुआ ?

लड़के—उस समय हमारा भाग्य चक्कर में था, इसी से हम ज्यादा लाभ प्राप्त न कर सके; और धन्ना ने तो दोनों ही बार अनुचित मार्ग से रुपया प्राप्त किया था। आप फिर परीक्षा लेकर देखिये, तब मालूम होगा कि धन्ना कैसा सद्भागी या दुर्भागी है।

अन्त में तीनों लड़कों का अनुरोध मानकर धनसार सेठ ने

उन्हें सौ-सौ माशा सोना दिया, और कहा, कि—पहले की तरह यह सोना मुझे वापस लौटा देना, तथा इसकी आय से तीनों भाई एक-एक दिन कुटुम्ब का सत्कार करना। यदि अधिक कमाई न हो तो कुटुम्ब के सत्कार में यही सोना चाहे लगा देना, लेकिन पहिले की तरह रूखा सूखा भोजन देकर कुटुम्ब के लोगों को दुःखी मत करना।

तीनों भाइयों ने धनसार से सौ-सौ माशा सोना लेकर निश्चय किया, कि इस बार अपने को कपड़े का व्यापार करना चाहिए। इस सोने से कपड़ा खरीद कर बाजार में फुटकर बेचने से अधिक लाभ होगा। इस तरह सोचकर तीनों ने एक ही में कपड़ा खरीदा, और उसे बाजार में बेचने के लिए ले गये। उन तीनों ने व्यापार के लिए कपड़ा तो खरीद लिया परन्तु तीनों ही अयोग्य थे। इसलिए तीनों में से एक ने तो यह सोचकर भङ्ग पी ली कि, दो भाई व्यापार करते ही हैं, यदि मैं व्यापार करने में भाग न ले सका तो कोई हानि नहीं। भंग पीने के कारण उस एक भाई को नशा चढ़ आया, जिससे उसकी आँखें बन्द रहने लगीं। शेष दो भाई रहे। उन दो भाई में से एक भाई व्यापार के लिए कपड़े की गठरी खोली जाने से पहले ही दुकान से उठकर बाजार में तमाशा देखने के लिए चला गया। शेष एक भाई बचा। उस एक ने सोचा, कि अभी कुछ

देर वाद व्यापार में लगना होगा, इसलिए शरीर चिन्ता से निवृत्त हो आऊँ। यह सोचकर, और जिसने भङ्ग पी थी उस भाई को सावधान रहने के लिए कहकर वह एक भी दुकान से चला गया। दुकान पर केवल वही रह गया, जिसने भङ्ग पी थी। लेकिन भङ्ग के नशे के कारण वह असावधान था। बाजार में भले आदमी भी होते हैं, और लुच्चे गुण्डे चोर आदि भी। कुछ गुण्डों ने उस भंग पिये हुए को असावधान देखकर, दुकान पर से कपड़े की गठरी उठा ली और लेकर चम्पत हो गये।

थोड़ी देर वाद वह भाई दुकान पर लौट आया, जो शरीर-चिन्ता से निवृत्त होने गया था। दुकान पर कपड़े की गठरी न देखकर, उसने भंगड़ को जगा उससे पूछा कि—कपड़े की गठरी कहां गई? भंगड़ ने उत्तर दिया, कि—मुझे क्या मालूम! मेरे को पड़ा रहने दो, कष्ट न दो। पहले भाई ने कहा, कि—मैं तुम्हे सावधान करके गठरी सौंप गया था न! भंगड़ ने उत्तर दिया कि—मैं कुछ नही जानता।

दोनों भाई दुकान पर इस तरह लड़ रहे थे, इतने ही में तीसरा भाई भी आया। वह आते ही कहने लगा कि—बड़ा अच्छा तमाशा था। ऐसा तमाशा अवतक नहीं देखा था। पहले भाई ने कहा, कि—वह तमाशा तो देखा, परन्तु यहां गठरी जाने का तमाशा हो गया न!

आपस में लड़ते हुए तीनों भाई धनसार सेठ के पास आये। सब बातें सुनकर धनसार सेठ ने कहा, कि—जो हुआ सो हुआ, अब शान्त होओ और चारों भाई आपस में प्रेम से रहो। घर के सभी लोग प्रायः नहीं कमा सकते। घर में एक कमानेवाला हो, तो उसकी कमाई से दस मनुष्यों का निर्वाह हो सकता है। इसकी कोई चिन्ता नहीं, परन्तु आपस में रहो प्रेम से। अभी तो मेरा कमाया हुआ धन ही इतना है, कि जो तुम सब का जीवनभर निर्वाह हो जावे; और यदि मेरा कमाया हुआ धन समाप्त भी हो जावेगा, तो तुम्हारा छोटा भाई धन्ना तुम सब का व्यय-भार चलाने में समर्थ है।

धनसार के मुँह से धन्ना का नाम सुनते ही तीनों भाई क्रुद्ध हो उठे। वे कहने लगे, कि—आपकी दृष्टि में तो पक्षपात घुस रहा है, इसी कारण आप ऐसा कह रहे हैं। हमारी गठरी चोर ले गये, परन्तु हम लोगों ने धन्ना की तरह न तो जुआ ही खेला, न उल्टा कागज ही पढ़ा। कपड़े की गठरी गई तो गई, हम लोगों को कुछ अनुभव तो हुआ। तीनों भाइयों में से एक ने कहा, कि—मैंने जो खेल देखा, वैसा खेल आज तक दूसरा नहीं देखा था। दूसरा कहने लगा, कि—मेरे को यह शिक्षा मिली कि जो आदमी नशे में हो उसके भरोसे दुकान छोड़कर न जाना

चाहिए। तीसरे ने कहा, कि—मुझे भी यह शिक्षा मिली कि भंग न पीनी चाहिए।

इस प्रकार तीनों भाई कहने लगे।। धनसार ने कहा, कि—अपने उत्तरदायित्व का ध्यान न रखकर गांठ की पूँजी इस तरह की शिक्षा प्राप्त करने में लगाओगे या खेल आदि देखोगे, तब तो पूरा ही हो जावेगा! इस बार भी तुम्हीं लोगों ने मुझे परीक्षा लेने के लिए विवश किया था लेकिन इस परीक्षा में तो तुम लोग कुटुम्बियों को रूखा-सूखा भोजन कराने के योग्य भी नहीं रहे, बल्कि गांठ की पूँजी भी खो दी! तुम लोगों को सावधानी रखनी चाहिए, और यदि स्वयं कुछ न कर सको तो जो करता है उसकी निन्दा तो न करनी चाहिए। उससे द्वेष तो न रखना चाहिये।

धनसार का यह कथन सुनकर, वे तीनों भाई और भी अधिक अप्रसन्न हुए। वे कहने लगे, कि—आप तो हमारी बुराई पर ही तुले हैं, लेकिन अब धन्ना की भी परीक्षा लेकर देखिये। धनसार ने उन तीनों से यह कहा भी कि अब इस बात को छोड़ो, लेकिन वे नहीं माने। तब धनसार ने धन्ना को बुला कर उससे कहा, कि—तुम अपनी कमाई की परीक्षा एक बार और दो। कुछ हाँ ना के पश्चात्, धन्ना ने पिता से सौ माशा सोना ले लिया। उसने शकुन द्वारा यह जाना, कि आज मुझे लकड़ी से बनी हुई चीजों का व्यापार लाभप्रद होगा। यह जान

कर वह उस बाजार में गया, जहां लकड़ी की चीज़ें बिका करती थीं।

पुरपइठान में ही एक धनिक सेठ रहता था। वह बड़ा ही कृपण था। उसको अपने धन से अत्यधिक ममत्व था, और धन के सम्बन्ध में वह किसी पर भी विश्वास नहीं करता था। जब वह कृपण सेठ वृद्ध और चलने फिरने में अशक्त हुआ, तब उसने अपना सब द्रव्य मूल्यवान रत्नों में परिणत कर डाला, और लड़के आदि घर के लोगों को उन रत्नों का पता न लगे इसलिए, उसने अपनी खाट के पाये पोले करवाकर उनमें वे रत्न भरवा दिये, और ऊपर से लकड़ी की कारी द्वारा पाये वन्द कर दिये। जब वह सेठ बीमार हुआ, तब उसके कुटुम्बियों ने उससे कहा, कि— अब आपका अन्त समय समीप आया है, इसलिए यदि आपने कहीं कुछ द्रव्य दबाकर रखा हो तो बता दो। कृपण सेठ ने उत्तर दिया, कि— मेरे पास जो कुछ भी था वह लड़कों ने पहले ही ले लिया है, अब मेरे पास कुछ नहीं है। लड़के और कुटुम्बी लोग, सेठ के उत्तर को सत्य समझ कर चुप हो गये।

जब वह सेठ मरने लगा, तब 'हाय खाट, तू छूट जावेगी! हाय खाट, तू छूट जावेगी!' चिल्लाने लगा। घर के लोगों ने उससे कहा, कि—आप खाट के लिए क्यों कष्ट पा रहे हैं? मरणासन्न सेठ ने कहा कि—यह खाट मुझे बहुत ही प्रिय है,

अतः मरने के पश्चात मेरे शव के साथ यह खाट भी श्मशान में भेज देना। सेठ के लड़कों ने कहा, कि—आप शान्ति से प्राण त्यागिये, हम ऐसा ही करेंगे। लड़कों ने जब सेठ को इस तरह विश्वास दिलाया, तब उसके प्राण निकले।

सेठ का शव श्मशान में ले जाया गया। सेठ का शव लेकर जो लोग आये थे, वे शव के साथ ही खाट भी जलाना चाहते थे, परन्तु श्मशान के भंगी ने उन लोगों को खाट जलाने से यह कह कर रोक दिया, कि—शव के साथ आई हुई वस्तु पर मेरा अधिकार है, इसलिए शव के साथ खाट नहीं जला सकते।

लोग, सेठ के शव को जलाकर चले गये। भंगी खाट को अपने घर उठा लाया। खाट सुन्दर थी। भंगी ने सोचा कि यह खाट अपने घर में कहाँ रखूँगा! यदि इसको बेच दूँगा, तो अच्छे पैसे मिल जावेंगे। इस तरह सोचकर भंगी, वह खाट लेकर उसी बाजार में आया, जिस बाजार में लकड़ी की चीजों का क्रय-विक्रय होता था।

धन्ना ने, खाट लेकर खड़े हुए भंगी को देखा। खाट की सुन्दरता देखकर धन्ना ने भंगी से पूछा, कि—तू यह खाट कहाँ से लाया है? भंगी ने उत्तर दिया, कि—मैं भंगी हूँ। मैं तो खाट बनाता नहीं हूँ, और श्मशान में भी किसी शव के साथ खाट नहीं लाई जाती है। केवल अमुक सेठ के शव के साथ

यह खाट आई है, जिसे मैं बेचने के लिए यहाँ लाया हूँ, परन्तु यह खाट मुर्दे की है इस विचार से इसको अबतक किसी ने भी नहीं खरीदी।

भंगी का कथन सुनकर धन्ना सोचने लगा, कि—किसी के भी शव के साथ श्मशान में खाट नहीं लेजाई जाती, फिर केवल उसी सेठ के शव के साथ खाट क्यों लेजाई गई? अवश्य ही इसमें कोई रहस्य है। धन्ना इस तरह सोच रहा था, इतने ही में किसी मार्ग चलते आदमी ने खाट देखकर कहा, कि—'इस खाट पर उस सेठ का इतना ममत्व था, कि उसके प्राण भी नहीं निकलते थे। जब उसकी इच्छानुसार उसे यह विश्वास दिलाया गया कि तुम्हारे शव के साथ ही यह खाट भी श्मशान में लेजाई जावेगी, तब उसके प्राण निकले।' उस आदमी का यह कथन सुनकर धन्ना ने विचार किया, कि—वह सेठ श्रीमन्त भी था और बुद्धिमान भी माना जाता था। उसको इस खाट से निष्कारण ही ममत्व न रहा होगा। इस तरह विचार कर उसने खाट को अच्छी तरह देखा। उसे खाट के पायों में सन्धि दिखाई दी, और वज़न में भी खाट भारी जान पड़ी। उसने अपने मन में निश्चय किया, कि इस खाट के पायों में अवश्य ही कुछ है।

धन्ना ने भंगी से खाट खरीद ली। खाट उठाने के लिए

धन्ना ने मजदूर करना चाहा, परन्तु मुर्दे की खाट है इस विचार से कोई भी मजदूर खाट उठाने के लिए तैयार नहीं हुआ। तब धन्ना स्वयं ही वह खाट उठाकर घर को ले चला। धन्ना के तीनों भाई धन्ना के पीछे लगे ही हुए थे। वे लोग धन्ना के पीछे-पीछे यह चिल्लाते और धन्ना की निन्दा करते हुए चले, कि भंगी से मुर्दे की खाट खरीद कर घर लिये जा रहा है। इनका यह कथन सुननेवाले लोग भी धन्ना की निन्दा करने लगे, लेकिन धन्ना ने निन्दा की किंचित् भी अपेक्षा नहीं की।

खाट लिये हुए धन्ना घर आया। उसके तीनों भाई धनसार के पास पहुँचकर उससे कहने लगे, कि—धन्ना के अनुचित कार्यों की सीमा हो गई! आपका प्रिय धन्ना कैसे प्रशन्सीय कार्य करता है: यह देखो तब मालूम होगा कि वह कैसा है। लड़कों का यह कथन सुनकर धनसार सेठ ने उनसे पूछा, कि—धन्ना ने ऐसा क्या किया है? उसके लड़कों ने उत्तर दिया कि-धन्ना ने भंगी से मुर्दे की खाट खरीदी, और वह देखो उस खाट को स्वयं ही उठाकर लाया है। क्या मुर्दे की खाट भी घर मे रखोगे? धनसार ने उन लोगों से कहा, कि—धन्ना कुछ समझकर ही खाट लाया होगा। वह किस उद्देश्य से खाट लाया है, यह जाने बिना इस तरह चिल्लाना व्यर्थ ही तो है! धनसार के लड़कों ने पिता की बात सुनकर कहा, कि—आप तो धन्ना के प्रत्येक कार्य में

कोई न कोई उद्देश्य ही मानेंगे! आपकी दृष्टि में उसका कोई भी कार्य अनुचित तो हो ही नहीं सकता!

धनसार, धन्ना के पास गया। उसने धन्ना से पूछा, कि—यह मुर्दे की खाट क्यों लाया है? धन्ना ने उत्तर दिया, कि—मुर्दे की खाट लाने का कारण अभी बताता हूँ। यह कह कर धन्ना ने उस खाट के पाये निकाल कर और पायों को भूमि पर पटक कर उनकी सन्धि खोल डाली। सन्धि खुलते ही, पायों में से रत्न-राशि निकल पड़ी। वह रत्न-राशि देखकर धनसार तो प्रसन्न हुआ, लेकिन उसके तीनों लड़कों का मुख श्याम हो गया। जैसे उन रत्न राशि के प्रकाश से भागा हुआ अन्धेरा उन तीनों के मुखपर जम गया हो। प्रसन्न होते हुए धनसार सेठ ने धन्ना से पूछा, कि—इस खाट में रत्न हैं, यह तुमने कैसे जाना? धन्ना ने वे सब बातें धनसार को सुनाईं, जो उसने खाट लेने के समय सोची थीं। धन्ना की बात सुनकर धनसार अधिक प्रसन्न हुआ। उसने अपने तीनों लड़कों से कहा, कि—अब तो तुम लोग जान गये कि धन्ना मुर्दे की खाट क्यों लाया? किसी बात को गहराई से सोचे बिना ही हो-हल्ला करना, या विरुद्ध बोलना अनुचित है।

धनसार के तीनों लड़के कहने लगे, कि—आप तो धन्ना का ही पक्ष करेंगे! आपको यह तो दिखाई ही न देगा, कि धन्ना

ने मुर्दे की खाट खरीदकर तथा उठाकर भी अनुचित किया है, और यह रत्न-राशि प्राप्त करके भी अनुचित किया है। मुर्दे की खाट खरीदने तथा उठाकर लाने से सारे नगर में अपनी निन्दा हो रही है, और यह रत्न-राशि लेना तो प्रत्यक्ष ही बेईमानी है। इन रत्नों पर या तो मृत सेठ के पुत्रों का अधिकार हो सकता है, या भंगी का। इन रत्नों का अधिकारी धन्ना नहीं हो सकता। सेठ के पुत्रों को यह मालूम न था, कि इस खाट में रत्न हैं, इसी प्रकार भंगी को भी मालूम न था। उन दोनों की ही दृष्टि में यह खाट साधारण थी, और साधारण खाट समझकर ही सेठ के लड़कों ने इसे अपने पिता के शव के साथ श्मशान भेजी, तथा भंगी ने इसे बेची। धन्ना को जब यह ज्ञान हो गया था कि इस खाट में रत्न हैं, तब इसे उचित था कि यह इस खाट को साधारण खाट की भांति न खरीदता, किन्तु भंगी से कह देता, या सेठ के लड़कों के पास खबर भेज देता कि इस खाट में रत्न हैं। धन्ना ने ऐसा न करके यह खाट स्वयं ले ली, यह इसकी बेईमानी है। सद्भाग्य से रत्न निकलने की इस बात को दूसरा कोई नहीं जानता, नहीं तो राजा द्वारा धन्ना दण्डित हो सकता है।

लड़कों की बात सुन कर धनसार, उनकी बुद्धि पर आश्चर्य प्रकट करने लगा, और कहने लगा, कि—ऐसी बुद्धि तथा अपने छोटे भाई से निष्कारण ही द्वेष करने से किसी दिन तुम लोगों

को भयङ्कर सङ्कट में पड़ना पड़ेगा। धनसार के इस कथन के उत्तर में तीनों भाई वहां से यह कहते हुए चल दिये, कि—हमारी बुद्धि तो ऐसी ही है! या तो धन्ना की बुद्धि अच्छी है, या आपकी!

धन्ना ने, प्राप्त रत्नों में से एक रत्न बेचकर उसके मूल्य द्वारा कुटुम्बियों का सत्कार किया, और जो रत्न शेष रहे, वे अपनी तीनों भौजाइयों में समान रूप से बाँट दिये। धन्ना की भौजाइयाँ धन्ना को आशीर्वाद देती हुई उसको प्रशन्सा करने लगीं, और कहने लगीं, कि इनसे इनके बड़े भाई निष्कारण ही द्वेष करते हैं। वे इनकी तरह कमा नहीं सकते, तो शान्त क्यों नहीं रहते! इनसे द्वेष क्यों करते हैं! इनसे द्वेष न करके शान्ति से रहें, तो ये अकेले ही सब का पालन-पोषण कर सकते हैं।

भौजाइयों द्वारा अपनी प्रशंसा सुनकर धन्ना ने सोचा, कि—यह प्रशंसा किसी दिन मुझे संकट में डाल देगी। पिताजी मेरी प्रशंसा करते रहते हैं, इसी कारण मेरे तीनों भाई मुझसे रुष्ट रहते हैं। इस प्रकार सोचकर उसने अपनी भौजाइयों से कहा, कि—आप लोग मेरी प्रशंसा न किया करिये। मेरी प्रशंसा करने से कभी मुझे भयङ्कर संकट में पड़ जाना पड़ेगा, और सम्भव है कि भाई लोग आप पर भी किसी प्रकार का दोषारोपण कर दें। मेरे तीनों भाई मुझसे तो रुष्ट रहते ही हैं, किन्तु जो मेरी प्रशंसा करते हैं उससे

भी रुष्ट हो जाते हैं। आप मेरी प्रशंसा करके मेरा हित नहीं कर सकतीं, किन्तु प्रशंसा न करके मेरा बहुत हित कर सकती हैं। जब आप लोग मेरी प्रशंसा किया करेंगी, तब मेरे तीनों भाई आप तीनों को मेरे पक्ष में समझकर मेरे विषय की कोई बात आप लोगों को ज्ञात न होने देंगे। इसके विरुद्ध जब वे लोग आपको मेरे पक्ष में न समझेंगे, तब आपके सामने मुझ विषयक बातचीत प्रकट करने में संकोच न करेंगे, और इस कारण आप मुझे उन बातों की ओर से सावधान कर सकेंगी, जो मेरे भाइयों ने मेरा अहित करने के लिए सोची होंगी। इसलिए मैं आप तीनों से यह प्रार्थना करता हूँ, कि आप लोग मेरी प्रशन्सा न किया करें। स्नेह, हृदय से होता है। मौखिक प्रशन्सा से ही नहीं होता।

धन्ना के इस कथन को उसकी भौजाइयों ने ठीक माना। उन्होंने धन्ना को भविष्य के लिये यह विश्वास दिलाया, कि अब वे धन्ना को कभी प्रशन्सा न करेंगी, किन्तु निन्दा ही किया करेंगी।

नगरसेठ धन्ना

गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते पितृवंशो निरर्थकः ।

वासुदेवं नमस्यन्ति वसुदेवं न ते नराः ॥

अर्थात्—सब जगह गुणों की ही पूजा होती है, पिता या वंश की पूजा नहीं होती। जैसे लोग वासुदेव को तो नमस्कार करते हैं, परन्तु वासुदेव के पिता वसुदेव को नमस्कार नहीं करते।

मनुष्य की योग्यता मनुष्य को उन्नति पर पहुँचाती ही है। यद्यपि पिछले प्रकरण में भाग्य को महत्व दिया गया है, लेकिन योग्यता भी तो भाग्यानुसार ही होती है! जो सद्भागी है, उसमें योग्यता होगी, और जो दुर्भागी है वह अयोग्य होगा। इस प्रकार

भाग्यानुसार प्राप्त योग्यता अयोग्यता ही, मनुष्य की उन्नति अवनति का कारण है। अवस्था कुल या अन्य दूसरी बातें, योग्यता की अपेक्षा रखती हैं। दूसरी सब बातें होने पर भी यदि योग्यता नहीं है, तो मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता। पुरपइठान में अनेक विद्वान भी थे, धनवान भी थे, और धन्ना से अधिक आयुवाले भी थे। फिर भी वहाँ के राजा ने 'नगरसेठ' पद किसी दूसरे को न देकर धन्ना को ही दिया, इसका एक मात्र कारण था धन्ना की योग्यता। पुरपइ-ठान के राजा ने धन्ना की प्रशन्सा सुन रखी थी। राजकुमार से जुए का दुर्व्यसन छुड़ाने के कारण वह धन्ना पर प्रसन्न हुआ, और इसी बीच में एक ऐसी बात और हो गई, जिससे राजा को धन्ना की योग्यता पर पूर्ण विश्वास हो गया, तथा उसने धन्ना को 'नगरसेठ' पद प्रदान किया। वह बात क्या थी, यह इस प्रकरण से प्रकट होगा।

धन्ना के भाई धन्ना से द्वेष करते थे, फिर भी धन्ना की चारों ओर बड़ाई ही हो रही थी। बल्कि भाइयों के द्वेष के कारण, धन्ना की प्रशन्सा में और वृद्धि हुई। धन्ना की प्रशन्सा की वृद्धि से उसके भाइयों का मनस्ताप बढ़ गया। वे दिन रात इसी विचार में रहा करते कि किस तरह धन्ना की प्रशन्सा मटिया मेट की जावे और उसे सब लोगो की दृष्टि से गिरा दिया जावे। इस

विषयक विचार में तीनों भाई सारी रात तक चिंता दिया करते। इसी बीच में एक ऐसी बात और हो गई, जिसके कारण धन्ना को तो यश मिला, लेकिन उसके तीनों भाई धन्ना से पूरी तरह द्वेष करने लगे।

पुरपइठान में एक सेठ रहता था। उस सेठ ने—जिसमें से सोना निकाला जाता था वह—तेजुन्तरी नाम की रेत खरीद कर अपने यहाँ कोठों में भरा रखी थी। वह सेठ मर गया और उसके पश्चात की एक दो पीढ़ी भी समाप्त हो गई। धन्ना के सम-कालीन उसके वंशज ऐसे हुए, कि जो तेजुन्तरी रेत को पहचानते भी नहीं थे, और उसका उपयोग भी नहीं जानते थे। इसी प्रकार प्रचलन कम होने से नगर के दूसरे व्यापारी भी तेजुन्तरी रेत का नाम गुण नहीं जानते थे।

मृत सेठ के वंशजों का आपस में बँटवारा होने लगा। उस समय उन्होंने उन कोठों को देखा, जिनमें तेजुन्तरी रेत भरी हुई थी। रेत को देख वे लोग उसे साधारण रेत समझ कहने लगे, कि इस रेत से कोठे रुक रहे हैं। पूर्वजों ने यह रेत किसी उद्देश्य से भरा रखी होगी, परन्तु अब तो यह निरुपयोगी है। यदि अपन इसको कोठों से निकलवा कर फिकवाने लगेंगे, तो ऐसा करने में भी बहुत व्यय होगा। इसलिए यह अच्छा होगा कि राज्य की सहायता से यह रेत नीलाम करा दी जावे। ऐसा करने से यदि

कुछ लाभ न होगा, तो इस रेत को निकलवाने फिकवाने के व्यय से तो बच जावेंगे।

जिनके यहाँ वह तेजुन्तरी रेत थी, वे लोग राज्य की सहायता से तेजुन्तरी रेत नीलाम करने लगे, लेकिन उसका गुण और उसकी पहचान न जानने के कारण-वह रेत किसी ने भी नहीं ली। प्राचीन पुस्तकों एवं किंवदन्तियों के आधार से धन्ना ने यह जान लिया कि इस रेत का नाम तेजुन्तरी है और इसमें सोना है। इसलिए उसने वह रेत नाम-मात्र के मूल्य में खरीद की, तथा उठवाकर अपने यहां कोठों में डलवा दी।

धन्ना के भाई, धन्ना के इस कार्य की निन्दा करते हुए धनसार के पास गये। उन्होंने धनसार से कहा, कि—जो रेत किसी ने भी नहीं खरीदी, और जिसे फिकवाने के व्यय से बचने के लिए ही—जिनके यहाँ रेत भरी थी उन लोगों ने—नीलाम कराई, धन्ना वह रेत भी इतना मूल्य देकर उठवा लाया है। धन्ना ने उस रेत की इतनी तो कीमत दी, उस रेत को उठवा कर लाने में इतना व्यय किया, और अब इतने कोठों को रेत भर कर रोक दिया है। इस तरह धन्ना अपने घर का धन नष्ट कर रहा है, लेकिन आप उसे रोकते तक नहीं! घर का धन इस तरह कितने दिन चलेगा!

लड़कों का कथन सुनकर धनसार वहाँ गया, जहाँ धन्ना रेत

की व्यवस्था करा रहा था। धनसार ने उससे पूछा कि—यह रेत क्यों खरीदी? इस रेत के पीछे व्यर्थ ही इतना खर्च क्यों उठाया? धनसार के इस प्रश्न के उत्तर में धन्ना ने, उस रेत में से कुछ रेत तपा कर धनसार को बताते हुए उससे कहा, कि—पिताजी, यह देखो इसमें सोना है। इस रेत को तेजन्तरी रेत कहते हैं। इसमें से सोना निकाला जाता है। भाइयों को इस बात का पता नहीं है, न वे जानने का प्रयत्न ही करते हैं, और व्यर्थ ही हो-हल्ला करने लगते हैं। आप इस रेत का भेद भाइयों से मत कहना, नहीं तो वे सब जगह चिल्लाते फिरेंगे, और किसी प्रकार का अनर्थ उत्पन्न करेंगे।

रेत का भेद जानकर, धनसार बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने धन्ना की प्रशन्सा करके अपने तीनों लड़कों से कहा, कि—धन्ना ने रेत के लिये व्यर्थ ही व्यय नहीं किया है। वह रेत क्यों लाया है, यह बात समय पर ही मालूम होगी। पिता का यह कथन सुनकर तीनों भाई कहने लगे, कि—आप तो धन्ना का प्रत्येक कार्य अच्छा ही समझते हैं। उसका कोई कार्य बुरा तो मानते ही नहीं। बुरा काम तो केवल हम लोग ही करते हैं! आपकी यह भेद—दृष्टि किसी दिन अवश्य ही घर का सत्यानाश कर डालेगी।

कुछ दिनों के पश्चात् पुरपइठान में किसी दूसरी जगह का

एक प्रसिद्ध व्यापारी आया। उसने पुरपइठान के राजा से कहा, कि—पुरपइठान प्राचीन नगर है, इसलिए क्या यहाँ किसी के यहाँ तेजुन्तरी रेत है ? राजा के पूछने पर उस व्यापारी ने कहा, कि—तेजुन्तरी रेत में से सोना निकाला जाता है। आज कल तो तेजुन्तरी रेत का प्रचलन कम हो गया है, परन्तु कुछ समय पहले तेजुन्तरी रेत का प्रचलन बहुत था।

व्यापारी की बात सुनकर राजा को भी कौतूहल हुआ। उसके हृदय में भी तेजुन्तरी रेत और उसका प्रभाव देखने की इच्छा हुई। उसने नगर के कुछ सेठों को बुलाकर उनसे तेजुन्तरी रेत के लिये कहा। नगर के उपस्थित दूसरे सेठों ने, तेजुन्तरी रेत मिलने की बात तो दूर रही, स्वयं को तेजुन्तरी रेत की पहचान से भी अनभिज्ञ बताया, लेकिन वहीं पर बैठा हुआ धन्ना कुछ भी नहीं बोला, किन्तु चुपचाप मुसकराता रहा। धन्ना को मुसकराते देख राजा समझ गया, कि इसका मुसकराना निरर्थक नहीं है। उसने धन्ना से पूछा, कि—तुम चुप क्यों हो ? क्या तुम तेजुन्तरी रेत पहचानते हो और दे सकते हो ? राजा का यह कथन सुनकर धन्ना ने कहा, कि—हाँ, मैं तेजुन्तरी रेत दे तो सकता हूँ, परन्तु मेरे यहाँ जितनी भी तेजुन्तरी रेत है, खरीदनेवाले को वह सब रेत खरीदनी होगी। आप उस व्यापारी से जान लीजिये, जो तेजुन्तरी रेत का ग्राहक है।

धन्ना का कथन सुनकर राजा प्रसन्न हुआ। उसने तेजुन्तरी रेत के ग्राहक व्यापारी से कहा, कि—यहाँ तेजुन्तरी रेत मिल-तो सकती है, परन्तु जिसके पास है, उसका कहना है कि मेरे पास का सब माल उठाना होगा। व्यापारी ने राजा का कथन स्वीकार किया। अन्त में व्यापारी ने तेजुन्तरी रेत देखकर तथा धन्ना से भाव-ताव कर के, वह सब रेत खरीद ली।

तेजुन्तरी रेत देने के कारण धन्ना पर राजा बहुत ही प्रसन्न हुआ। राजा को जब यह मालूम हुआ, कि यह वही रेत है जिसको अमुक ने मेरी सहायता से नीलाम कराई थी और जिसे किसी ने भी नहीं खरीदी, केवल धन्ना ने नाम मात्र के मूल्य में खरीद ली थी, तब तो वह धन्ना की बुद्धि की बहुत प्रशन्सा करने लगा। वह कहने लगा, कि—धन्ना ने इस नगर और इस नगर की प्राचीनता के कारण प्राप्त इस नगर की प्रतिष्ठा बढ़ाई है। उस विदेशी व्यापारी को तेजुन्तरी रेत कहीं नहीं मिली थी। इस नगर मे ही उसे तेजुन्तरी रेत प्राप्त हुई, इसलिए वह अवश्य ही सब जगह इस नगर की प्रशन्सा करेगा। यदि धन्ना इस रेत को न पहचानता होता, और वह इसे न खरीद लेता, तो यह रेत व्यर्थ ही जाती। इस प्रकार धन्ना एक चतुर परीक्षक होने के साथ ही नगर की प्रतिष्ठा बढ़ानेवाला है, और इसी की कृपा से मुझे भी तेजुन्तरी रेत तथा उसका गुण देखने को मिला है।

इस प्रकार प्रसन्न होकर राजा ने, नगर के लोगों को सहमत करके धन्ना को 'नगरसेठ' बनाया। नकुछ मूल्य में खरीदी गई रेत का बहुत मूल्य मिलने, राजा के प्रसन्न होने, एवं राजा द्वारा धन्ना को 'नगरसेठ' का सम्माननीय पद मिलने से धनसार को बहुत ही प्रसन्नता हुई। उसने अपने तीनों लड़कों से कहा, कि—धन्ना ने वह रेत क्यों खरीदी थी, यह बात अब तो तुम जान ही गये होओगे। थोड़ी ही कीमत में खरीदी गई उस रेत से इतना तो रुपया मिला, और उसके साथ ही राजा ने प्रसन्न होकर धन्ना को नगरसेठ बनाया। इस प्रकार रुपया भी मिला और अपनी प्रतिष्ठा भी बढ़ी। इसलिए धन्ना के किसी कार्य की सहसा निन्दा न किया करो, किन्तु उस कार्य के विषय में पूरी तरह समझ लिया करो।

धन्ना के तीनों भाई, धन्ना को तेजुन्तरी रेत का रुपया मिलने तथा प्रतिष्ठा प्राप्त होने से अपने हृदय में पहले से ही जल रहे थे। पिता की बात सुनकर तो वे और भी अधिक जल उठे। धनसार की बात के उत्तर में वे लोग कहने लगे, कि—आप तो धन्ना द्वारा अपमानित होकर भी उसकी प्रशन्सा ही करेंगे। धन्ना स्वयं नगरसेठ बन गया, लेकिन उसके मुख से यह भी निकला, कि मेरे पिता की उपस्थिति में मैं नगरसेठ कैसे बनूँ! आपके रहते वह नगरसेठ बना, यह आपके लिए कितने

अपमान की बात है ! फिर भी आप धन्ना की प्रशन्सा करते हैं ! हम तो आपके और हमारे लिए यह समझते हैं, कि धन्ना ने नगरसेठ बनकर हमारा तथा आपका अपमान किया है। इसके सिवा महाराजा सीधे स्वभाव के हैं, इसलिए उन्होंने धन्ना के अपराध का विचार नहीं किया और उसे नगरसेठ बना दिया, अन्यथा धन्ना का अपराध ऐसा है कि जिसका दण्ड दिया जा सकता है। जिनने तेजुन्तरी रेत नीलाम कराई, उनको तो यह मालूम नहीं था कि यह तेजुन्तरी रेत है और इसमें सोना निकलता है परन्तु धन्ना को तो मालूम था ! फिर भी धन्ना ने उन लोगों से यह बात गुप्त रखकर नाममात्र के मूल्य में रेत खरीद ली। यह धन्ना का कैसा भयङ्कर अपराध है ! ऐसा अपराध होने पर भी राजा ने धन्ना को दण्ड देने के बदले नगरसेठ बनाया, यह भी इस विषमकाल का ही प्रभाव है। इतने पर भी आप धन्ना की प्रशन्सा करते हैं, यह आश्चर्य की बात है !

लड़कों की बात सुनकर धनसार सेठ उनकी बुद्धि की निन्दा करता हुआ कहने लगा, कि—धन्ना ने रेत चुराई तो थी नहीं ! उसने तो सब के सामने खरीदी थी। फिर धन्ना अपराधी कैसे है और उसको दण्ड क्यों दिया जाता ? रही नगरसेठ पद की बात। उसने नगरसेठ पद लेकर मेरा, या तुम्हारा अपमान नहीं किया है। जो जिस कार्य के योग्य होता है, वह

कार्य उसे ही सौंपा जाता है, दूसरे को नहीं सौंपा जाता। फिर चाहे वह दूसरा पिता हो या पुत्र हो। कहावत ही है कि—

नहि जन्मनि ज्येष्ठत्वं ज्येष्ठत्वं गुण उच्यते।
गुणाद्गुरुत्व मायाति दधि दुग्धं घृतं यथा॥

अर्थात्—बड़प्पन जन्म के कारण नहीं होता है, किन्तु गुणों के कारण होता है। जिसमें अधिक गुण हैं, वही बड़ा माना जाता है। जैसे दूध, दही और घी, इन तीनों में से घी का ही गौरव है, यद्यपि घी का जन्म दही से और दही का जन्म दूध से है।

इस कहावत के अनुसार धन्ना का नगरसेठ होना कुछ अनुचित नहीं है। इसके सिवा मैं वृद्ध हूँ। मैं नगरसेठ पद लेकर उसका कार्य-भार सहन भी तो नहीं कर सकता। रहे तुम लोग, सो तुम लोग कोई ऐसा कार्य तो करके दिखाओ, कि जिससे तुम्हें कोई पद दिया जा सके! कुछ भी हो, धन्ना नगरसेठ बना, इससे मेरा या तुम्हारा अपमान नहीं हुआ है, किन्तु सम्मान बढ़ा है। लोग मुझे नगरसेठ का पिता कहते हैं, और तुम लोगों को नगरसेठ के बड़े भाई कहते हैं। तुम्हारा छोटा भाई नगरसेठ है और इस पद का कार्य भार सम्हालता है, यह बात तुम्हारे लिए गौरवास्पद है, अपमानास्पद नहीं है।

धनसार का कथन उन तीनों भाइयों को नहीं रुचा। उन्होंने

धनसार की बातों का उद्दण्डतापूर्वक प्रतिवाद किया और होते-होते धनसार से उनका वाग्युद्ध भी हो गया।

धन्ना के भाइयों के लिए धन्ना की प्रतिष्ठा-वृद्धि, जवास के लिए वर्षाजल के समान हुई। उनके हृदय में धन्ना के प्रति द्वेषाग्नि बढ़ती ही जाती थी। एक ओर तो धन्ना नगरसेठ पद का कार्य करता हुआ राजा तथा प्रजा का प्रिय बनता जाता था, और दूसरी ओर लोगों द्वारा की गई धन्ना की प्रशन्सा सुन-सुन कर धन्ना के भाइयों का हृदय अधिकाधिक दग्ध होता जाता था। उनके हृदय में धन्ना के प्रति ऐसा द्वेष हो गया, कि वे लोग धन्ना को फूटी आँखों से भी नहीं देखना चाहते थे।

धन्ना के भाई दिन-रात इसी प्रयत्न और चिन्ता में रहने लगे, कि धन्ना को किस प्रकार अपमानित किया जावे, तथा किस प्रकार सब लोगों में उसकी निन्दा कराई जावे। एक रात, तीनों भाई धन्ना के विषय में विचार करने लगे। एक ने कहा, कि—धन्ना अपने मार्ग का कांटा है। दूसरे ने कहा, कि—जब तक धन्ना है, तब तक अपनलोग प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं कर सकते। तीसरे ने कहा, कि—प्रतिष्ठा प्राप्त करना तो दूर रहा, धन्ना के कारण अपन पद-पद पर अपमानित होते हैं। पिताजी की दृष्टि में तो अपन हतभागी हैं ही, राजा तथा प्रजा की दृष्टि में भी अपनी कुछ प्रतिष्ठा नहीं है।

धन्ना के द्वारा स्वयं की हानि का वर्णन करके तीनों भाई सोचने लगे, कि धन्ना रूपी कांटे को अपने मार्ग से किस तरह हटाया जावे। तीनों भाइयों ने आपस में परामर्श करके यह निश्चय किया, कि धन्ना का सदा के लिए अन्त कर दिया जावे। शस्त्र, विष, अग्नि अथवा और किसी तरह मार डाला जावे। ऐसा करने पर ही अपने को शान्ति मिल सकती है, तथा अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत हो सकता है।

इस तरह तीनो भाइयों ने धन्ना को मार डालने का निश्चय किया। यद्यपि धन्ना ने अपने भाइयों की प्रकट या अप्रकट कोई हानि नहीं की थी, फिर भी उसके भाई उसे मार डालना चाहते थे। दुष्टों का यह स्वभाव ही होता है। भर्तृहरि ने कहा ही है—

मृग मीन सज्जनाना तृण जल संतोष विहित वृत्तीनाम्।
लुब्धक धीवर पिशुना निष्कारण वैरिणो जगति॥

अर्थात्—हरिण, मछली और सज्जन लोग क्रमश तृण, जल और सन्तोष से अपना जीवन निर्वाह करते हैं, लेकिन शिकारी मछुए और दुष्ट लोग इन तीनों से निष्कारण ही वैर रखते है।

धन्ना की तीनों भौजाइयाँ, अपने पतियों का परामर्श एवं उनके द्वारा किया गया निश्चय सुन रही थीं। उन्हें अपने अपने पति की बुद्धि एवं उनके द्वारा किये गये भीषण निश्चय से दु:ख हो रहा था, फिर

भी वे धन्ना के सन्मुख की गई प्रतिज्ञा के कारण चुप रहीं। सवेरे धन्ना की तीनों भौजाइयों ने आपस में परामर्श करके धन्ना को अपने पतियों के निश्चय से सूचित करने, एवं धन्ना को प्राणभय के संकट से बचाने का निश्चय किया। उन्होंने अवसर देख कर धन्ना से कहा, कि—देवरजी, आपसे राजा-प्रजा आदि बाहर के सब लोग आनन्दित हैं तथा घर के भी और सब लोग आनन्दित हैं, परन्तु आपके तीनों भाई आपके प्रति अत्यन्त द्वेष रखते हैं। यद्यपि आपका कथन मानकर हमने कभी आपकी प्रशंसा नहीं की, किन्तु निन्दा ही की, फिर भी आपके भाइयों पर इसका कोई अनुकूल प्रभाव नहीं हुआ। हाँ यह अवश्य हुआ, कि उन्होंने आपके विषय मे जो दुर्विचार किया है, वह हम से गुप्त नहीं रहा। आज रात को आपके भाइयों ने यह निश्चय किया है, कि किसी भी तरह से आपको मार डाला जावे। इसलिए हम आपको सावधान करतीं हैं। आप प्राण-रक्षा का प्रयत्न करिये, अन्यथा किसी दिन आपके शत्रु बने हुए आपके भाई, अग्नि विष या शस्त्र द्वारा आपकी हत्या कर डालेंगे।

भौजाइयों का कथन सुनकर भी धन्ना मुसकराता ही रहा। भौजाइयों का कथन समाप्त हो जाने पर उसने उनसे कहा, कि—आपको यह भ्रम हुआ होगा कि मेरे भाइयों ने मुझे मार डालने

का निश्चय किया है। भला कहीं बड़े भाई अपने छोटे भाई को भी मार डाला करते हैं ?

धन्ना के इस कथन के उत्तर में उसकी भौजाइयों ने कहा कि—देवरजी, आप भूल कर रहे हैं। जब हृदय में दुर्भावना उत्पन्न हो जाती है, तब भाई या पुत्र की हत्या करने मे संकोच नहीं होता। ऐसा बहुत जगह हुआ भी है, और होता भी है। आपके भाई आपको अपना भाई नहीं मानते हैं, किन्तु महान् शत्रु मानते हैं। इसीलिए उन्होंने आपको मार डालने का निश्चय किया है। उनके इस निश्चय के विषय में हमको किसी प्रकार का भ्रम नहीं हुआ है, किन्तु हमने आपके भाइयों का यह निश्चय उन्हीं के मुख से सुना है। इसीलिए हमने आपको सावधान किया है।

भौजाइयों की बात सुन कर और उन्हें निश्चिन्त रहने के लिए कह कर, धन्ना भौजाइयों के पास से चला गया। वह सोचने लगा, कि—भाइयों के हृदय में मेरे प्रति किन्चित् भी प्रेम नहीं है, किन्तु असन्तोष भरा हुआ है। ऐसी दशा मे मुझे कौन-सा मार्ग ग्रहण करना चाहिए, जिससे मेरे भाइयो को शान्ति मिले।
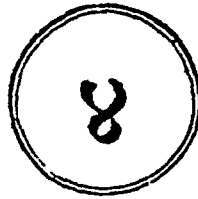
गृह-त्याग

भीम वनं भवति तस्य पुरं प्रधानं ।
सर्वोजनः सुजनता-मुपयाति तस्य ॥
कृत्स्ना च भूर्भवति सन्निधि रत्नपूर्णा ।
यस्यास्ति पूर्वं सुकृतं विपुलं नरस्य ॥

अर्थात्—जिस मनुष्य ने पूर्व जन्म में बहुत सुकृत किये हैं, उसके लिए महान् वन भी नगर के समान सुखदायी हो जाता है, सभी लोग उसके हितचिन्तक मित्र हो जाते हैं, और सारी पृथ्वी ही उसके लिए रत्नपूर्णा हो जाती है ।

पुण्यवान पुरुष जहाँ भी जाता है, उसके लिए वहीं सब सुख-सामग्री प्रस्तुत हो जाती है । चाहे वह वन मे रहे या नगर में, उसे कहीं भी कष्ट नहीं होता । उसे मित्रों की भी कमी नहीं

रहती। प्रत्येक व्यक्ति उसका हित ही चाहता है। इसी प्रकार उसके पास चाहे कुछ हो या न हो, वह दीन नहीं, किन्तु सम्पत्तिवान ही रहता है। उसके लिए सारी पृथ्वी ही रत्नपूर्णा हो जाती है। सम्पत्ति उसे पद-पद पर भेंटती है। यह बात दूसरी है कि वह स्वयं ही सम्पत्ति न ले, लेकिन उसे सम्पत्ति की कमी नहीं रहती। यह बात धन्ना-चरित्र के इस प्रकरण से और भी पुष्ट होती है। भाइयों के विरोध के कारण गृह त्याग कर जाने वाले धन्ना के पास एक समय खाने तक को न था, फिर भी उसे वन में किस प्रकार एक कृषक मित्र मिल गया और किस प्रकार खेत तथा मुर्दे की जाँघ से सम्पत्ति प्राप्त हुई, यह बात इस प्रकरण से ज्ञात होगी।

रात के समय धन्ना छत पर बैठा हुआ था। चन्द्र अपनी शीतल किरणें फेंक कर, सब जीवों को शान्ति देता हुआ आनन्दित कर रहा था। चन्द्र को देख कर धन्ना कहने लगा, कि—हे चन्द्र! तू एक होता हुआ भी सारे ही संसार को शान्ति देता है, लेकिन मैं अपने भाइयों को भी शान्ति नहीं दे सकता! मैं अपने भाइयों को भी सन्तुष्ट न कर सका। वे मुझ से इतने असन्तुष्ट हैं, कि मेरा विनाश करने तक को तैयार हुए हैं। छोटा होने के कारण मुझे अपने भाइयों का स्नेहभाजन होना चाहिए था, परन्तु मैं उनका कोपभाजन बन रहा हूँ। वे मुझे देखना भी

नहीं चाहते। ऐसा होने का कारण क्या है यह मैं नहीं जानता, परन्तु यह तो स्पष्ट है कि यदि मेरे मे कोई महान् दूषण न होता, तो मेरे भाई मुझ से रुष्ट क्यों रहते! मेरे भाई मुझ से रुष्ट रहते हैं इसमें मेरा ही दोष है, और जब मैं अपने भाइयों को भी प्रसन्न नहीं रख सकता तब दूसरे लोग मुझ से प्रसन्न कैसे रह सकते हैं! कदाचित दूसरे लोग मुझ से अप्रसन्न भी रहे, परन्तु मुझे अपने भाइयों को तो प्रसन्न रखना ही चाहिए। मैं दूसरे लोगों को चाहे सुख न भी दे सकूँ, लेकिन अपने भाइयों को तो सुखी करने का प्रयत्न मुझे करना ही चाहिए। मेरे भाई तब प्रसन्न और सुखी हो सकते हैं, जब मैं उनकी आँखों के सामने से हट जाऊँ। उन्होंने इसी उद्देश्य से मुझे मार डालने का विचार किया है, कि मैं उनकी आँखों के सामने न रहूँ। इसलिए मुझे गृह त्याग कर कहीं दूसरी जगह चला जाना चाहिए, जिसमें मेरे भाई आनन्दित हो जावें और अपने छोटे भाई के रक्त से हाथ रंगने के पाप से भी बच जावें। मुझे, घर से चले जाने का अपना विचार किसी से प्रकट न करना चाहिए, किन्तु चुपचाप ही घर त्याग कर चल देना चाहिए। यदि मेरा यह विचार प्रकट हो जावेगा, तो मुझे माता-पिता भी घर से न जाने देंगे, तथा राजा और प्रजा की ओर से भी बाधा उपस्थित की जावेगी। इसलिए यही अच्छा है, कि किसी को कुछ कहे-सुने बिना ही घर से विदा हो जाऊँ।

इस प्रकार घर त्याग कर जाने का निश्चय करके, धन्ना रात में ही घर से अनिश्चित स्थान के लिए चल दिया। उसको अपना पद अपनी प्रतिष्ठा और सम्पत्ति त्यागने में किंचित् भी दुःख नहीं हुआ। उसके हृदय में एक मात्र यह भावना थी, कि मेरे कारण मेरे भाइयों को किसी प्रकार का कष्ट न उठाना पड़े, उन्हें किसी तरह दुःखी न रहना पड़े, किन्तु वे स्वयं को सुखी अनुभव करें। धन्ना ने अपने साथ कोई भी वस्तु नहीं ली। उसका साथी केवल धैर्य और साहस था, और साथिनी उसकी कुशाग्रबुद्धि एवं कर्मपरायणता थी। इन्हीं के सहारे वह घर से निकल पड़ा। उस समय उसके हृदय में अनेक उच्च भावनाएँ थीं। वह अपने भाइयों का कल्याण चाहता था। उनके प्रति धन्ना के हृदय में किंचित् भी दुर्भावना न थी।

चलते-चलते रात भी बीत गई और दिन का पूर्व भाग भी समाप्त होने आया। धन्ना, बहुत थक गया था। साथ ही भूख भी अधिक लग गई थी। उसका जीवन अब तक सुख में ही व्यतीत हुआ था। भूख का दुःख, चलने का श्रम, या वन की भयङ्करता को वह जानता भी न था। ऐसा व्यक्ति जब विषम परिस्थिति में पड़ जाता है, तब वह स्वयं को महान् दुःख में मानने लगता है। उसकी बुद्धि नष्ट हो जाती है, लेकिन धन्ना धैर्यवान व्यक्ति था। धैर्यवान लोग कैसे भी दुःख में पड़ जावें, वे न तो स्वयं को

दुःख में ही मानते हैं, न अपनी बुद्धि में विकार ही आने देते हैं, न न्याय्य-मार्ग ही त्यागते हैं। धैर्यवान लोगों की प्रशंसा करते हुए कवि ने कहा भी है कि—

कदर्थितस्यापि हि धैर्यवृत्तेर्न शक्यते धैर्यगुणः प्रमार्ष्टुम।
अधो मुखस्यापि कृतस्य वह्नेर्नाधः शिखा याति कदाचि देव॥

अर्थात्—धैर्यवान पुरुष घोर विपत्ति पड़ने पर भी उसी प्रकार धैर्य नहीं त्यागते, जिस प्रकार जलती हुई आग उल्टी कर देने पर भी उसकी शिखा (लौ) नीचे की ओर नहीं जाती, किन्तु ऊपर को ही जाती है।

क्षुधा और श्रम से पीड़ित धन्ना, एक खेत की मेड़ पर स्थित वृक्ष की छाँह में बैठ गया। इसी खेत में, खेत का स्वामी कृषक हल चला रहा था। दोपहर हो जाने तथा सूर्य का ताप चढ़ जाने से, किसान भी हल छोड़ कर बैलों सहित उसी वृक्ष की छाँह में आ बैठा। थोड़ी ही देर में किसान के घर से किसान के लिए भोजन आया। समीप में बैठे हुए धन्ना को देख कर किसान अपने मन में कहने लगा, कि यह कोई भद्रपुरुष है। कुछ भी हो, लेकिन जब यहां यह उपस्थित है, तब मुझे अकेले को ही भोजन न करना चाहिए, किन्तु इसको भी भोजन कराना चाहिए। पास में एक आदमी भूखा बैठा रहे और दूसरा भोजन करे, यह अनुचित एवं गार्हस्थ्य धर्म के विरुद्ध है।

इस प्रकार सोच कर किसान ने धन्ना से भोजन करने के

लिए कहा। उत्तर में धन्ना ने कहा, कि—यद्यपि मैं भूखा हूँ और मेरी इच्छा भोजन करने की भी है, लेकिन मेरा यह नियम है कि मैं किसी के यहाँ तभी भोजन कर सकता हूँ, जब उसका कोई कार्य कर दूँ। आप यदि मुझे भोजन कराना चाहते हैं, तो पहले कोई कार्य बताइये, जिसे मैं कर सकूँ। किसान ने उत्तर दिया, कि—यहाँ मैं क्या काम बता सकता हूँ! यहाँ तो केवल हल चलाने का काम है। तुम भोजन कर लो, फिर कोई काम भी कर देना। धन्ना ने कहा, कि—मैं कार्य किये बिना भोजन नहीं कर सकता। यदि मुझे यहाँ अधिक ठहरना होता तो उस दशा में मैं काम करने से पहले भोजन करके फिर कोई काम कर देता। लेकिन मुझे अभी ही जाना है, इसलिए काम करके ही भोजन करूँगा। आप मुझे काम बताइये। यदि हल चलाने का कार्य है तो वही सही। मैं हल भी चला सकता हूँ।

विवश होकर किसान ने धन्ना से कहा, कि—यदि ऐसा है तो इस खेत में थोड़ी देर हल चला दो, और फिर भोजन कर लो। धन्ना ने किसान की यह बात स्वीकार कर ली। उसने कृषिकला भी सीखी थी, इसलिए वह हल चलाना जानता था। धन्ना, खेत मे हल चलाने लगा। किसान भी यह देखने लगा कि, देखें यह आदमी किस तरह से हल चलाता है। धन्ना ने कुछ ही दूर हल चलाया था, कि हल चलने के साथ-साथ खननन-खननन शब्द

होने लगा। किसान ने धन्ना से हल रोकने के लिए कहा, परन्तु धन्ना ने चौंस पूरा होने पर ही हल रोका। धन्ना ने हल द्वारा जो चौंस किया था, उसे किसान ने देखा तो ज्ञात हुआ, कि द्रव्य से भरा हुआ एक हण्डा हल से टकराकर हल के साथ घिसटता हुआ चला गया है, और उसमें का द्रव्य चौंस भर में बिखर गया है। किसान, यह देख कर दंग रह गया। वह सोचने लगा, कि यह खेत मेरी कई पीढ़ियों से मेरे पास है और इसमें हल चलता ही रहता है, फिर भी आज तक इस खेत में से धन नहीं निकला। लेकिन आज इस आदमी ने एक ही चाँस हल चलाया और खेत में से धन निकला यह कितने आश्चर्य की बात है! किसान ने धन्ना को बुलाकर उसे भी चांस में बिखरा हुआ धन बताया। धन्ना ने धन देख कर किसान से कहा, कि—इस जगह धन गड़ा हुआ था, जो हल लगने से निकल पड़ा है। इसमें आश्चर्य की बात क्या है! चलो भोजन करें, भूख लग रही है।

धन्ना ने बैल खोल दिये। फिर वह किसान के साथ भोजन करने के लिए बैठा। यद्यपि किसान के यहां का भोजन रुक्ष और साधारण था, धन्ना नित्य जिस तरह का भोजन किया करता था, उससे बहुत ही निम्नतम था, फिर भी भूख अधिक लगी थी इसलिए धन्ना को वह रूखा-सूखा भोजन भी बहुत ही स्वादिष्ट लगा। उसने रुचिपूर्वक भोजन किया।

भोजन करके धन्ना, आगे जाने के लिए उठ खड़ा हुआ। उसने किसान का उपकार मानकर तथा उसे धन्यवाद देकर उससे विदा मांगी। किसान ने धन्ना से कहा, कि—भाई, तुम जाते हो तो तुम्हारी इच्छा, परन्तु अपना धन लेते जाओ। तुम्हारे हल चलाने से जो धन निकला है, वह मेरा नहीं किन्तु तुम्हारा है। वह धन मेरे भाग्य से नहीं निकला है, किन्तु तुम्हारे भाग्य से निकला है। इसलिए उसे लेते जाओ।

किसान का कथन सुनकर धन्ना किसान की निस्पृहता पर प्रसन्न होता हुआ सोचने लगा, कि यदि मुझे धन साथ लेना होता तो मैं घर से ही क्यो न लाता। इस प्रकार सोचते हुए उसने किसान से कहा, कि—भाई, यह खेत तुम्हारा है। इस खेत में से जो कुछ भी प्राप्त हो, उसके स्वामी तुम्हीं हो सकते हो, मैं उसका स्वामी नहीं हो सकता। मैंने तो केवल भोजन के लिए हल चलाया था। मेरे इस श्रम के फल स्वरूप मुझे भोजन प्राप्त हो गया। धन के लिए न तो मैंने श्रम ही किया था, न धन पर मेरा अधिकार ही हो सकता है।

किसान ने धन्ना से बहुत कुछ कहा सुना, परन्तु धन्ना ने किसान की बात स्वीकार नहीं की। वह, खेत पर से आगे के लिए चल दिया। धन्ना के जाने के पश्चात् किसान ने सोचा कि इस धन पर मेरा अधिकार नहीं है। मैं, खेत में बीज बोकर

उसका फल लेने का अधिकारी हूँ, उसमे से अनायास और बिना श्रम के निकली हुई सम्पत्ति पर मेरा अधिकार नहीं हो सकता। इस खेत में से जो धन निकला है, वह या तो धन्ना का हो सकता है या राजा का। धन्ना ने तो यह धन लिया नहीं, इसलिये अब इसका अधिकारी राजा ही है।

इस तरह सोच कर उसने राजा के पास जा उससे धन निकलने की सब बात कही, और धन मंगवा लेने को प्रार्थना की। राजा किसान की ईमानदारी तथा धन्ना की निर्लोभता पर प्रसन्न हुआ। उसने किसान से कहा, कि जिसके हल हांकने से धन निकला है वह धन्ना जब निकला हुआ धन तुम्हारे लिये छोड़ गया है, तब वह धन तुम्हारा है। तुम अपने घर में रखो। राजा ने किसान से इस प्रकार कहा, लेकिन किसान ने स्वयं को धन का अनाधिकारी कह कर धन लेने से इनकार कर दिया। अन्त में राजा ने उस धन द्वारा एक ग्राम उसी स्थान पर बसा दिया, जहां से वह धन निकला था, और धन्ना के नाम पर उस ग्राम को जागीर कर के ग्राम का नाम धनवगूं रख दिया, तथा जिसके खेत मे से धन निकला था, उस किसान को उस ग्राम का मुखिया बना दिया।

धन्ना, किसी स्थान विशेष को लक्ष्य बनाये बिना ही उत्तर की ओर बढ़ा। चलते-चलते वह नर्मदा के किनारे आया। नर्मदा की धारा, उसके तट पर स्थित पहाड़, जंगल झाड़ी और उसके

समीप की शीतलता से धन्ना का हृदय बहुत ही अह्लादित हुआ। वह नर्मदा के तट पर लेट गया। थकावट तो थी ही, ठण्डी-ठण्डी हवा लगने से उसे नींद आने लगी। धन्ना तन्द्रा में था, इतने ही में उसने कोई शब्द सुना। शब्द सुन कर वह जगृत हो उठा। वह सोचने लगा कि, इस शब्द से तो यह जाना जाता है कि मुझे द्रव्य प्राप्त होगा, परन्तु इस विकट वन में द्रव्य कहां से मिलेगा! वह इस तरह सोच रहा था, इतने ही में उसने नदी में किसी मनुष्य का सव बहता हुआ आते देखा। वह, उस शव को निकालने के लिये नदी में कूद पड़ा और शव को नदी के बाहर खींच लाया।

नदी के तट पर शव को रख कर धन्ना उस शव को देखने लगा। उसने देखा, कि शव की जांघ में कुछ सिला हुआ है। धन्ना ने उस सिले हुए स्थान को खोला, तो उसमें से उत्तम—उत्तम कई रत्न निकले। धन्ना ने वे रत्न तो अपने पास रख लिये और शव को नदी में फेंक दिया।

उज्जैन में

नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं
विद्यापि नैव न च यत्न कृतापि सेवा ।
भाग्यानि पूर्व तपसा खलु संचितानि
काले फलन्ति पुरुषस्य यैथव वृक्षा ॥

अर्थात—सुन्दर आकृति, उत्तम-कुल, शील, विद्या और भली प्रकार से की गई सेवा फल देने वाली नहीं होती, किन्तु पूर्व जन्म के कर्म ही समय पर अच्छी प्रकार फल देते हैं, जिस तरह वृक्ष समय पर फल देता है।

भर्तृहरि का यह कथन जैन-शास्त्रानुमोदित है। वास्तव में अच्छी या बुरी आकृति, उत्तम या नीच कुल, शील सदाचार या कुशील दुराचार, और सेवा करने का फल पूर्व

संचित कर्मों से सम्बन्ध रखता है। यदि पूर्व संचित कर्म बुरे हैं तो आकृति आदि सब बातें अच्छी होने पर भी बुरा ही फल मिलता है। यदि पूर्ण संचित कर्म अच्छे हैं, तो आकृति आदि बातें खराब होने पर भी फल अच्छा ही मिलता है। संचित कर्म ही समय पर उदय में आकर अच्छा बुरा फल देते हैं। यह बात दूसरी है, कि कोई कर्म जल्दी उदय में आते हैं और कोई देर से लेकिन अच्छा बुरा फल मिलता है उनके प्रताप से ही। कभी कभी यह होता है कि कार्य अच्छा करने पर भी परिणाम बुरा होता है, और कार्य बुरा करने पर भी परिणाम अच्छा होता है। इस तरह की विषमता के लिये यही समझना चाहिये कि यह फल इस तात्कालिक कार्य का नहीं है, किन्तु पूर्ण संचित कर्म का यह फल है। यह समझने के साथ ही इस बात को भी विस्मृत न होना चाहिये, कि वर्तमान में हम जो काम कर रहे हैं उनका फल हमें इस समय चाहे न मिले लेकिन जल्दी या देर से मिलेगा अवश्य। यह याद रख कर मनुष्य को दुष्कृत्य से सदा बचे रहना चाहिये।

धन्ना के पूर्व पुण्य अच्छे थे। इससे उसे पुरपइठान में भी यश और सम्पत्ति प्राप्त हुई। पुरपइठान त्यागने के पश्चात् वन में भी उसे सम्पत्ति और यश की प्राप्ति हुई। इसी प्रकार उज्जैन पहुँचने पर भी उसे जो अधिकार और जो प्रतिष्ठा

प्राप्त हुई, वह भी पूर्व संचित पुण्य के प्रताप से ही। पुरपइठान की सम्पत्ति और वहाँ की प्रतिष्ठा त्याग कर उज्जैन आने वाले धन्ना को उज्जैन में क्या प्राप्त हुआ, यह बात इस प्रकरण से प्रकट होगी।

नर्मदा पार करके, धन्ना उत्तर भारत की ओर चला। विन्ध्याचल की घाटी पार करके घूमता फिरता वह उज्जैन आया। उस समय उज्जैन में चन्द्र प्रद्योतन नाम का राजा राज्य करता था। वहां योग्य प्रधान न होने के कारण उसका राज्य अव्यवस्थित हो रहा था। राजा इस बात की चिन्ता में था कि मुझे कोई बुद्धिमान व्यक्ति मिले और मैं उसे अपना प्रधान बनाऊँ। बुद्धिमान प्रधान प्राप्त करने के उद्देश्य से उसने नगर में यह घोषणा कराई, कि जो व्यक्ति अमुक तालाब में स्थित खम्भ को तालाब के बाहर रह कर रस्सी से बाँध देगा, उसे मैं अपना प्रधान बनाऊँगा। इस कार्य के लिए राजा ने समय भी नियत कर दिया। नियत समय पर चन्द्र प्रद्योतन राजा उस तालाब पर गया। नगर तथा बाहर के बहुत से लोग भी तालाब में स्थित खम्भ बाँधने की इच्छा से तालाब पर आये। राजा की घोषणानुसार उपस्थित लोगों ने खम्भ बाँधने के लिए अपनी-अपनी बुद्धि दौड़ाई और प्रयत्न भी किये, परन्तु कोई भी व्यक्ति तालाब के बाहर रह कर खम्भ बाँधने में समर्थ नहीं हुआ।

जिस समय तालाब के ऊपर खम्भ बाँधने का प्रयत्न किया जा रहा था, उसी समय वहाँ पर धन्ना भी पहुँच गया। उसने लोगों से भीड़ का कारण पूछा, और फिर राजा से कहा कि—आप मुझे आवश्यकतानुसार रस्सी दें तो मैं तालाब में के खम्भ को तालाब में उतरे बिना ही बांध दूँगा। धन्ना की आकृति तथा उसकी शारीरिक रचना आदि देख कर राजा ने सोचा, कि शायद यह व्यक्ति तालाब स्थित खम्भ बांधने में सफलता प्राप्त करे।

धन्ना की बात स्वीकार करके राजा ने आवश्यक रस्सी की व्यवस्था कर दी। धन्ना ने रस्सी का एक सिरा तालाब के किनारे के एक वृक्ष से बांध दिया और दूसरा सिरा पकड़ कर तालाब के चारों ओर घूम आया। तालाब के चारों ओर रस्सी सहित घूम जाने से, तालाब में स्थित खम्भ रस्सी से बँध गया। धन्ना ने रस्सी का दूसरा सिरा भी उसी वृक्ष से बांध दिया और फिर उसने राजा से कहा कि—मैंने एक बार तो खम्भे को बांध दिया है, यदि आवश्यकता हो तो और बांधूँ। धन्ना का कथन सुन कर राजा उसकी बुद्धि की प्रशंसा करने लगा। उपस्थित लोगों में से कई लोग कहने लगे कि इस तरह तो हम भी खम्भ को बांध सकते थे। इस तरह बांधने में क्या है! ऐसा कहने वाले लोगों से राजा ने कहा कि—यदि बांध सकते थे तो बांधा क्यों नहीं? तुम्हें किसने रोका था, और तुम से यह किसने

कहा था कि अमुक तरह से ही खम्भ बांधना चाहिये ! खम्भ बँध जाने के पश्चात् कोई बात कहना व्यर्थ है। घोषणानुसार यह व्यक्ति प्रधान पद पाने का अधिकारी हो चुका है, तथा इसकी बुद्धि देख कर मुझे विश्वास होता है, कि इसने जिस तरह खम्भ बांध दिया है, उसी तरह यह मेरे राज्य को भी व्यवस्था की जंजीर से बाँध देगा। लोगों से इस तरह कह कर राजा ने, धन्ना को अपना प्रधान बनालिया। उज्जैन का प्रधान बन कर धन्ना ने ऐसी राज्य व्यवस्था की, कि राजा प्रजा आदि सभी लोग प्रशंसा करने लगे। सब लोग यही कहने लगे, कि हम लोगों के सद्भाग्य से ही यह प्रधान आया है।

धन्ना, राज्य कार्य से निवृत्त हो संध्या के समय घोड़े पर बैठ कर वायु सेवनार्थ नगर के बाहर जाया करता। एक दिन सन्ध्या के समय जब धन्ना वायु-सेवनार्थ गया था तब उसने देखा कि कुछ दीन-हीन स्त्री-पुरुष नगर की ओर चले आ रहे हैं। उनके शरीर कृश थे, मुख कान्तिहीन थे और पास में शरीर रक्षा की पूर्ण सामग्री भी न थी। उन लोगों को देख कर धन्ना ने यह अनुमान किया, कि ये लोग किसी ग्राम के निवासी जान पड़ते हैं, जो दुःख के मारे नगर में रक्षा पाने के लिए चले आ रहे हैं। इस तरह अनुमान करके धन्ना अपने मन में कहने लगा, कि—इन ग्रामीणों को कष्ट में पड़ने के लिए मुझे स्वयं को अपराधी

मानना चाहिए। मेरे द्वारा ठीक व्यवस्था न होने के कारण ही इन लोगों को कष्ट में पड़ना पड़ा है। यदि ठीक व्यवस्था होती तो ये लोग कष्ट क्यों पाते और इन्हे घर-बार छोड़कर इस तरह की दीन-हीन दशा में नगर का आश्रय क्यों लेना पड़ता!

इस प्रकार सोचता हुआ धन्ना, उन लोगों के समीप उनकी दुःख गाथा पूछने के लिए गया। समीप पहुँच कर उसने उन सब को पहचाना, और पहचानते ही वह आश्चर्यपूर्वक दुःखी हो गया। वह अपने मन में कहने लगा, कि ये मेरे माता-पिता और भाई भौजाई इस दशा में! यदि आज मैं वायु सेवनार्थ न आया होता, और ये लोग मुझे न मिले होते, तो जिस नगर का मैं प्रधान हूँ उसी नगर में इन्हे कैसे दुःख का सामना करना पड़ता!

मन में इस प्रकार कहता हुआ धन्ना घोड़े से उतर कर धनसार के पैरों पर गिर पड़ा। एक राज चिह्नधारी पुरुष को अपने पैरों गिरते देख कर, धनसार आश्चर्यचकित रह गया। वह निश्चय न कर सका; कि यह व्यक्ति कौन है? पिता को आश्चर्य में पड़ा देखकर, धन्ना उठ कर कहने लगा कि—पिताजी, क्या आपने मुझे नहीं पहचाना? मैं, आपका धन्ना हूँ। 'पिताजी' और 'धन्ना' शब्द सुनकर तथा धन्ना को पहचान कर, धनसार को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। उसका हृदय हर्ष से भर गया, कण्ठ रुँध गया और आँखों में से आँसू गिरने लगे। उसने धन्ना को छाती

से लगा लिया। धन्ना मिल गया यह जान कर धन्ना की माता भी रोने लगी और धन्ना के भाई-भौजाई भी। धन्ना ने सब को प्रणाम करके धैर्य देते हुए उनसे कहा, कि—आप लोग दुःख क्यों करते हैं! बिछुड़ा हुआ जब मिले तब प्रसन्नता होनी चाहिए या दुःख? आप लोग किसी भी तरह का दुःख न कीजिये, किन्तु प्रसन्न होइये।

इस तरह सब को धैर्य देकर धन्ना ने धनसार से कहा, कि—पिताजी, इस नगर में आपकी बहुत प्रतिष्ठा है। यहाँ के राजा ने मुझे प्रधान बना रखा है, इसलिए यदि आप इस दशा में नगर में चलेंगे तो आपकी प्रतिष्ठा को बहुत धक्का लगेगा। आप कुछ देर यहीं ठहरे रहिये, मैं योग्य व्यवस्था करके आप सब को सम्मान-पूर्वक नगर में ले चलूँगा।

पिता से इस प्रकार कह कर और सब लोगों को नगर के बाहर ठहराकर, धन्ना घर आया। उसने अपने विश्वस्त सेवकों द्वारा, अपने माता-पिता और भाई-भौजाइयों के लिए वस्त्राभूषण तथा रथ-वाहन भेज दिये। यह करके फिर उसने नगर के लोगों पर यह प्रकट किया, कि मेरे माता-पिता एवं भाई-भौजाई आ रहे हैं। धन्ना से नगर के लोग भी प्रसन्न थे। तथा राजा भी प्रसन्न था। इसलिए सब ने, धन्ना के माता-पिता आदि को उत्साह पूर्वक नगर में लाने का निश्चय किया।

धन्ना, अपने माता-पिता और भाई-भौजाई को सम्मान-पूर्वक नगर में लाया। उसने घर से स्वयं के चले आने के विषय में किसी से एक शब्द भी नहीं कहा, न अपने किसी व्यवहार से ही उसने अपने भाईयों को यह अनुभव होने दिया कि, धन्ना हम से रुष्ट है। वह अपने माता-पिता की ही तरह अपने उन भाइयों का भी सम्मान करता, जिनके कारण उसे रात के समय घर त्यागना पड़ा था, और जिनने उसको मार डालने का निश्चय किया था। इसी प्रकार वह अपनी भौजाइयों का भी आदर करता, और सब लोगों को आनन्दित रखने का प्रयत्न करता रहता। उन्हें किसी भी तरह कष्ट न होने देता।

कुछ दिन व्यतीत होने के पश्चात् एक दिन धन्ना ने अवसर देख कर धनसार से पूछा, कि—पिताजी, अपने घर में बहुत सम्पत्ति होने पर भी आप सब लोगों को घर क्यों त्यागना पड़ा? तथा आप सब दीन हीन दशा को क्यों प्राप्त हुए? यदि आप अनुचित न मानते हों, तो मुझ से सब बात कहने की कृपा कीजिये। धन्ना का प्रश्न सुनकर, धनसार की आँखों से आँसू गिरने लगे। फिर वह गद्गद् स्वर से कहने लगा, कि—बेटा धन्ना, तू अपने भाइयों को जानता ही है। वे कैसे मूर्ख, अदूरदर्शी एवं क्रूर स्वभाव के हैं, यह तुझे मालूम ही है। उन्होंने तुझे मार डालने का जो विचार किया था, और उनके जिस क्रूर विचार के कारण

तू घर छोड़ कर चला आया, उनका वह विचार तेरे घर त्याग जाने के पश्चात् ही मुझे मालूम हुआ। पहले तो मुझे तेरे वियोग से दुःख हुआ, लेकिन जब तेरे भाइयों के दुष्ट विचार का मुझे पता लगा, तब मैंने तेरा चला जाना ठीक माना।

लोगों को यह मालूम हुआ, कि धन्ना रात के समय न मालूम कहाँ चला गया है। सब को यह तो मालूम था ही, कि धन्ना के भाई धन्ना से द्वेष करते हैं, एवं उसका अशुभ चाहते हैं। इसलिए राजा और प्रजा ने तेरे घर त्यागने के लिए तेरे भाइयों को ही अपराधी ठहराया, तथा तेरे भाइयो से सब लोग अप्रसन्न रहने लगे। तेरे घर त्याग जाने के कारण और सब लोग तो, यहाँ तक कि तेरी भौजाइयाँ भी दुखी हुई, परन्तु तेरे दुष्ट भाइयो को प्रसन्नता हुई। वे कहने लगे, कि अच्छा हुआ जो धन्ना चला गया और हमारे मार्ग का रोड़ा दूर हुआ। मैंने तेरे भाइयों से कहा, कि अब तो धन्ना चला गया है, इसलिए अब शान्ति से रहा करो। इस प्रकार समय समय पर मैं तेरे भाइयों को समझाया करता, परन्तु तेरे दुर्बुद्धि भाइयों के कार्य एवं विचार में किंचित भी परिवर्तन नहीं हुआ। ऐसे लोगों को दृष्टि में रख कर ही तो एक कवि ने कहा है कि—

लभेत सिकता सु तैलमपि यत्नतः पीडयन्,

पिबेच्च मृगतृष्णिका सु सलिलं पिपासार्दितः।

कदाचि दपि पर्यटन्छश विषाण मासादये-
न्नतु प्रतिनिविष्ट मूर्ख जनचित्त माराधयेत् ॥

अर्थात्—चाहे कोई बालू को यत्न से पीसकर तेल भी निकाल ले, कोई प्यासा मृगतृष्णा के जल से अपनी प्यास भी बुझा ले, कोई पृथ्वी पर घूमघाम कर सींग वाला खरगोश भी ढूँढले, ये असम्भव कार्य चाहे कोई सम्भव भी बना डाले, परन्तु हठ पर चढे हुए मूर्ख मनुष्य के चित्त को अनुकूल बनाने में कोई भी व्यक्ति समर्थ नहीं है।

इसके अनुसार तेरे भाइयों को समझाने का मेरा सब प्रयत्न निष्फल हुआ। उन लोगों को मैं नियन्त्रण में न रख सका।

तेरे मन्द भागी भाइयों ने एक दूकान खोली। उनने विस्तृत दूकान खोल कर उसमें बहुत रुपया लगाया, परन्तु दूकान की आय दूकान के खर्च इतनी भी न थी। वे लोग मौज मजा करने में ही रहते थे, दूकान का कार्य विशेषत नौकरों के ही भरोसे चलता था। आय कम और व्यय अधिक होने के कारण द्रव्य क्षय होने लगा। इसी बीच में एक और दुर्घटना घट गई। राजमहल की कुछ दासियों ने, रानी के आभूषण चुराये। दासियों द्वारा चुराये गये वे बहुमूल्य आभूषण तेरे भाइयों ने अल्प मूल्य में खरीद लिये। मैंने तेरे भाइयों से यह कहा भी था, कि ऐसे बढ़िया आभूषण थोड़े मूल्य में मिलना इस बात का प्रमाण है कि ये आभूषण चोरी के हैं, इसलिए ये आभूषण लेना ठीक

नहीं, लेकिन तेरे उद्दण्ड भाइयों ने मेरी बात नहीं मानी। उन्होंने वे आभूषण दासियों से खरीद ही लिये। अन्त में वे चोरी करने वाली दासियाँ, आभूषण चुराने के अपराध में पकड़ी गईं। उन्होंने अपना अपराध स्वीकार करके यह कह दिया, कि हमने उस दूकान पर आभूषण बेचे हैं। राजा की आज्ञा से तेरे भाइयों की दूकान की तलाशी हुई, जिसमें से रानी के आभूषण निकले। तेरे भाइयों पर राजा इस कारण पहले से ही रुष्ट था, कि नगरसेठ धन्ना को इन्हीं लोगों के कारण गृह त्याग कर जाना पड़ा है, चोरी के आभूषण खरीदने के कारण वह अधिक रुष्ट हो गया। कहावत्त ही है कि—

राजा मित्रं केन दृष्टं श्रुतं वा।

अर्थात्—यह किसने देखा सुना है, कि राजा किसी का मित्र है।

इसके अनुसार कुपित राजा ने, तेरे भाइयों के अपराध के दण्ड स्वरूप मेरी सब सम्पत्ति छीन ली। हम सब लोग दुःखी हो गये। ऊपर से अपमान का दुःख और था। उस अपमान के दुःख से बचने के लिए, हम सब ने पुरपइठान त्याग कर अन्यत्र जाना उचित समझा। नीति के अनुसार भी हमारे लिए ऐसा करने के सिवा दूसरा मार्ग न था। क्योंकि, नीतिकारों का कथन है—

यत्र देशेऽथवा स्थाने, भोगाः भुक्ताः स्ववीर्य्यतः।
तस्मिन् विभवहीनो यो, वसेत स पुरुषाधमः॥

अर्थात्—जिस देश अथवा स्थान में रह कर अपने पराक्रम से अनेक प्रकार के भोग भोगे हैं, उस देश या स्थान में वैभवहीन हो कर रहने वाला, नीच है।

हम लोगों ने राजा से छिपाकर जो कुछ बचाया था, वह लेकर हम सब रात के समय पुरपइठान त्याग, भाग चले। परन्तु तेरे भाइयो के भाग्य में—और उनके साथ मेरे भाग्य में—तो दुःख ही बँदा था। इसलिए मार्ग में चोर मिल गये, जिनने हमारे वस्त्र तक छीन लिये और हम सब उस दशा में हो गये, जिस दशा में तेरे को नगर के वाहर मिले थे। मार्ग में तेरे भाई-भौजाई मजदूरी करते। मजदूरी से जो कुछ प्राप्त होता, उसी से हम सब अपना पेट भरते हुए इधर से उधर भटक रहे थे, इतने ही में डूबते हुए के लिए नौका की तरह हम लोगों को तू मिल गया। मैंने तो अपनी दुःख गाथा सुनाई, अब तू अपनी बात कह कि घर से निकल कर यहाँ किस तरह पहुँचा, तुझे किस किस तरह की परिस्थिति का सामना करना पड़ा, और प्रधान-पद कैसे प्राप्त हुआ? धन्ना ने उत्तर दिया, कि—आज तो बहुत समय हो गया है, इसलिए फिर कभी कहूँगा।

धन्ना, पिता-माता और भाई-भौजाई को भोजन कराकर फिर स्वयं भोजन किया करता। भोजन करने के पश्चात्, वह माता-पिता और भाई-भौजाई के पास जाकर उनकी कुशल पूछता, तथा

उन्हें प्रसन्नता हो ऐसी बातें भी किया करता। यह उसका नित्य का क्रम था। इस क्रम के अनुसार एक दिन जब वह धनसार के पास गया, तब धनसार ने उससे, उस पर बीती बात कहने के लिए कहा। धन्ना ने धनसार को पुरपइठान से निकल कर उज्जैन पहुँचने तथा खम्भ बाँधकर प्रधान बनने तक की सब बात सुनाई। साथ ही उसने वे रत्न भी धनसार को भेंट कर दिये, जो मुर्दे की जाँघ में से निकले थे। उन रत्नों को देखकर, धनसार आश्चर्य-चकित रह गया। उसके मुँह से यही निकला, कि 'ये रत्न ऐसे मूल्यवान हैं, कि अपने घर में जो सम्पत्ति थी वह इनके मूल्य के सामने तुच्छ थी। वास्तव में, सम्पत्ति त्यागने वाले को त्यक्त सम्पत्ति से बहुत अधिक मिलने का नियम ही है। राम ने अवध का राज्य त्यागा था, तो उन्हें त्रिखण्ड पृथ्वी का राज्य मिला था।'

धनसार ने इस प्रकार धन्ना तथा उसके त्याग की प्रशंसा की। धन्ना ने, धनसार द्वारा की गई प्रशंसा के उत्तर में यही कहा, कि—पिताजी, आप किस की प्रशंसा कर रहे हैं! यह सब आप ही का प्रताप है, फिर आप मेरी प्रशंसा क्यों कर रहे हैं!

कुछ दिन तक इसी प्रकार चलता रहा। कुछ दिनों के पश्चात् धन्ना के भाइयों को भी वह समस्त वृत्तान्त ज्ञात हो गया, जो धन्ना ने स्वयं के घर से निकलने आदि विषय में धनसार से कहा था। साथ ही उन लोगों को यह भी ज्ञात हो गया, कि

धन्ना ने पिताजी को कुछ रत्न भी दिये हैं। यह सब हाल जान-कर, वे लोग धनसार के पास गये। उन्होंने धनसार से कहा, कि—पिताजी, आपको धन्ना ने कौन-से रत्न दिये हैं? लड़कों का यह कथन सुनकर धनसार ने उन्हें वे रत्न बताये, जो उन्हें धन्ना ने दिये थे। रत्नों को देखकर वे तीनों भाई आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने धनसार से पूछा, कि—धन्ना को ये रत्न कहाँ से प्राप्त हुए? धनसार ने उत्तर दिया, कि—नर्मदा नदी में बह कर जाते हुए एक मनुष्य के शव की जाँघ में से मिले थे। धनसार का यह कथन सुनकर वे तीनों भाई, आपस में काना-फूसी करके धन-सार को सुनाते हुए कहने लगे, कि—ये रत्न अपने घर के ही हैं। घर में से ये शुभ लक्षणवाले रत्न निकल गये थे, इसी से अपनी दुर्दशा हो गई, और पिताजी द्वारा दिये गये ये रत्न धन्ना के पास थे, इसी से धन्ना प्रधान बनकर ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त कर सका। खम्भ बाँधने की बात गलत है। वास्तव में तो यह सब इन रत्नों का ही प्रताप है। पिताजी ने ये शुभ लक्षण वाले रत्न स्नेहवश धन्ना को देकर उसे घर से विदा कर दिया था, और ये रत्न घर से निकल गये थे, तभी तो अपने को इतने कष्ट भोगने पड़े!

इस प्रकार कहते हुए उन लोगों ने धनसार से कहा, कि—पिताजी, जो कुछ हुआ सो हुआ, अब आप धन्ना से कहिये, कि वह इन रत्नों और इनके प्रभाव से प्राप्त सम्पत्ति में हम तीनो को

भी भाग दे। आपने धन्ना को ये रत्न दे दिये इस कारण हम सब लोगों को कष्ट सहने पड़े, इस बात को विस्मृत करके हम लोग अब केवल यही चाहते हैं, कि इन रत्न और इनके प्रभाव से प्राप्त यहाँ की सम्पत्ति मे हम तीनों भाइयों को समान भाग मिल जावे।

लड़कों की बातें और उनका प्रस्ताव सुनकर, धनसार उनकी बुद्धि की निन्दा करता हुआ बोला, कि—तुम लोग अब तक भी धन्ना को नहीं समझे! अभी भी तुम्हारे हृदय में धन्ना के प्रति द्वेष है! यदि धन्ना तुम लोगों को अपना न मानता, और इन रत्नों को तुम लोगों से अधिक समझता, तो वह ये रत्न मुझे देता ही क्यों! इसी प्रकार तुम लोगों को अपने यहाँ आश्रय भी क्यों देता! तुम लोगों का दुष्ट-विचार जानकर, धन्ना, घर की सब सम्पत्ति तुम्हारे लिए छोड़ घर से भिखारी की भाँति निकल गया था। घर में से उसने कुछ भी नहीं लिया था, और ये रत्न मेरे घर में थे ही नहीं, मैं उसे देता भी कहाँ से! बल्कि घर से धन्ना के चले जाने का समाचार, धन्ना के चले जाने के पश्चात् ही मुझे मालूम हुआ, पहले मालूम भी नहीं हुआ, अन्यथा मैं उसे घर से जाने ही न देता। ऐसा होते हुए भी तुम लोग फिर कुमति करने लगे हो! घर की सब सम्पत्ति खोकर, स्थान-भ्रष्ट हो मेहनत-मजदूरी करते हुए इधर-उधर भटकने के दिन भूल

गये ! धन्ना की कृपा से, दुःख-मुक्त होकर आनन्द-पूर्वक जीवन बिताने का यह अवसर मिला है, तो अब फिर दुर्बुद्धि आई ! वहाँ कलह मचाया उसका फल तो पाया ही, अब क्या यहाँ भी कलह करना चाहते हो ! उदार-हृदय धन्ना, तुम्हारे कार्य एवं व्यवहार को विस्मृत करके तुम्हारा पालन कर रहा है, और तुम उसका उपकार भूल, कृतघ्न हो उसी की जड़ काटने का प्रयत्न करते रहते हो ! तुम लोगों की यह मनोवृत्ति, सर्वथा निन्दनीय है। तुम अपनी इस तरह की मनोवृत्ति त्याग कर, जिस तरह रहते हो उसी तरह आनन्द से रहो। यदि यहाँ भी धन्ना के प्रति द्वेष रखा, तो इसका स्पष्ट यही अर्थ होगा, कि तुम लोग फिर विपत्ति को आमन्त्रित कर रहे हो !

धनसार का उत्तर सुनकर, उसके तीनों पुत्र धनसार पर कुपित हो गये। वे धनसार से कहने लगे, कि—आप सदा से ही धन्ना का पक्ष लेते रहे हैं, इसलिए आप उसकी प्रशन्सा करें यह स्वाभाविक है। और ऐसी दशा में आप यह कैसे स्वीकार कर सकते हैं, कि 'ये रत्न अपने घर के ही हैं, जो मैंने धन्ना को दे दिये थे !' परन्तु वास्तविक बात कबतक छिपी रह सकती है ! हम आपसे फिर कहते हैं, कि आप भी समझ जाइये और धन्ना को भी समझा दीजिये। ये रत्न न तो आपने ही प्राप्त किये हैं, न धन्ना ने ही। आपको ये रत्न पैतृक-सम्पत्ति

में प्राप्त हुए हैं, इस कारण इन पर हमारा और धन्ना का समान अधिकार है। इसलिए यही अच्छा होगा, कि आपस में घर में बैठकर समझौता कर लिया जावे, कोई दूसरा न जानने पावे। अन्यथा हम प्रत्येक सम्भव उपाय से इन रत्नों एवं इनके प्रभाव से प्राप्त सम्पत्ति में भाग लेंगे ही। हम ऐसा कदापि नहीं सह सकते, कि इन रत्नों का स्वामी अकेला धन्ना रहे, और हम उसके आश्रित रह कर उसके भाग्य से बड़े कहावें। हम आपको सूचित करते हैं. कि ये रत्न जाने न पावें और आप इनमें से हम तीनों को भाग दिलावें।

धनसार ने अपने तीनों लड़कों की बहुत भर्त्सना की। तीनो भाई धनसार पर क्रोध बरसाते हुए धनसार के पास से चले गये। वे तीनों आपस में इस बात का विचार करने लगे, कि इन रत्नों तथा धन्ना की सम्पत्ति में किस तरह भाग कराया जावे। उनकी आपस की बातचीत से उनकी पत्नियों को भी सब हाल और अपने पतियों के दौरात्म्य की बात मालूम हो गई! वे जान गईं, कि इन लोगों में फिर कुमति आई है! इन लोगों का दुर्भाग्य फिर विपत्ति बुला रहा है। ये लोग यहाँ भी अपने कनिष्ठ भाई को कष्ट में डालना चाहते हैं।

सब हाल जानकर धन्ना को तीनों भौजाइयों ने, आपस में परामर्श करके धन्ना को सावधान करने का निश्चय किया।

अवसर देखकर उनने धन्ना से सब बात कह कर कहा, कि—आपके भाइयों मे आपके प्रति पुनः दुर्भावना आई है, अतः आप सावधान रहिये। ऐसा न हो, कि आपको असावधान पाकर आपके भाई आपका अनिष्ट कर डालें। अच्छा तो यह होगा, कि आप अपने भाइयों को अलग कर दें, उन्हें शामिल न रखें।

भौजाइयों का कथन सुनकर धन्ना ने उनसे कहा, कि—आप लोग किसी तरह की चिन्ता न करिये। संसार का कोई भी व्यक्ति किसी का अनिष्ट करने मे समर्थ नहीं है, और बड़े भाई द्वारा छोटे भाई का अहित हो, यह तो सम्भव ही नहीं हो सकता। मुझे भाइयों की ओर से किसी भी तरह की आशङ्का न होनी चाहिए, किन्तु मेरा प्रयत्न तो यही रहना चाहिए कि मेरे बड़े भाई प्रसन्न रहे। ऐसा करना मेरा साधारण कर्त्तव्य है, और इस कर्तव्य का पालन करने के लिए मैं अपने प्राण तक भी दे सकता हूँ, तो रत्न या सम्पत्ति क्या चीज है! इसलिए आप निश्चिन्त और आनन्दित रहिये।

भौजाइयों को इस प्रकार धैर्य देकर धन्ना चला गया। वह एकान्त स्थान में बैठ कर इस विपयक विचार करने लगा, कि अब मुझे क्या करना चाहिये! मेरे भाइयो की ओर से मुझे आगे बढ़ने की सूचना मिल रही है, फिर भी क्या मैं यहीं बैठा रहूँगा! यद्यपि मुझे रत्न या सम्पत्ति का ममत्व नहीं है, परन्तु यदि मैं रत्न

या सम्पत्ति चारों भाइयों के बीच बाँटने लगूँगा, तो भाई लोग आपस में कलह करेंगे। ऐसा करने पर उन्हें शान्ति भी न होगी और प्रतिष्ठा को भी धक्का लगेगा। इसलिये यही अच्छा है, कि रत्न और सम्पत्ति भाइयों के लिये छोड़ कर मैं उसी प्रकार घर से चल पड़ूँ, जिस तरह पुरपइठान से चला था।
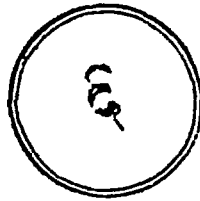
कठिन परीक्षा

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता शौर्यस्य वाक्संयमो
ज्ञानस्योपशमः श्रुतस्य विनयो वित्तस्य पात्रेव्ययः।
अक्रोधस्तपसः क्षमा प्रभवितुर्धर्मस्य निर्व्याजता
सर्वेषामपि सर्व कारणमिदं शीलं परं भूषणम् ॥

अर्थात्—ऐश्वर्य का भूषण सज्जनता है, शूरता का भूषण वाणी पर संयम रखना है, ज्ञान का भूषण शान्ति है, शास्त्राध्ययन का भूषण विनय है, धन का भूषण सुपात्र को दान देना है, तप का भूषण क्रोधरहित होना है, प्रभुता का भूषण क्षमा है, और धर्म का भूषण सरलता—अथवा निष्काम रहना है, किन्तु जो दूसरे सब गुणों का कारण है वह शील सर्वोत्तम भूषण है।

इस श्लोक में जिन गुणों को भूषण रूप कहा गया है, धन्ना में वे सभी गुण मौजूद थे। उसने स्वयं में रहे हुए गुणों का समय-समय पर परिचय भी दिया, जो कथा से प्रकट है। इन सब गुणों के साथ ही उसमें सब गुणों का कारण शील भी था। वह पूर्ण शीलवान था। उसके शील की कसौटी भी हुई, जिसमें वह उत्तीर्ण ही हुआ, अनुत्तीर्ण नहीं हुआ। धन्ना कैसा शीलवान था, उसके शील की परीक्षा कब किस तरह और किसने की, तथा क्या परिणाम निकला आदि बातें इस प्रकरण में मिलेंगी।

धन्ना ने घर त्यागकर जाने का निश्चय किया। उसने दो चार दिन में राज्य के वे आवश्यक कार्य निपटा डाले, जिनका बोझ उस पर विशेष रूप से था। इसी तरह उसने स्वय के निजी काम भी समाप्त कर दिये। यह कर के धन्ना रात के समय गुप-चुप घर से चल दिया। उसने इस बार भी घर से निकलने के समय अपने साथ कोई वस्तु नहीं ली। उसके शरीर पर जो वस्त्र थे, वे भी बहुत साधारण थे।

वन, पहाड़ आदि के दृश्य देखता हुआ, अनेक विषम परिस्थिति का सामना करता हुआ, और जंगली फलों तथा महनत मजदूरी से आजीविका करता हुआ धन्ना, काशी देश की बनारस नगरी पहुँचा। वह गंगा के तट पर आया। गंगा की

धारा और उसकी प्राकृतिक शोभा देख कर धन्ना को बहुत प्रसन्नता हुई। उसने सोचा कि इस नदी को देखने तथा इसका आश्रय लेकर आत्मा की ज्योति जगाने के लिये लोग बहुत दूर-दूर से आते हैं। मैं यहाँ अनायास आ गया हूँ, इसलिये इस स्थान पर मुझे भी कोई आत्म-कल्याण-साधक कार्य करना चाहिये।

इस प्रकार सोच कर धन्ना, तेला करके गंगा के किनारे बैठ गया। गंगा के किनारे तप करते हुए धन्ना की दृढ़ता की परीक्षा करने के लिए गंगा देवी सुन्दर तरुणी का रूप धारण करके, पुरुषों के हृदय मे कामवासना जागृत करनेवाली लीला करती हुई धन्ना के सामने आई। वह हाव-भाव दिखाती हुई धन्ना से कहने लगी कि, हे युवक! तू तप द्वारा अपने इस सुन्दर शरीर को अब मत सुखा! अब अपने यौवन को तप की आग में भस्म मत कर। तेरा तप सफल हुआ है, इसलिये अब उठ। तेरे सौन्दर्य एवं यौवन ने मुझे आकर्षित कर लिया है। मैं देवांगना हूँ। मेरा नाम सर्वकामप्रदत्ता है। मैं तेरी समस्त इच्छाएँ पूर्ण करने में समर्थ हूँ। इसलिये मुझ को स्वीकार करके आनन्द प्राप्त कर, तथा मुझे भी आनन्दित कर।

यद्यपि उस समय तक धन्ना का विवाह नहीं हुआ था, और उसके सन्मुख खड़ी प्रार्थना करनेवाली स्त्री का रूप उसकी मधुर वाणी एवं उसके हाव-भाव पुरुषों को आकर्षित करनेवाले थे,

फिर भी धन्ना अविचल ही रहा। गंगादेवी की बात सुन कर धन्ना ने अपने मन में विचारा, कि मैं यहां आत्मकल्याण के लिए तप करने बैठा हूँ। जब आत्मकल्याण के लिए किये जानेवाले थोड़े से तप के पूर्ण न होने पर भी यह सुन्दरी उपस्थित हुई है, तो अधिक तथा पूर्ण तप से कैसा आनन्द प्राप्त होगा। ऐसी दशा में मैं इसके द्वारा दिये गये प्रलोभन मे पड़कर अपना तप कैसे भङ्ग कर डालूँ। साथ ही, यह स्त्री मेरी नहीं है। इसके साथ मेरा विधिपूर्वक विवाह नहीं हुआ है, इसलिए इसको स्वीकार करना महान् पाप भी होगा। जिस गंगा के तट का सहारा पाप नष्ट करने के लिए लिया जाता है, क्या उसके तट पर मैं ऐसा भयङ्कर पाप करूँ!

इस प्रकार विचारकर, धन्ना दृढ़ता पूर्वक बैठा रहा। उसने गंगादेवी की ओर देखा भी नहीं। धन्ना की इस दृढ़ता से गंगादेवी बहुत प्रभावित हुई। उसने कृत्रिम रूप त्याग अपना वास्तविक रूप धारण किया, और फिर वह धन्ना से कहने लगी, कि—हे आत्मज्योति प्रकटाने के लिए तप करनेवाले पुरुष! मैं गंगा देवी हूँ। तेरी दृढ़ता देखकर मैं प्रसन्न तथा तेरे पर मुग्ध हूँ, और यह कहती हूँ कि यदि तू चाहे तो मै तेरी पत्नी बनने के लिए भी तैयार हूँ।

गंगा का कथन सुनकर, धन्ना उसकी ओर देख कर कहने लगा, कि—मात गंगे! तेरा दर्शन करके मैं स्वय को सद्भागी मानता हूँ। जिस जड़ गंगा की अधिष्ठात्री होने के कारण तुम

गंगादेवी कहाती हो, उस जड़ गंगा की धारा भी विपरीत दिशा में नहीं जाती, तो उसकी अधिष्ठात्री एवं चैतन्य होती हुई भी क्या तुम अकृत्य कार्य करोगी ! क्या मर्यादा नष्ट कर डालोगी ! जब जड़ गंगा भी विमुख नहीं होती, वह भी मर्यादा का पालन करती है, तब क्या तुम्हारे लिए मर्यादा नष्ट करना उचित होगा ? कदाचित तुम तो ऐसा करने के लिए तैयार भी हो जाओ परन्तु मैं मर्यादा विरुद्ध कार्य कदापि नहीं कर सकता। मैं, महान् संकट में पड़ने पर भी परदार-गमन का पाप नहीं कर सकता। मैं आप से भी यही प्रार्थना करता हूँ, कि आप भी मर्यादा की रक्षा करें, पर-पुरुष को जार-पति बनाने का पाप न करें।

धन्ना के दृढ़तापूर्ण एवं समीचीन उपदेश का, गंगादेवी पर यथेष्ट प्रभाव पड़ा। वह अपनी दुष्कामना त्याग कर धन्ना के सामने ही बैठ गई, और धन्ना की दृढ़ता देखती हुई उसका तेला पूर्ण होने की प्रतीक्षा करने लगी। तेला समाप्त होने पर, धन्ना ने स्वयं की परीक्षा के लिए एवं उसके तट का सहारा लिया था इस-लिए गंगादेवी का उपकार माना, और फिर उससे विदा माँगी। धन्ना के कथन के उत्तर में गंगादेवी ने कहा, कि—हे दृढ़व्रती ! तुम ऐसे लोगो के प्रताप से ही यह पृथ्वी स्थिर है। तुम मेरे द्वारा ली गई परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हो इसलिए मैं तुम्हे यह चिन्तामणि रत्न देती हूँ। यद्यपि तुम्हारे में जो गुण हैं, उन गुणों से यह

चिन्तामणि रत्न बढ़कर नहीं है। तुम अपने गुणों के बल से त्रिलोक की सम्पदा के स्वामी हो। विद्वानों ने कहा ही है—

कांताकटाक्षविशिखा न दहन्ति यस्य--
चित्त न निर्दहति कोप कृशानु तापः।
कर्षंति भूरि विषयाश्च न लोभ पाशै-
र्लोकत्रयं जयति कृत्स्नमिदं स धीरः॥

अर्थात—जिसके हृदय को स्त्रियों के कटाक्ष बाण नहीं बेधते, जो क्रोधाग्नि के ताप से नहीं जलता, और इन्द्रियों के विषयभोग जिसके चित्त को लोभ पाश में बाँध कर नहीं खींचते, वह धीर पुरुष तीनों लोक को अपने वश में कर लेता है।

तुम ऐसे ही हो, इसलिए तुम्हें इस चिन्तामणि रत्न की आवश्यकता न होना स्वाभाविक है। फिर भी मुझे सन्तोष देने के लिए, तुम यह तुच्छ भेंट स्वीकार करो।

गंगा ने जब बहुत अनुनय-विनय की, तब धन्ना ने उसके द्वारा दिया गया चिन्तामणि रत्न स्वीकार किया। चिन्तामणि रत्न लेकर, धन्ना मगध देश की ओर चला। मार्ग में वह श्रम-जीवियों की भाँति जीविकोपार्जन करके पेट भरता था, तथा आगे बढ़ता जाता था। चलता-चलता वह मगध देश की राजधानी राजगृह नगर के समीप पहुँचा। राजगृह नगर के समीप एक बाग मिला, जिसके वृक्ष सूख गये थे और जलाशय भी जल-

विहीन थे। धन्ना वहुत थक गया था। उसने सोचा, कि यद्यपि इस वाग के वृक्ष सूखे हुए हैं, फिर भी कई वड़े-वड़े वृक्ष ऐसे हैं, कि जिनकी छाया मेरे लिए पर्याप्त है। मुझे छाया में कुछ देर विश्राम करके थकावट मिटा लेनी चाहिए, और शरीर में नव-चेतन आने के पश्चात् नगर में जाना चाहिए।

इस प्रकार सोच कर धन्ना, एक सूखे हुए वृक्ष की छाया में लेट गया। लेटे-लेटे धन्ना को यह विचार हुआ, कि यदि इस वाग के सब वृक्ष हरे और जलाशय जलपूर्ण होते, तो यह स्थान मुझ जैसे श्रान्त पथिक के लिए कैसा आनन्ददायक होता। इस प्रकार विचार करते हुए श्रान्त धन्ना को, शीतल पवन का स्पर्श होते ही नींद आ गई। वह सो गया। जो वाग विलकुल सूख गया था, जिसको हरा करने के लिए अनेक असफल प्रयत्न किये जा चुके थे, और जिसके सूख जाने से लोग उसके स्वामी कुसुम-पाल सेठ पर गुप्त पापादि का दोपारोपण करते थे, वह वाग धन्ना के पहुँचने के पश्चात् धीरे-धीरे हरा होने लगा। धन्ना की इच्छा-नुसार चिन्तामणि रत्न के प्रभाव से थोड़ी ही देर में वाग के सभी लता-वृक्ष नव-पल्लवों से लहलहा उठे। वाग में के जलाशय भी, शीतल सुस्वादु एवं निर्मल जल से परिपूर्ण हो गये। वाग के सूख जाने के कारण जो वागवान लोग दु.खी हो रहे थे, वाग को अचानक हरा-भरा देखकर वे बहुत ही आनन्दित हुए। उनके

आनन्द की सीमा न रही। हर्षावेश मे दौड़े हुए जाकर उन लोगों ने, कुसुमपाल सेठ को बाग हरा होने का शुभ समाचार सुनाया। प्रसन्नता देनेवाला यह समाचार सुनकर, अपने सूखे हुए बाग को हरा देखने की इच्छा मे कुसुमपाल सेठ शीघ्रता-पूर्वक बाग मे आया। बाग को हरा देखकर वह बहुत ही हर्षित हुआ। उसने बागवानों से अपनी प्रसन्नता प्रकट करके कहा, कि बहुत प्रयत्न करने पर भी जो बाग हरा नहीं हुआ था, और जिसके सूख जाने से मैं दु.खी था, तथा लोगों द्वारा लगाये गये अनेक अपवाद सुनता सहता था, वह बाग आज अनायास हरा कैसे हो गया?

कुसुमपाल सेठ के इस प्रश्न का, बागवान लोग कुछ उत्तर न दे सके। कुछ देर सोचकर, सेठ ने बागवानों से पूछा, कि—इस बाग में कोई आया तो नहीं था? सेठ के इस प्रश्न के उत्तर में बागवानों ने कहा, कि—और कोई तो नहीं आया था, केवल एक पथिक उस जलाशय के समीपवाले वृक्ष की छाया मे सोया हुआ है। सेठ ने कहा, कि—मेरी समझ से यह बाग उस पथिक के प्रताप से ही हरा हुआ है। चलो, उसके समीप चल कर उसे देखें।

बागवानों के साथ कुसुमपाल सेठ, निद्रावस्थित धन्ना के पास गया। वह, धन्ना का प्रभावपूर्ण एवं तेजस्वी मुखकमल देख कर बहुत ही प्रसन्न हुआ। धन्ना की आकृति देखकर, सेठ को यह

विश्वास हो गया कि इसी पुरुष के प्रताप से यह बाग हरा हुआ है। वह, धन्ना के जागने की प्रतीक्षा करता हुआ धन्ना के समीप ही खड़ा रहा। कुछ ही देर पश्चात् धन्ना की निद्रा भंग हुई। वह उठ बैठा। धन्ना को जागृत देखकर, कुसुमपाल सेठ उसके अभिमुख हो उससे कहने लगा कि—महानुभाव, आज अनायास आपका दर्शन करके मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई है। बल्कि मैं तो यह कहता हूँ, कि मेरे ही सद्भाग्य से आपका पधारना यहाँ हुआ है। इस बाग के सूख जाने से, मेरी बहुत निन्दा हो रही थी, तथा मुझे दुःख भी था। आपके पधारने ही से यह बाग हरा हो गया, तथा इसमें के जलाशय भी जलपूर्ण हो गये, जिससे मेरा दुःख भी मिटा और कलंक भी। यह सब आपकी कृपा से ही हुआ है, इसलिए मैं स्वयं पर आपका अत्यन्त उपकार मानता हूँ।

धन्ना ने, कुसुमपाल सेठ का परिचय जान कर उसका आदर किया, और 'आपके इस बाग में मैंने विश्राम पाया' यह कह कर उसका आभार भी माना। कुसुमपाल सेठ ने धन्ना के कथन का उत्तर देते हुए उससे कहा, कि—वास्तव में यह बाग इस योग्य न रह गया था कि इसके द्वारा किसी को विश्राम मिल सकता, परन्तु आपने पधार कर इस बाग को इस योग्य बना दिया है। इसलिए बाग भी आपका चिरऋणी है, और मैं भी! अब मेरी यह प्रार्थना है, कि आपने जिस तरह इस बाग पर कृपादृष्टि की, उसी प्रकार

मेरे घर पर भी कृपादृष्टि कीजिये, और वहाँ पधार कर उसे पावन बनाइये। कुसुमपाल की यह प्रार्थना स्वीकार करते हुए धन्ना ने कहा, कि—इस अपरिचित नगर में मेरे लिए ठहरने आदि को स्थान न था। आप प्रेमपूर्वक मुझ पर यह कृपा कर रहे हैं, इसलिए मैं आपका आभार मानता हूँ।

कुसुमपाल सेठ का सूखा हुआ बाग एक पुरुष ने हरा कर दिया है, और अब सेठ उस पुरुष को अपने घर ला रहा है, यह बात सारे नगर में फैल गई। नगर के लोग, धन्ना का दर्शन करने एवं उसके स्वागत में सम्मिलित होने के लिए बाग में उपस्थित हुए। उधर धन्ना की स्वीकृति पाकर कुसुमपाल सेठ ने, धन्ना को ले चलने के लिए अपने घर से रथ मँगवाया। साथ ही धन्ना के लिए वस्त्राभूषण भी मँगवाये, और अपने मित्रों को—धन्ना का स्वागत करने के लिए—आने की सूचना दी। रथ एवं वस्त्राभूषण आ जाने पर, सेठ ने धन्ना से वस्त्र बदलने एवं आभूषण धारण करने की प्रार्थना की। धन्ना ने कुसुमपाल की यह प्रार्थना अस्वीकार करके कहा, कि—मैं जो वस्त्र पहने हूँ, नगर में तो वे ही वस्त्र पहन कर चलूँगा, फिर वहाँ देखा जायगा। व्यक्ति का महत्त्व, वस्त्राभूषण से नहीं किन्तु गुणों से है।

कुसुमपाल सेठ, धन्ना को रथ में बैठा कर उत्सव-पूर्वक अपने घर लाया। साथ में नगर के बहुत-से लोग थे, जो जयजयकार

करते जाते थे। धन्ना को सेठ के यहाँ पहुँचा कर जब सब लोग अपने-अपने घर जाने के लिए तैयार हुए, तब धन्ना ने सब लोगों को सम्बोधन करके कहा, कि—भाइयो, आप लोगों ने तथा सेठ ने मेरा जो आदर-सत्कार किया है, उसके लिए मैं आप सब का बहुत आभार मानता हूँ। आप लोगों ने मेरा स्वागत करके मुझ पर जो उपकार किया है, उसके कारण पर भी आप लोगों को विचार करना चाहिए। आप लोग मेरे से परिचित भी न थे। मेरे शरीर पर ऐसी कोई विशेषता भी नहीं है, न अच्छे वस्त्र ही हैं। ऐसा होते हुए भी आप लोगों ने मुझे आदर दिया, इसका एकमात्र कारण यही है, कि जिस बाग में मैंने विश्राम किया था वह सूखा हुआ बाग हरा हो गया। परन्तु बाग हरा क्यों हुआ? मैं न तो जादू जानता हूँ, न मेरे में कोई शक्ति-विशेष ही है। फिर भी बाग हरा हो गया, इसका एकमात्र कारण मैं तो धर्म ही मानता हूँ। मेरी समझ से, धर्म के प्रताप से ही सूखा हुआ बाग हरा हुआ है। धर्म की शक्ति से ऐसा होना असम्भव भी नहीं है। धर्म की शक्ति से असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते हैं। इस प्रकार बाग हरा होने और आप लोगों द्वारा मुझे आदर-सत्कार मिलने का एक-मात्र कारण धर्म है। यदि मुझ में धर्म न होता, तो न तो बाग ही हरा होता, न आप लोग मुझे सम्मान पूर्वक घर लाकर आश्रय ही देते। इसलिए मैं आप से यही

कहता हूँ, कि जिस धर्म के प्रताप से बाग हरा हुआ है और आप लोगों ने मेरा स्वागत-सत्कार किया है, उस धर्म को हृदय में स्थान दें, उसकी सेवा करें, किन्तु उसे विस्मृत न करें।

धन्ना के उपदेश का उपस्थित लोगों पर उचित प्रभाव पड़ा। सब लोग धन्ना के उपदेश को हृदयंगम करके, धन्ना की प्रशन्सा करते हुए अपने-अपने घर गये। सब लोगों के चले जाने पर कुसुमपाल सेठ ने धन्ना को स्नानादि कराकर भोजन करने बैठाया। यद्यपि उज्जैन से निकलने के पश्चात् धन्ना को कभी रोचक भोजन नहीं मिला था और वह भूखा भी था, फिर भी उसने भोजन करने में भुखापन नहीं दिखाया। कुसुमपाल सेठ ने अपनी पत्नी तथा कुसुमश्री नाम्नी—अविवाहिता परन्तु विवाह के योग्य—अपनी कन्या का धन्ना से परिचय कराया। धन्ना का शरीर-गठन, उसका सौन्दर्य, यौवन और उसकी भोजन-चातुरी देखकर, तथा उसका प्रताप से सूखा बाग हरा हो गया है यह जानकर, कुसुमश्री धन्ना पर मुग्ध हो गई। वह अपने मन में कहने लगी, कि यह व्यक्ति अवश्य ही महान् एवं कुलीन है, अतः यदि इसके साथ मेरा विवाह हो जावे तो अच्छा। कुसुमपाल सेठ को, कुसुमश्री के विवाह की चिन्ता थी ही। वह, कुसुमश्री के लिए योग्य वर की खोज कर ही रहा था। धन्ना को पाकर उसे इस चिन्ता से

मुक्ति मिलने की भी आशा बँध गई, और धन्ना की ओर देखती हुई कुसुमश्री की आकृति पर उसने जो भाव भङ्गी देखी, उससे भी उसे यही ज्ञात हुआ कि कुसुमश्री धन्ना पर मुग्ध है। इस लिए उसने अपने मन में यह विचार किया कि, यदि सब ओर से अनुकूल सम्मति मिले, तथा यह अतिथि एवं कुसुमश्री स्वीकार करें, तो मैं इन दोनों को विवाह ग्रन्थि में जोड़ दूँ।

धन्ना को भोजन कराकर कुसुमपाल सेठ ने उसके लिए विश्राम करने की सब व्यवस्था करा दी। यह करके, वह अपने विचारानुसार धन्ना के साथ कुसुमश्री का विवाह करने के विषय में अपनी पत्नी एवं कुसुमश्री की सम्मति जानने के कार्य में लगा। उसने, अपनी पत्नी के पास जाकर उसे अपना विचार सुनाया। कुसुम श्री की माता, अपने पति का विचार सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुई। उसने कुसुमपाल सेठ से कहा, कि—आगन्तुक पुरुष को मैंने भोजन करते समय देखा है। उसकी आकृति उसका शरीर और उसकी भोजन करने की रीति से यह स्पष्ट है, कि वह कुलीन भी है, किसी बड़े घर का भी है और बुद्धिमान भी है। वह कैसा सद्‌भागी है, यह बात तो सूखा बाग हरा होने से ही स्पष्ट है। मेरी समझ से, उसके साथ कुसुमश्री का विवाह करना बहुत श्रेष्ठ होगा। कुसुमश्री के लिए, वैसा दूसरा वर ढूँढ़ने पर

भी मिलना कठिन है । यह कुसुमश्री का सद्भाग्य ही है, कि उसके योग्य वर घर बैठे ही मिल गया।

इस प्रकार कुसुमपाल की पत्नी ने, कुसुमपाल के विचार का समर्थन किया । कुसुमपाल ने कहा, कि—तुम्हारी और मेरी इच्छा तो उस अतिथि के साथ कुसुमश्री का विवाह करने की है, परन्तु जिसके लिए यह सब बात है। उस कुसुमश्री की भी इच्छा जानना आवश्यक है। जब तक वह स्वयं स्वीकार न कर ले, तब तक उसका विवाह किसी भी पुरुष के साथ-चाहे वह कितना भी श्रेष्ठ क्यों न हो—कैसे किया जा सकता है !

पति का कथन ठीक मानकर, कुसुमश्री की माता ने कुसुम श्री को अपने सन्मुख बुलाया । उसने, कुसुमपाल की उपस्थिति में ही कुसुमश्री को उसके विवाह के सम्बन्ध में स्वयं तथा कुसुमपाल का विचार सुनाया, और फिर उसने कहा, कि—अब तू अपना विचार प्रकट कर। माता का कथन सुनकर, कुसुमश्री बहुत ही हर्षित हुई। वह तो पहले से ही यह चाहती थी, कि इस प्रिय अतिथि के साथ मेरा विवाह हो जावे। इसलिए उसने, माता पिता के विचारानुसार 'कार्य करना अपना कर्त्तव्य बताकर, स्वाभाविक लज्जापूर्वक धन्ना के साथ विवाह करना स्वीकार कर लिया।

पत्नी एवं पुत्री को सहमत करके, कुसुमपाल सेठ ने अपने

मित्रों, स्नेही-सम्बन्धियों तथा ज्ञाति के प्रमुख व्यक्तियों से भी धन्ना के साथ कुसुमश्री का विवाह करने के सम्बन्ध में सम्मति ली। इन सब लोगों की ओर से भी अनुकूल सम्मति मिली। सब को एक मत देखकर कुसुमपाल सेठ बहुत ही प्रसन्न हुआ।

विवाह

जो व्यक्ति धन सम्पदा आदि सांसारिक पदार्थ से जितना ही अधिक निर्ममत्व रहता है, तथा उनकी जितनी उपेक्षा करके उन्हें त्यागता है, धन सम्पदा आदि सांसारिक सामग्री उसे उतनी ही अधिक प्राप्त होती है। जिस प्रकार खेत में बोया हुआ अनाज पहले तो जाता है, परन्तु पश्चात् कई गुना अधिक होकर मिलता है, उसी प्रकार त्यागी गई सम्पत्ति भी कई गुनी अधिक होकर मिलती है। यह बात दूसरी है कि इस तरह मिलने वाली सम्पत्ति को वह त्याग करने वाला अपनावे या न अपनावे लेकिन जो सांसारिक पदार्थ त्यागता है, वे सांसारिक पदार्थ उसके पीछे-पीछे दौड़ते हैं, उसे पुनः पुन. प्राप्त होते हैं।

इसके विरुद्ध जो सांसारिक पदार्थों से ममत्व करता है, सांसारिक पदार्थों की चाह करता है, और सांसारिक पदार्थों ही में सब कुछ मानता है, वे सांसारिक पदार्थ उस व्यक्ति से घृणा करते हैं. उस व्यक्ति के पास नहीं आते, या उस व्यक्ति के पास से चले जाते हैं; तथा दोनों ही दशा में उस व्यक्ति को दुःखी करते हैं. व रुलाते हैं। यह बात धन्ना और उसके भाइयों के चरित्र से भी सिद्ध है। धन्ना ने गृह सम्पत्ति मे ममत्व नहीं किया, अपने भाइयों के लिए बार-बार गृह-सम्पत्ति का त्याग किया, तो उसे उत्तरोत्तर अधिक-अधिक सम्पत्ति एवं मान प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। और उसके भाइयों ने सांसारिक सम्पदा से ममत्व किया, उसी में सब कुछ मानकर अपने छोटे भाई से द्रोह किया, तो उनके पास प्राप्त सम्पत्ति भी नहीं रही, तथा उन्हें समय-समय पर अनेक कष्ट भी उठाने पड़े। धन्ना ने अपने भाइयों के लिए पुरपइठान की सम्पत्ति त्यागी, तो उसे मार्ग में एवं उज्जैन में त्यक्त सम्पत्ति से अधिक सम्पत्ति प्राप्त हुई; और उज्जैन की सम्पत्ति अपने भाइयों के लिए छोड़ दी, तो उसे गंगादेवी ने चिन्तामणि रत्न प्राप्त हुआ, तथा आगे राजगृह में भी सम्पत्ति और प्रभुता प्राप्त हुई। वास्तव में सांसारिक सम्पत्ति उसी की सेवा करती है, जो उसका सेवक नहीं है, उससे निस्पृह रहता है, एवं उसे तृणवत त्याग सकता है।

धन्ना, विश्राम करके उठा। उसने कुसुमपाल सेठ से कहा—कि आपके स्नेह के अधीन हो-काम किये बिना भोजन न करने का मेरा नियम होने पर भी-मैंने आपके आग्रह से यहाँ भोजन किया, परन्तु अब कृपा करके आप मुझे कोई कार्य बताइये। बिना कार्य किये भोजन करना, मेरे लिए असह्य है। धन्ना का यह कथन सुनकर, कुसुमपाल सेठ अधिक प्रसन्न हुआ। उसने धन्ना से कहा, कि—मैं आपको अवश्य ही कार्य बताऊँगा और वह कार्य भी ऐसा है, कि जिसके लिए मे बहुत चिन्तित हूँ। मैं आपको यह कार्य बताता हूँ कि—आप मेरी कुसुमश्री नाम्नी कन्या का पाणिग्रहण करके उसे सौभाग्यवती बनाइये, तथा मुझे चिन्ता—मुक्त कीजिये।

कुसुमपाल सेठ का कथन सुनकर, धन्ना कुछ देर के लिए विचार में पड़ गया। वह, सहसा कुसुमपाल का प्रस्ताव स्वीकार भी न कर सका, और अस्वीकार भी न कर सका। कुछ देर सोच कर धन्ना ने कुसुमपाल सेठ से कहा, कि—आप मेरे को इस कार्य के योग्य मानते हैं यह मेरा तो सद्भाग्य है, परन्तु इस कार्य में आप विवाह-विषयक नीति-वाक्य को विस्मृत न करिये। नीतिज्ञों का कथन है कि पुरुष का कुल घर आदि जानकर ही उसे कन्या देनी चाहिए। जिसके कुल घर आदि का पता नहीं है, उस पुरुष के साथ अपनी कन्या का विवाह न करना चाहिए। आपने केवल मेरा शरीर ही देखा है। मेरे कुल घर या गुण अव-

गुण से तो आप अपरिचित ही हैं। ऐसी दशा में आपके लिए यह उचित न होगा, कि आप बिना जाने ही मेरे साथ अपनी कन्या का विवाह कर दें।

धन्ना के कथन के उत्तर में कुसुमपाल ने कहा कि—आपका यह कथन ठीक है, परन्तु मनुष्य की आकृति और उसके आचार व्यवहार तथा बोल चाल से उसके कुल आदि का भी पता चल जाता है। इन्हीं बातो पर से आपके लिए भी हम इस निश्चय पर पहुँच चुके हैं, कि आप कुलीन हैं। रही घर की बात, सो पुरुष का पुरुषार्थ घर बनाने में समर्थ है और पुरुपार्थहीन पुरुष का बना बनाया घर भी नष्ट हो जाता है। इसलिए मैं नीति-मार्ग को दृष्टि में रखकर ही कुसुमश्री का विवाह आपके साथ करना चाहता हूँ।

कुसुमपाल के यह कहने पर, धन्ना कुछ नहीं बोला। उसने अपना सिर नीचा कर लिया। कुसुमपाल ने धन्ना के मौन और उसकी चेष्टा से यह माना, कि धन्ना ने मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। 'मेरा प्रस्ताव स्वीकार हो गया है' यह जान कर कुसुम-पाल को बहुत प्रसन्नता हुई, उसकी पत्नी तथा कुसुमश्री भी प्रसन्न हुई।

धन्ना, कुसुमपाल के यहाँ आनन्द से रहने और उसके व्यापार कार्यों में भाग लेने लगा। कुछ दिन के बाद कुसुमपाल ने ज्योतिषी

को बुला कर धन्ना के साथ कुसुमश्री का विवाह करने की तिथि निश्चित की। सेठ ने निश्चित तिथि से वाकिफ करते हुए धन्ना से कहा, कि आप अपनी इच्छा प्रकट करिये, जिसमें आपकी इच्छानुसार आपके विवाह की तैयारी करा दी जावे। कुसुमपाल सेठ का यह कथन सुन कर, धन्ना कुछ विचार में पड़ गया। वह सोचने लगा, कि यद्यपि यहां पर मेरे माता-पिता भाई-भौजाई आदि उपस्थित नहीं हैं, फिर भी मुझे इसी घर में रह कर विवाह न करना चाहिये किन्तु विवाह करना तभी ठीक है, जब मेरा घर-बार आदि स्वतन्त्र हो, और विवाह-विषयक व्यय या प्रबन्ध के लिये मैं सेठ को कष्ट में न डालूँ। परन्तु थोड़े ही समय में यह सब होना कैसे सम्भव है।

धन्ना, कुछ देर के लिये इसी चिन्ता मे रहा। सहसा उसे अपने पास के चिन्तामणि रत्न का स्मरण हो आया। उसने सोचा कि इस अवसर पर मुझे चिन्तामणि से सहायता लेना उचित है, जिसमें इस समय का कार्य भी चल जावे, तथा चिन्तामणि की परीक्षा भी हो जावे।

चिन्तामणि की सहायता से घर-बार और विवाह-विषयक तैयारी करने का निश्चय करके, धन्ना ने कुसुमपाल से कहा, कि आप मेरी ओर की चिन्ता न करिये। मैं अपना सब प्रबन्ध कर लूँगा। कुसुमपाल ने कहा, कि आप प्रबन्ध कैसे और कहाँ से कर लेंगे ? यद्यपि यहाँ आपके अनेक मित्र ऐसे हैं, जो आपकी आव-

श्यकताएँ पूर्ण कर सकते हैं, लेकिन उनके द्वारा आवश्यकताएँ पूरी कराने की अपेक्षा इस कार्य को मैं ही करूँ तो क्या कुछ बुरा होगा ?

धन्ना ने उत्तर दिया कि मैं किसी दूसरे से सहायता लेने की अपेक्षा तो आपसे सहायता लेना ही उचित मानता हूँ, और आवश्यकता होने पर मैं किसी दूसरे से सहायता न लेकर आप ही को कष्ट दूँगा, परन्तु मेरा अनुमान है, कि मुझे आपसे या किसी दूसरे से सहायता लेने की आवश्यकता ही न होगी। आप निश्चिंत रहिये। कुसुमपाल ने कहा, कि ऐसा न हो कि विवाह की नियत तिथि व्यतीत हो जावे। धन्ना ने उत्तर दिया नहीं, ऐसा न होगा।

कुसुमपाल ने सोचा कि, यदि विवाह-तिथि तक इनने सब प्रवन्ध करलिया तब तो ठीक ही है, नहीं तो मै शीघ्रता से प्रवन्ध करा ही दूँगा। इस प्रकार सोच कर, उसने धन्ना से अधिक कुछ नहीं कहा। समय पाकर, धन्ना नगर के बाहर आया। नगर के बाहर आकर उसने चिन्तामणि सामने रख कर यह इच्छा की, कि अमुक स्थान पर धन धान्य एवं विवाह-सामग्री से भरा हुआ एक महल तैयार हो जावे। धन्ना की यह इच्छा पूर्ण होने में देर न लगी। धन्ना के देखते ही देखते महल खड़ा हो गया, जो धन धान्य तथा विवाह-सामग्री से परिपूर्ण था। धन्ना ने, चिन्तामणि अपने पास रख ली। फिर वह उस चिन्तामणि के

प्रभाव से निर्मित महल मे आया । महल की रचना तथा उसमें प्रस्तुत सामग्री देख कर, धन्ना बहुत ही प्रसन्न हुआ थोड़ी ही देर में धन्ना के महल की बात सारे नगर में फैल गई । कुसुमपाल सेठ को भी यह बात मालूम हुई । वह बहुत प्रसन्न हुआ, और उसने यही कहा, कि जिसके प्रताप से सूखा हुआ बाग भी हरा हो गया, उसके लिये महल आदि बन जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

राजगृह नगर में धन्ना के अनेक मित्र होगये थे । कहावत ही है कि —

नम्रत्वेनोन्नमन्तः, परगुण कथनैः स्वान्गुणान्ख्यापयन्तः
स्वार्थान्सम्पादयन्तो, विततप्रियतरा रम्भयत्नाः परार्थे ।
क्षान्त्यैवाक्षेप रूक्षा, क्षरमुखर मुखान्दुर्जनान्दूषयन्तः
सन्तः साश्चर्यचर्या, जगति बहुमताः, कस्यनाभ्यर्चनीयाः ॥

अर्थात्—जो नम्रता से ऊँचे होते हैं, दूसरे के गुणों का वर्णन करके अपने गुण प्रसिद्ध कर लेते हैं, हृदय से पराया भला करने में लग कर अपना भी मतलब बना लेते हैं, और निन्दा करने वाले दुष्टों को अपनी क्षमाशीलता से ही दूषित करते रहते हैं, ऐसे आश्चर्यकारी आचरण वाले सभी के माननीय श्रेष्ठ लोग संसार में किसके पूजनीय नहीं होते ?

इसके अनुसार धन्ना के बहुत से मित्र थे । धन्ना ने उन मित्रों के यहाँ की स्त्रियों में से किसी को माता किसी को बहन और

किसी को भौजाई भुआ आदि बना लिया था। इसलिये उसके घर में विवाह के मंगल गीत भी गाये जाने लगे, तथा विवाह-विषयक तैयारी भी होने लगी। नियत तिथि पर धन्ना और कुसुमश्री का आपस में विवाह हुआ। धन्ना ने अपने विवाहोपलक्ष्य में राजगृह नरेश श्रेणिक और राजगृह के प्रधान राजपुत्र अभयकुमार आदि को आमन्त्रित करके उनका भी सत्कार किया। इस प्रकार धूम धाम पूर्वक धन्ना और कुसुमश्री का विवाहोत्सव समाप्त हुआ। पति पत्नी आनन्द पूर्वक रहने लगे।

कुछ दिन पश्चात धन्ना ने विचार किया, कि चिन्तामणि की सहायता से मैंने तात्कालिक कार्य कर लिया. लेकिन मुझे सर्वथा चिन्तामणि के सहारे ही न हो जाना चाहिए. किन्तु उद्योग करना चाहिये। चिन्तामणि के सहारे अकर्मण्य बन बैठना, मनुष्यता को कलङ्कित करना है। धन्ना इस प्रकार कोई उद्योग करने के विचार में था, इसी बीच एक घटना हो गई. जिसके कारण वह राजगृह का प्रधान मन्त्री बन गया।

उज्जैन के राजा चन्ड प्रद्योतन ने, मगध के राजा श्रेणिक को अधीन करने के लिए चढ़ाई की थी। राजा श्रेणिक के पुत्र अभय कुमार—जो श्रेणिक का प्रधान मन्त्री भी था—ने चन्ड प्रद्योतन के हृदय में ऐसा भ्रम उत्पन्न कर दिया, और उसे ऐसा धोखे में डाला, कि जिससे वह युद्ध से पहले ही उज्जैन भाग गया। जब

उसको अभयकुमार द्वारा दिया गया धोखा मालूम हुआ, तब उसने निश्चय किया, कि किसी न किसी तरह अभयकुमार से बदला लेना चाहिए। अन्त में उसने कुछ वेश्याओं की सहायता से, छल पूर्वक अभयकुमार को उज्जैन पकड़ मंगवाया, और उसे अपने यहाँ रखा।

अभयकुमार के क़बजे होने से श्रेणिक बहुत दुःखी हुआ, फिर भी वह स्थानापन्न प्रधान द्वारा राज कार्य चलाता रहा। इसी बीच में, राजा श्रेणिक का सिंचानक नाम का सुलक्षण हाथी मस्त होकर स्थान में छूट गया। उस हाथी ने सारे नगर में धूम मचा दी। कई मनुष्य भी उस मस्त हाथी द्वारा मारे गये। राजा श्रेणिक को, हाथी बिगड़ने और उसके द्वारा भयङ्कर उत्पात होने की सूचना मिली। वह अभयकुमार का स्मरण करके इस विचार से दुःखी हुआ, कि आज यदि अभयकुमार होता तो वह अवश्य ही किसी न किसी उपाय से हाथी को वश कर लेता। सिंचानक हाथी, सुलक्षण है। यदि प्रजा की रक्षा के लिए उसे मरवा डालता हूँ तो यह भी ठीक न होगा, और उसके द्वारा लोगों को मरने देना भी ठीक नहीं है। इसलिए किसी भी तरह सिंचानक हाथी वश हो जावे तो अच्छा!

राजा श्रेणिक ने नगर में यह घोषणा करा दी, कि जो व्यक्ति सिंचानक हाथी को वश करेगा, वह राजा द्वारा सम्मानित एवं

-पुरस्कृत होगा। राजा की यह घोषणा धन्ना ने भी सुनी। धन्ना नाग दमनी विद्या जानता था। उसने इस अवसर को अपने लिए उपयुक्त समझा। वह, मस्त सिंचानक हाथी के समीप आकर उसे वश करने का प्रयत्न करने लगा। उसने हाथी को छेड़ा। हाथी, धन्ना की ओर दौड़ा। धन्ना, हाथी का सामना बचाकर हाथी के पीछे हो गया, और फिर उसे हैरान करने लगा। इस प्रकार कुछ देर तक हाथी को हैरान करके, उसने हाथी को थका दिया। जब उसने देखा कि अब हाथी थक गया है, तब वह हाथी की पूँछ पकड़ कर उसके ऊपर चढ़ गया, और अंकुश की मार से वश करके उसे उसके स्थान पर लाकर बाँध दिया।

राजा श्रेणिक को सूचना मिली, कि कुसुमपाल सेठ के जमाई धन्ना ने सिंचानक हाथी को वश कर लिया है। यह समाचार सुनकर, उसे बहुत प्रसन्नता हुई। उसने, धन्ना को बुलवा कर उसका सम्मान किया। तथा उसे रत्नादि से पुरस्कृत किया। पश्चात् उससे कहा, कि—मैंने यह निश्चय किया था, कि मैं अपनी कन्या सोमश्री का विवाह उस पुरुष के साथ करूँगा, जो किसी प्रकार का महान् कार्य करेगा। सोमश्री का निश्चय भी यही है। आपने मस्त सिंचानक हाथी को वश किया है, जो साधारण नहीं, किन्तु महान् कार्य है। इसलिए मेरी इच्छा है, कि आप सोमश्री के साथ विवाह करना स्वीकार करें।

राजा के कथन के उत्तर में धन्ना ने उससे कहा, कि—आपने मुझ पर जो अनुग्रह किया तथा करना चाहते हैं, उसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। साथ ही यह निवेदन करता हूँ, कि मेरा विवाह कुसुमपाल सेठ की पुत्री के साथ हो चुका है। इसके सिवा मेरे सम्बन्ध में कुसुमपाल भी कुछ नहीं जानते, और आपको भी यह मालूम नहीं है कि मैं कहाँ का रहने वाला हूँ, मेरी जात पाँत क्या है, तथा मेरे में क्या गुण अवगुण हैं। इसलिए आप अपने प्रस्ताव के विषय में पुन. विचार कर लीजिये, तथा राजकुमार आदि से भी सम्मति ले लीजिये।

राजा श्रेणिक ने अपनी रानियों से, सोमश्री से तथा अन्य हितैषियों से सम्मति ली, और अन्त में धन्ना के साथ सोमश्री का विवाह कर दिया। धन्ना, कुसुमश्री एवं सोमश्री के साथ आनन्द पूर्वक रहने लगा। राजा श्रेणिक, समय समय पर राज कार्य में भी धन्ना से सम्मति की सहायता लिया करता, तथा धन्ना भी ऐसे अवसरों पर अपनी तीव्र बुद्धि का परिचय दिया करता।

अभयकुमार उज्जैन में रुका हुवा है,यह बात राजगृह नगर के लोगों को ज्ञात हो ही चुकी थी। इसलिए वहीं रहनेवाले एक धूर्त्त ने, अभयकुमार की अनुपस्थिति से लाभ उठाने का विचार किया। उसने सोचा, कि यहां पर अभयकुमार तो है ही नहीं जो मेरी धूर्त्तता पकड़ सके, इसलिए मुझे अपनी धूर्त्तता द्वारा

गोभद्र सेठ से द्रव्य प्राप्त करना चाहिए। गोभद्र, सेठ राजगृह का ही रहने वाला एक धनिक तथा प्रतिष्ठित सेठ था। उस धूर्त ने, गोभद्र को ही अपनी धूर्त्तता के जाल में फँसाने का निश्चय किया। इसके लिए उसने, कुछ प्रतिष्ठित कहलाने वाले लोगों को प्रलोभन देकर अपने सहायक भी बना लिये।

यह सब करके धूर्त्त ने, अपनी एक आँख निकलवा डाली। पश्चात उसने एक दुकान खोली, और स्वयं उस दुकान का मालिक सेठ बना। कुछ दिन तक ऐसा करके वह धूर्त्त, एक दिन अवसर देखकर, दो चार नौकरो को साथ ले गोभद्र सेठ की दुकान पर गया। गोभद्र सेठ ने उसे भला आदमी जान उसका स्वागत सत्कार किया, और अपनी दुकान पर बैठाकर उससे उसका परिचय पूछा। वह धूर्त्त कहने लगा, कि क्या आप मुझे नहीं पहचानते? भूल गये? मैं, अमुक तिथि को आपके पास आया था। मुझे उस समय रुपयो की आवश्यकता थी, इसलिए मैं आपके यहां मेरी एक आंख बन्धक (गिरवी) रखकर इतना रुपया ले गया था। अब मेरे पास रुपया आ गया है। इसलिए मैं आपका रुपया आपको देकर, मेरी जो एक आंख आपके यहां बन्धक है वह लेने के लिए आया हूँ। आप अपना रुपया लीजिये, और मेरी आँख मुझे वापिस दे दीजिये।

धूर्त्त का कथन सुन कर, गोभद्र सेठ आश्चर्य में पड़ गया।

वह कुछ निश्चय नहीं कर सका, कि यह क्या मामला है ? उसने धूर्त से कहा कि आप क्या कह रहे हैं ? मैं आपको जानता भी नहीं, न मुझे यही स्मरण होता है कि आप कभी मेरे यहाँ आये थे। इसी प्रकार मैंने कभी किसी की आँख भी बन्धक नहीं रखी, न आँख बन्धक रखी ही जा सकती है।

गोभद्र सेठ के यह कहते ही, धूर्त चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा कि बेईमानी करते हो। मैंने तुम्हारे यहाँ अमुक-अमुक के सामने अपनी आँख बन्धक रखी थी, फिर भी इन्कार करते हो। देखो मैं अभी उन लोगों को बुलाता हूँ, जो आँख बन्धक रखने के समय साक्षी हैं। उनके आने पर सबको मालूम हो जावेगा, कि तुम कैसे बेईमान हो, फिर भी किस तरह के साहूकार बने बैठे हो।

धूर्त ने अपने नौकरों को भेज कर उन लोगों को साक्षी देने के लिए बुलाया, जिन्हें उसने पहले से ही प्रलोभन देकर साक्षी देने के लिए तैयार कर लिया था। उन लोगों ने भी आकर गोभद्र सेठ से यही कहा कि हम लोगो के सामने ही इन सेठ ने अपनी एक आँख इतने रुपयों में आपके पास बन्धक रखी थी। जो प्रतिष्ठित माने जाते थे उन लोगों की साक्षी सुन कर, गोभद्र सेठ हक्का बक्का रह गया, उसने समझ लिया कि यह मेरे विरुद्ध षड्यन्त्र रचा गया है, फिर भी प्रतिष्ठा को धक्का न लगे इस उद्देश्य से उसने उन साक्षी-दाताओं से कहा कि—मैंने न तो आँख

बन्धक रखी ही हैं, न आँख बन्धक रखी ही जा सकती है। इस पर भी आप लोग कहते हैं, इसलिये मैं इनको आप लोग कहें उतना रुपया दे दूँ! परन्तु आँख बन्धक रखी जाने के नाम पर मैं कुछ नहीं दे सकता।

धूर्त ने सोचा, कि गोभद्र सेठ कुछ नम्र तो हुआ ही है, इसलिए अब इससे मनमाना धन लेकर ही इसका पीछा छोड़ना चाहिए। इस तरह सोचकर वह जोर जोर से चिल्लाने लगा, तथा झगड़ा करने लगा। होते-होते यह मामला राजा श्रेणिक के सामने गया। राजा श्रेणिक ने, वादी प्रतिवादी और साक्षियों का कथन सुना। वह भी असमंजस में पड़कर विचार करने लगा, कि इस मामले का निर्णय किस तरह किया जावे! एक ओर विचारता हूँ, तो आँख बन्धक रखने की न तो प्रथा ही है, न बन्धक रखी ही जा सकती है। और दूसरी ओर देखता हूँ, तो प्रतिष्ठित माने जाने वाले लोग यह साक्षी दे रहे हैं, कि हमारे सामने आँख इतने रुपयों में बन्धक रखी गई थी। ऐसी दशा में इस विषयक क्या निर्णय दिया जा सके!

राजा विचार में पड़ा हुआ था, उसी समय वहाँ धन्ना आ गया। राजा ने धन्ना को सब मामला समझा कर उससे पूछा, कि इस झगड़े का निर्णय किस तरह करना चाहिए? धन्ना समझ गया, कि यह झगड़ा करने वाला धूर्त है। उसने राजा से कहा,

कि—ऐसे छोटे छोटे झगड़ों में आप मस्तक लगाने का कष्ट क्यों किया करते हैं? ऐसे मामले कर्मचारियों को सौंप देने चाहिएँ। आप इस मामले में अपना मस्तक मत लगाइये, किन्तु यह झगड़ा मुझे सौंप दीजिये। मैं इसका निर्णय कर दूँगा। धन्ना का कथन मानकर, राजा ने उस झगड़े के निर्णय का भार धन्ना पर डाल दिया। धन्ना ने वादी धूर्त्त से कहा, कि—कल तुम्हारे मामले का निर्णय प्रतिवादी गोभद्र सेठ की दुकान पर किया जावेगा, अतः अमुक समय वहाँ उपस्थित रहो।

दूसरे दिन, धन्ना नियत समय से पहले ही गोभद्र सेठ की दूकान पर पहुँच गया। उसने गोभद्र सेठ के एक मुनीम को पास बुलाकर उसे कुछ सिखा पढ़ा दिया, और दूकान पर बैठा दिया। वादी धूर्त्त के आने पर धन्ना ने इधर उधर की बातें करके गोभद्र से कहा, कि—वादी की आँख तुम्हारे यहाँ बन्धक होने की बात तुम्हारे स्मरण में तो नहीं है, परन्तु तुम अपने मुनीमों से तो पूछो! गोभद्र ने उत्तर दिया, कि—मैं अपने मुनीमों को आपके सामने बुलाये देता हूँ, उन से आप ही पूछ लीजिये। यह कह कर, गोभद्र ने अपने सब मुनीमों को धन्ना के सामने बुलाया। धन्ना ने गोभद्र के मुनीमों से प्रश्न किया, कि—वादी की आँख सेठ के यहाँ बन्धक होने की बात तुम्हारी जाण में है? धन्ना के प्रश्न के उत्तर में जिस मुनीम को धन्ना ने पहले से ही समझा रखा था वह मुनीम बोला, कि—हाँ, इनकी एक आँख अमुक तिथि को इतने

रुपये में बन्धक रखी गई है, जिसका वहियों में जमा खर्च भी है! धन्ना ने उस मुनीम से कहा, कि—तुम अब तक कहाँ गये थे जो यह बात इतनी बढ़ी? मुनीम ने उत्तर दिया, कि—मैं बाहर चला गया था। धन्ना ने कहा, कि—जो हुआ सो हुआ, अब तुम इनसे रुपये लेकर इन्हे इनकी आँख वापस कर दो। मुनीम ने उत्तर दिया, कि—अवश्य, लेकिन हमारे यहाँ केवल इन्हीं की आंख बन्धक नहीं है, किन्तु सैकड़ों हजारों आंखें बन्धक हैं। इसलिए इनकी आंख कौन-सी है, यह पहचान मे आना कठिन है। ऐसे अवसरों के लिए हमनें यह मार्ग निकाल रखा है, कि जिसकी आंख पहचान मे न आवे उसकी दूसरी आंख लेकर नाप तौल ली जावे, और जो आंख नाप तौल मे बराबर ठहरे, वह उसी की आंख है, यह मान कर वह बराबर ठहरी हुई आंख दे दी जावे। इन सेठजी की आंख भी पहचान मे नहीं आती है, इसलिए इनकी यह एक आंख निकलवा दीजिये, जिसमे मैं इस आंख के बराबर जो आंख हो वह इन्हे ला दूँ, और इनसे रुपये ले लूँ।

मुनीम की बात का धन्ना ने तो समर्थन किया, परन्तु मुनीम का कथन सुन कर वह धूर्त्त चकराया। वह कहने लगा, कि—मेरी आंख के साथ मेरे नाम की चिट्ठी रख दी गई थी, फिर पहचान में कैसे नहीं आती। मुनीम ने उत्तर दिया, कि—जिस आंख के साथ की चिट्ठी खो जाती है, उसी के सम्बन्ध में तो

ऐसा झगड़ा ही पड़ता है ! आपकी आंख के साथ की—तथा और भी अनेक आंखों के साथ की चिट्ठियां खो गई हैं। आप अपनी यह आंख दीजिये, इसके बराबर जो आंख ठहरेगी, वह आपकी है यह मानकर आपकी आंख निकाल लाऊँगा।

धूर्त, बहानेबाजी करने लगा। धन्ना ने उससे कहा, कि—मुनीम का कहना ठीक है। तुम अपनी आंख दे दो, जिससे यह तुम्हारी आंख ले आवे। ऐसा करने में हर्ज क्या है! धन्ना को भी मुनीम की बात का समर्थन करते देखकर, धूर्त्त घबराया। वह सोचने लगा, कि मैंने गोभद्र को ठगने के लिए अपनी एक आंख तो निकलवाई ही, लेकिन यहां तो दूसरी आंख निकाल कर अन्धा बन जाने का ही अवसर आया है। इस तरह सोचकर वह भागने के लिए मार्ग देखने लगा, परन्तु धन्ना की पैनी दृष्टि से बचकर भाग न सका। धन्ना उसका विचार ताड़ गया, इसलिए उसने सिपाहियों को आज्ञा दी, कि—इस धूर्त्त को और इसके सहायकों को पकड़ लो। धन्ना की आज्ञानुसार, सिपाहियों ने उस धूर्त्त तथा उसके सहायक साक्षी दाताओं आदि को पकड़ लिया।

उन धूर्त्तों को पकड़ कर, धन्ना ने दण्ड तथा भेदनीति की सहायता से षडयन्त्र का सब हाल जान लिया, और उन लोगों से अपराध भी स्वीकार करा लिया। यह करके, उन सब धूर्त्तों को राजा के सन्मुख उपस्थित किया, और राजा को उनका

सारा षड्यन्त्र एवं उस सम्बन्धी समस्त कार्यवाही कह सुनाई। धन्ना का सब कथन सुन कर, तथा अपराधियों को अपराध स्वीकार करते देखकर, राजा ने धन्ना से अपराधियों के लिए दण्डव्यवस्था करने को कहा। धन्ना, अपराधियों से पहले ही बातचीत कर चुका था; इसलिए उसने राजा से कहा, कि—आप इन लोगों को इस बार क्षमा कर दीजिये। ये लोग वचन देते हैं, कि भविष्य में हम अपराध न करेंगे। इस वचन के विरुद्ध इन लोगों ने यदि कभी अपराध किया, तो उस दशा में इन्हे इस अपराध का भी दण्ड दिया जा सकेगा। इसके सिवा, यह एक आंख वाला अपराधी तो अपराध करने से पहले ही अपनी एक आंख निकलवा कर जन्म भर के लिए दण्ड पा चुका है। एक आंख न होने के कारण, यह भविष्य में पहचाना भी जल्दी जा सकेगा। इसलिए इस बार तो इन लोगो को क्षमा ही कर दीजिये। हां इन पर यह प्रतिबन्ध अवश्य लगा दीजिये; कि ये लोग राजगृह नगर के बाहर न जाया करें, और अपनी उपस्थिति की सूचना यहां नित्य किया करें।

धन्ना का कथन स्वीकार करके, राजा ने अभियुक्तो पर धन्ना के कथनानुसार प्रतिबन्ध लगा कर, उन्हे मुक्त कर दिया। साथ ही, धन्ना के बुद्धि कौशल्य से प्रसन्न हो कर, राजा ने धन्ना को अपना प्रधान मन्त्री बनाया। धन्ना, राजा श्रेणिक का प्रधान मन्त्री हो कर राजकार्य करने लगा।

धन्ना की कृपा से स्वयं को धूर्त्तों के कपट जाल से मुक्त पाकर, गोभद्र सेठ बहुत ही आनन्दित हुआ। वह, धन्ना का आभार मानकर उसकी प्रशन्सा करने लगा। पश्चात् उसने सोचा, कि मैं अपनी पुत्री सुभद्रा के लिये वर की खोज में हूँ; लेकिन सुभद्रा के लिये धन्ना से अच्छा वर दूसरा कौन हो सकता है! धन्ना, बुद्धिमान और वास्तविकता का पता लगाने में कैसा चतुर है, यह बात तो मेरे अनुभव की ही है। यदि धन्ना न होता, तो मेरे लिये उन धूर्त्तों के षड्यन्त्र से छूटना बहुत ही कठिन था, और उस दशा में मुझे धन की ओर से भी हानि उठानी पड़ती, तथा मेरी प्रतिष्ठा को भी बहुत धक्का लगता। इस प्रकार धन्ना बुद्धिमान भी है, और पराक्रमी भी है। मस्त सिंचानक हाथी को कोई वश न कर सका था, परन्तु धन्ना ने उसको वश कर लिया। धन्ना का पुण्य-प्रभाव तो कुसुमपाल सेठ का सूखा हुआ बाग हरा होना बताता ही है। धन्ना युवक तथा सुन्दर भी है। इस प्रकार प्रत्येक दृष्टि से, सुभद्रा के लिये धन्ना योग्य वर है। रही कुल जाति की बात, सो इस विषय में मुझे इसलिये कुछ विचारने की आवश्यकता नहीं है, कि कुसुमपाल सेठ और राजा श्रेणिक ने अपनी अपनी कन्या का विवाह धन्ना के साथ किया है। मुझे, इस सम्बन्ध मे सुभद्रा शालिभद्र एवं उनकी माता आदि की सम्मति लेकर यह जानना चाहिये, कि उनका क्या विचार है।

इस तरह सोच कर, गोभद्र ने अपना विचार अपनी पत्नी भद्रा, अपने पुत्र शालिभद्र, अपनी पुत्री सुभद्रा एवं अपनी पुत्र-वधुओं आदि के सन्मुख प्रकट किया। सभी लोगों ने, गोभद्र के विचार का समर्थन किया। सुभद्रा भी, पिता का विचार सुनकर बहुत प्रसन्न हुई। उसने भी धन्ना के साथ स्वयं का विवाह होने में प्रसन्नता प्रकट की। सब लोगों की सम्मति एवं स्वीकृति लेकर, गोभद्र सेठ धन्ना के पास गया। उसने धन्ना का उपकार आभार मानकर, उसके सन्मुख सुभद्रा के साथ विवाह करने का प्रस्ताव रखा। धन्ना ने पहले तो आनाकानी की, परन्तु अन्त में सुभद्रा की सुशीलता एवं उसके गुणों से प्रसन्न होकर गोभद्र का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। सुभद्रा के साथ धन्ना का विवाह हुआ। धन्ना, तीन पत्नियों का स्वामी हुआ। वह अपनी तीनों पत्नियों का समान आदर करता, तीनों के साथ समान व्यवहार रखता, और तीनों ही को प्रसन्नता देता। धन्ना की तीनों स्त्रियाँ भी आपस में किसी प्रकार का भेद भाव न रखतीं, किन्तु प्रेम पूर्वक रहतीं।

राजा श्रेणिक एवं राजगृह के निवासी लोग, धन्ना के कार्य से सन्तुष्ट थे। सब को धन्ना पर पूर्ण विश्वास हो गया था। धन्ना भी दिन रात राजा तथा प्रजा के हित का ही प्रयत्न करता रहता। राजकार्य का उस पर जो भार था, उसे वहन करने और अपने कर्त्तव्य का पालन करने में वह न तो त्रुटि करता न आलस्य

हो। वह नियमित रूप से अपना कार्य करके, सन्ध्या के समय वायु सेवनार्थ वन में जाया करता। उसने नगर से कुछ दूर वन में एक महल बनवाया था, जहाँ जाकर वह सन्ध्या के समय बैठा करता, वन के दृश्य देखा करता, और आत्मचिन्तन भी किया करता। इस प्रकार वह सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगा।
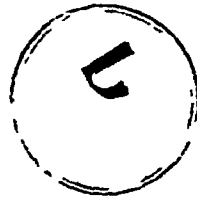
पुनः गृहकलह

संसार के मनुष्यों का स्वभाव दो तरह का होता है, अच्छा और बुरा। अच्छे स्वभाववाले लोग सज्जन कहलाते हैं, और बुरे स्वभाववाले लोग दुर्जन कहलाते हैं। वैसे तो अपने स्वभाव को कोई भी आदमी बुरा नहीं मानता, अपने स्वभाव को सभी लोग अच्छा समझते हैं, और अपने से प्रतिकूल व्यक्ति को बुरे स्वभाव का कहते हैं। परन्तु वास्तव में कोई भी व्यक्ति अपने लिए यह निर्णय नहीं कर सकता, कि मैं ही अच्छे स्वभाव का हूँ। जो लोग स्वयं ही अपने स्वभाव के विषय में यह निर्णय कर लेते हैं

कि "मैं अच्छे स्वभाव का हूँ या मेरा स्वभाव अच्छा है" वे लोग अपने स्वभाव में रही हुई बुराई को देख ही नहीं पाते। ऐसे व्यक्ति की बुद्धि पर सदा अहंभाव का आवरण रहता है, इसलिए उसके स्वभाव में रही हुई बुराई का दूर होना बहुत कठिन है। बल्कि ऐसे व्यक्ति के स्वभाव में, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से और बुराई आ जावेगी। इसके विरुद्ध जो व्यक्ति अपने स्वभाव में रही हुई बुराई समझता है, या अपने स्वभाव को बुरा मानता है, उस व्यक्ति के स्वभाव में पहले तो बुराई होगी ही नहीं, और यदि कुछ बुराई होगी भी तो वह दूर हो सकेगी। इसलिए मनुष्य को यह न समझना चाहिए, कि मेरा स्वभाव अच्छा है और उसमें बुराई नहीं है।

इस कथन पर से यह प्रश्न होता है, कि फिर यह कैसे जाना जावे कि यह व्यक्ति सज्जन है या दुर्जन? इसका उत्तर यह है कि विद्वानों ने सज्जनों और दुर्जनों के कुछ ऐसे लक्षण बताये हैं, जिनके द्वारा सज्जन और दुर्जन की परीक्षा सहज ही की जा सकती है। दोनों तरह के लोग जिन लक्षणों से पहचाने जा सकते हैं, उन लक्षणों में से किसी एक तरह के मनुष्यों की पहचान के लक्षण बताना ही पर्याप्त होगा। एक तरह के मनुष्य के लक्षण जान लेने पर यह सहज ही जाना जा सकेगा, कि जिनमें ये लक्षण नहीं हैं, वे लोग दूसरी तरह के हैं। इसके लिए हम सज्जनों के लक्षण बताते हैं। सज्जनों के लक्षण बताने के लिए कहा गया है—

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा
सदसि वाक्पटुता युधिविक्रमः ।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ
प्रकृति सिद्धं मिदं हि महात्मनाम ॥

अर्थात्—विपत्ति के समय धैर्य, ऐश्वर्यकाल में क्षमा, सभा में वाक्य-चातुरी, संग्राम में पराक्रम, सुयश में अभिरुचि और शास्त्रों में व्यसन, ये गुण महा पुरुषों में स्वभाव से ही होते हैं।

जिनमें ये, और ऐसे ही दूसरे गुण हैं, वे लोग तो सज्जन हैं, और जिनमें इन गुणों मे विपरीत लक्षण हैं, वे दुर्जन हैं। दुर्जनों और सज्जनों में क्या तथा कैसा अन्तर होता है, इसके लिए तुलसीदासजी ने कहा है—

मिलत एक दारुण दुःख देहीं ।
विछुरत एक प्राण हरि लेहीं ॥

अर्थात्—एक तो ऐमे होते हैं कि जो मिलकर दुःख देते हैं, और एक ऐसे होते है कि जिनका वियोग प्राण लेने वाला हो जाता है।

तुलसीदास जी ने, इस चौपाई में सज्जनों और दुर्जनों की अन्तिम तथा सब से बड़ी पहचान बता दी है। उनका कहना है, कि दुर्जनों का संयोग दुःखदायी होता है लेकिन वियोग सुखदायी होता है, और सज्जनों का संयोग तो बहुत सुखदायी होता है,

लेकिन वियोग ऐसा दुखदायी होता है कि प्राण तक चले जाते हैं।

इस कथन का सारांश यह है, कि जिनके मिलने से सुख एवं विरह से दुःख हो वे तो सज्जन हैं। और जिनके मिलने से दुःख तथा विरह से सुख हो वे दुर्जन हैं। तुलसीदासजी द्वारा बताई गई इस पहचान की कसौटी पर धन्ना एवं उसके भाइयों को भी कस कर देखा जाता है और इस निर्णय पर पहुँचा जाता है, कि चारों भाइयों में से किसे तो सज्जन कहा जावे, और किसे दुर्जन। इसके लिए पहले धन्ना के गुण स्वभाव एवं कृत्य पर दृष्टि पात किया जाता है। धन्ना समस्त कला-कुशल लेने के साथ ही विनम्र था। वह किसी से द्वेष नहीं करता था। उसकी भावना किसी को दुःख देने की नहीं रहती थी, किन्तु सब को सुखी करने की रहती थी, और इसके लिए वह बड़े से बड़ा त्याग करने तक को तैयार रहता था। बल्कि जो लोग उससे द्वेष करते थे, जो उसकी उन्नति से कुढ़ते थे, और जो उसका विनाश तक चाहते थे, धन्ना ने उन लोगों को भी सुखी बनाने का ही प्रयत्न किया, तथा उनके लिए सुख त्याग कर स्वयं को सङ्कट में डाल लिया। धन्ना के तीनों भाई धन्ना के कट्टर शत्रु बन गये थे, लेकिन धन्ना ने तो उनका भी हित ही किया, और उन्हें सुखी करने के लिए ही पुरपईठान तथा उज्जैन से खाली हाथ निकल कर उसने सब

सम्पत्ति भाइयों के लिए छोड़ दी। इस लिए धन्ना को तो सज्जन ही कहा जावेगा, लेकिन धन्ना के जो तीनों भाई निष्कारण ही धन्ना को अपना शत्रु मानते थे, धन्ना द्वारा वार-वार उपकृत होने पर भी कृतघ्न बन कर उसका अहित ही करना चाहते थे। और बार-बार कलह मचाया करते थे, उन्हें सज्जन कदापि नहीं कहा जा सकता। यद्यपि चारो भाई एक ही माता-पिता से उत्पन्न हुवे थे, फिर भी इस तरह का अन्तर क्यों था, इसके लिए तुलसीदासजी की यह चौपाई देना पर्याप्त होगा, कि—

उपजहिं एक संग जल माहीं।
जलज जोंक जिमि गुण विलगाहीं॥

अर्थात्—कमल और जोक की उत्पत्ति एक ही जल से एक ही साथ होने पर भी दोनों के गुणों में बहुत भिन्नता होती है।

धन्ना, आनन्द पूर्वक राजगृह नगर में रहता था। यद्यपि उसके पास चिन्तामणि रत्न था, फिर भी उसने उस चिन्तामणि से केवल एक बार-विवाह के समय ही सहायता ली थी, बाद में कभी सहायता नहीं ली। उसने राजगृह नगर में जो सम्पत्ति तथा प्रतिष्ठा प्राप्त की, वह अपनी बुद्धि अपने पुरुषार्थ एवं कला-कौशल द्वारा ही। इन्हीं के बल से, वह राजगृह में सर्वप्रिय बना हुआ था।

एक दिन सन्ध्या के समय, धन्ना अपने वन स्थित महल में बैठा हुआ वन की छटा का निरीक्षण कर रहा था। सहसा उसकी

दृष्टि चार स्त्री एवं चार पुरुषों पर पड़ी, जो वन की ओर से नगर की ओर आ रहे थे। उन स्त्री-पुरुषों के शरीर, दुर्बल रुक्ष तथा कान्तिहीन थे। उनकी आकृति इस बात का परिचय देती थी, कि ये लोग विपद्ग्रस्त हैं। उनके शरीर पर वस्त्र भी फटे मैले थे, और मलिनता भी बहुत छाई हुई थी। उन लोगों को देख कर धन्ना ने सोचा कि, ये लोग ग्रामीण जान पड़ते हैं, जो संकट के कारण ग्राम्य-जीवन त्याग नगर की ओर आ रहे हैं। मैं यहां का प्रधान हूँ, अतः यह मेरा साधारण कर्त्तव्य है, कि मैं इन लोगों का दु:ख जान कर उसे मिटाने का प्रयत्न करूँ।

इस प्रकार विचार कर, धन्ना उन लोगों के पास जाने को चल दिया। धन्ना जैसे-जैसे उन लोगों के समीप पहुँचता था, वे लोग उसे परिचित से जान पड़ने लगे। बिलकुल समीप पहुँचकर उसने उन लोगों को पहचान लिया, कि ये तो मेरे माता-पिता तथा भाई-भौजाई हैं। वह सोचने लगा, कि मैं इन लोगों के पास इतनी सम्पत्ति छोड़ आया था, और मुर्दे की जांघ में से प्राप्त रत्न भी पिताजी को दे आया था, फिर ये लोग इस दशा को कैसे प्राप्त हुए! इस प्रकार सोचते हुए, धन्ना ने धनसार को प्रणाम किया। धनसार पहले तो राजसी वेशधारी अपरिचित व्यक्ति को प्रणाम करता देखकर चकित हुआ, परन्तु जब धन्ना ने अपना परिचय दिया, तब वह धन्ना के गले लग फूट-फूट कर रोने लगा।

धन्ना को देखकर, उसके हृदय का दुःख उमड़ पड़ा। धन्ना ने, धनसार को धैर्य देकर शान्त किया। पिता को शान्त करके, उस ने माता तथा भाई-भौजाइयों को भी प्रणाम किया उसको अपने भाइयों के पूर्वकृत्यों का किंचित् भी विचार नहीं हुआ, न उन कृत्यों के कारण उसने भाईयो से किसी प्रकार का भेद भाव ही किया।

सब से मिल कर धन्ना ने धनसार से कहा, कि—पिताजी, यहाँ के राजा ने अपनी पुत्री का विवाह आपके इस पुत्र के साथ किया है, तथा इस प्रकार यहाँ का राजा आपका सम्बन्धी है! इसलिये इस दीन-हीन दशा में आपका नगर में चलना ठीक न होगा। आप इस महल में ठहरिये, मैं सब प्रबन्ध करके आपको सम्मान पूर्वक नगर में ले चलूँगा। धनसार को इस प्रकार समझा कर, धन्ना ने उन सब को उसी वन मे बने हुए महल में ठहराया। पश्चात् नगर में जाकर, उसने उन सब के लिये वस्त्राभूषण आदि वन के महल मे भेजे, और फिर लोगों को यह ज्ञात किया, कि मेरे माता-पिता तथा भाई-भौजाई आ रहे है। थोड़ी देर में यह बात सारे नगर में फ़ैल गई। राजा ने भी सुना कि धन्ना के माता-पिता आ रहे हैं। उसने आज्ञा दी, कि जामाता के माता-पिता आदि को स्वागत-सम्मान पूर्वक नगर मे लाया जावे। नगर के लोग धन्ना से सन्तुष्ट थे ही, इसलिये बहुत से नागरिक भी धन्ना

के माता-पिता आदि का स्वागत करने के लिये उपस्थित हुए। सब को साथ लेकर, धन्ना वन में बने हुए महल मे गया। वह वहाँ से अपने पिता तथा भाइयों को हाथी पर, और माता एवं भौजाइयों को पालकी में बैठा कर उत्सवपूर्वक नगर मे घुमाकर अपने घर लाया।

धन्ना के माता-पिता और भाई-भौजाई, आनन्द पूर्वक धन्ना के यहां रहने लगे। धन्ना की तीनों पत्नियां, अपनी सासू तथा जेठानियो की प्रेम पूर्वक सेवा करतीं, और धन्ना अपने पिता तथा भाइयों की सेवा करता। उन लोगों को किसी प्रकार का कष्ट न हो, इस बात की धन्ना तथा उसकी पत्नियां बहुत सावधानी रखतीं। धन्ना की पत्नियों को अपनी जेठानियो से अपने जेठों के दुष्कृत्य का हाल ज्ञात भी हो गया, फिर भी उनके हृदय में किसी प्रकार का दुर्भाव नहीं आया, न उनने धन्ना को ही कभी अपने जेठो के विरुद्ध उभारा।

धन्ना ने, अपने माता-पिता और अपनी भोजाइयो की सम्मत्यानुसार अपने भाइयों को सम्मिलित न रख कर अलग रखना ही उचित समझा, जिसमें फिर किसी प्रकार का कलह न हो। इसके लिये उसने, अपने तीनों भाइयो के वास्ते अलग-अलग घर एवं खाने-पीने आदि की व्यवस्था करके उन्हे जुदा कर दिया। और व्यवसाय में भी लगा दिया। यह करके भी, धन्ना उनके सुख-दुःख का सदा ध्यान रखता, तथा उन्हे सुखी रखने का प्रयत्न

करता। उसके तीनो भाई, अपनी-अपनी पत्नी सहित अलग रहने लगे, लेकिन धन्ना ने अपने माता-पिता को अपने घर में ही रखा।

एक दिन धनसार ने धन्ना से कहा, कि—बेटा धन्ना, तूने मुझ से कभी यह तो पूछा ही नहीं कि उज्जैन से हमें क्यों निकलना पड़ा और हम लोगों की दुर्दशा क्यों हुई ! पिता के इस कथन के उत्तर मे धन्ना ने कहा, कि – पिताजी, जो बात हो चुकी, उसका जानना पूछना व्यर्थ है ! फिर भी यदि आप सुनावेंगे, तो मैं सुन लूँगा। धनसार बोला—अच्छा, मैं तुझे सुनाता हूँ, तू सुन।

धनसार कहने लगा, कि—हम लोगों को छोड़ कर तू चला आया, उसके पश्चात् राजा और प्रजा की ओर से तेरी खोज होने लगी। धीरे-धीरे सब लोगों को यह मालूम हो गया, कि धन्ना गृह-कलह के कारण गृह त्यागकर चला गया है। धन्ना के भाई धन्ना से द्वेष करते थे, और सदा कलह मचाये रहते थे। उनके दुःख से दुःखी होकर ही, धन्ना को गृह त्यागकर जाना पड़ा। यह जान कर राजा और प्रजा को तेरे वियोग से बहुत दुःख हुआ, तथा सब लोग तेरे भाईयों और उन्हीं के साथ मुझ से भी घृणा करने लगे। सब कोई, हमारी निन्दा तथा हमारा तिरस्कार करने लगे। इसलिए हमारे लिए उज्जैन में रहना कठिन हो गया। तब हम सब ने, उज्जैन त्याग कर अन्यत्र जाने का निश्चय किया, और उस निश्चय के अनुसार हम लोग घर की मूल्यवान सम्पत्ति साथ

लेकर उज्जैन से चल पड़े। जो रत्न तुझे मुर्दे की जांघ से मिले थे, वे रत्न भी हमारे साथ ही थे, लेकिन जो सम्पत्ति तेरे ही भाग्य से थी, वह तेरे भाइयों के पास कैसे रह सकती थी। कहावत ही है कि—

करतलगत मपि नश्यति यस्यतु भवितव्यता नास्ति।

अर्थात्—जो भाग्य में नहीं है, वह हाथ में आ कर भी नष्ट हो जाता है।

इसके अनुसार हम लोगों को मार्ग में चोर मिले, जिनने हमारे पास की सब सम्पत्ति छीन ली, और हमे उस दशा में डाल दिया, जिस दशा मे हम तेरे को वन में मिले थे। उन चोरों ने न तो हमारे शरीर पर पूरे वस्त्र ही रहने दिए, न हमारे पास कुछ खाने के लिए ही रहने दिया। हम लोग मजदूरी करके अपना पेट भरते हुए इधर-उधर भटकते फिरते थे। हमारे लिए कोई सहारा न था, परन्तु सद्भाग्य से यहाँ भी तू मिल गया, और हम सब उस संकट से मुक्त हुए। तेरे भाइयों का हृदय अब भी पल्टा होगा, ऐसा मुझे विश्वास नहीं है। इसलिए तूने उन लोगों को अलग करके अच्छा ही किया है। यदि ऐसा न करता, तो सम्भव था कि उन दुरात्माओं के साथ-साथ मुझ वृद्ध को भी किसी दिन फिर संकट में पड़ना पड़ता। उन लोगों के साथ मैंने बहुत कष्ट पाया। तेरे ऐसे योग्य एवं सद्भागी पुत्र का

पिता होकर भी मेरे को बार-बार महान् संकट में पड़ना पड़ा, इसका कारण यही है कि मैं उन दुष्टों के साथ रहा, और जो स्वयं ही दुःखी हैं, उसके साथ रहने वाले को सुख कहाँ! कहा ही है, कि—

ईर्ष्यी घृणी त्वसन्तुष्टः क्रोधनो नित्य शंकितः ।
पर भाग्यो पजीवी च षडेते दुःख भागिनः ॥

अर्थात्—ईर्ष्या करनेवाला, घृणा करनेवाला, सदा असन्तुष्ट रहने वाला, क्रोध करनेवाला, सन्देह में डूबा रहनेवाला, और दूसरे के भाग्य के सहारे जीने वाला ये छहों सदा दुखी रहते है।

तेरे भाई ऐसे ही हैं। इसी कारण वे स्वयं भी दुःखी रहते हैं, और उनके साथ रहनेवाले को भी दुःख भोगना पड़ता है।

अपना कथन समाप्त करते हुए, धनसार की आँखों से आँसू गिरने लगे। अपने पिता को सान्त्वना देते हुए धन्ना ने कहा—पिताजी, जो बात बीत चुकी उसके लिए खेद करना व्यर्थ ही है! आप बुद्धिमान होकर भी बीती हुई बात के लिए खेद करते हैं, यह तो बहुत ही आश्चर्य की बात है। मेरे भाई, आपकी तथा अन्य लोगों की दृष्टि में कैसे भी हों, और वे मेरे लिए कैसे ही भाव रखते हों, मैं तो अपने पर उनका उपकार ही मानता हूँ। मेरी उन्नति के कारणभूत वे ही लोग हैं। यदि उन लोगों की कृपा न

होती, तो मुझे कूप मंडूक की तरह पुरपइठान में ही जीवन बिताना पड़ता, अथवा उज्जैन में ही रहना पड़ता। भाइयों की कृपा से ही मैं यहाँ तक आ पाया हूँ, और प्रतिष्ठा प्राप्त कर सका हूँ।

इस प्रकार कह कर, धन्ना ने अपने पिता धनसार को सान्त्वना दी। अपनी पत्नी सहित धनसार, धन्ना के यहाँ आनन्द पूर्वक रहता, और समय-समय पर अपने तीनों पुत्रों की भी सम्हाल किया करता।

राजगृह में रहते हुए धन्ना के तीनों भाइयों को यह मालूम हुआ, कि धन्ना ने कुसुमपाल सेठ का सूखा बाग हरा कर दिया था, और उसकी पुत्री के साथ विवाह करने के लिए बात को बात में प्रचुर धन-सामग्री सहित महल बना लिया था। धन्ना जब राजगृह नगर मे आया था, तब उसके पास न तो कुछ था ही, न उसने किसी से किसी प्रकार की सहायता ही ली थी। फिर भी उसने बड़ी धूम-धाम के साथ विवाह किया था, तथा राजा को आमन्त्रित करके उनका भी आतिथ्य किया था। यह जानकर धन्ना के तीनों भाई आपस मे विचार करने लगे, कि धन्ना के पास ऐसी कोई वस्तु अवश्य है, जिसके प्रभाव से धन्ना यह सब कुछ कर सका है। अपने को पिता द्वारा यह जानने का प्रयत्न करना चाहिए, कि धन्ना के पास ऐसी प्रभावशाली कौन-सी वस्तु है!

इस प्रकार विचार कर, तीनों भाई धनसार के पास गये।

इधर-उधर की बातें करके तीनों ने धनसार से वह सब हाल कहा, जो उनने धन्ना के विषय में लोगों से सुना था। धन्ना के विषय में सुनी हुई बातें कह कर उन लोगो ने धनसार से कहा, कि—पिताजी, धन्ना के पास कोई ऐसी वस्तु अवश्य है, जिसके प्रभाव से धन्ना सूखा हुआ बाग हरा कर सका, और महल आदि की व्यवस्था कर सका। लेकिन जान पड़ता है, कि उसने वह चीज आपको नहीं बताई। आप उससे पूछिये तो सही।

धनसार अपने लड़कों की बातो में आ गया। उसने लड़कों की बात मानकर धन्ना से पूछना स्वीकार किया। अवसर पाकर उसने धन्ना से अपने तीनो लड़कों द्वारा कही गई बातें कहीं, और उससे पूछा, कि—तेरे पास ऐसी कौन-सी वस्तु है, जिसके प्रभाव से सूखा हुआ बाग भी हरा हो गया, तथा तूने बात की बात में महल बना लिया? पिता के इस प्रश्न के उत्तर में, धन्ना ने गंगा-देवी द्वारा स्वयं की परीक्षा ली जाने एवं चिन्तामणि रत्न प्राप्त होने की बात धनसार को सुनाई। धन्ना द्वारा वर्णित बातें सुन धनसार बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने सदाचारी धन्ना की प्रशंसा करके उससे कहा, कि—तू चिन्तामणि रत्न को बहुत सम्हाल कर रखना, और उससे अधिक सम्हाल उस शील-रत्न की करना, जिसके प्रभाव से यह चिन्तामणि रत्न प्राप्त हुआ है। इस चिन्तामणि से भी शील की शक्ति अधिक है। विद्वानों ने कहा है—

वन्हिस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणा -
न्मेरुः स्वल्प शिलायते मृगपतिः सद्यः कुरंगायते ।
व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूष वर्षायते
यस्यांगे ऽखिल लोक वल्लभ तंम शीलं समुन्मीलति ॥

अर्थात्—जिस पुरुष में समस्त जगत का कल्याण करने वाला शील है, उसके लिए अग्नि जल-सी, समुद्र छोटी नदी-सा, सुमेरु पर्वत छोटी-सी शिला-सा मालूम होता है। सिंह उसके आगे हरिण-सा हो जाता है। सर्प उसके लिए फूलों की माला-सा बन जाता है, और विष, अमृत के गुणोंवाला हो जाता है।

धनसार के तीनों लड़के, फिर एकदिन धनसार से मिले। उन्होंने धनसार से प्रश्न किया, कि—क्या आपने धन्ना से हमारे द्वारा कही गई बात के विषय में पूछा था? धनसार ने उत्तर दिया, कि—हाँ, मैंने पूछा था। धन्ना को गंगादेवी ने चिन्तामणि रत्न दिया है। चिन्तामणि की सहायता से ही उसने अपने विवाह के समय किसी से सहायता नहीं ली, और क्षणमात्र में महल तैयार करके धूमधाम से अपना विवाह किया। यह कहने के साथ ही, धनसार ने गंगादेवी द्वारा धन्ना के शील की परीक्षा ली जाने की बात भी अपने लड़कों से कही। धन्ना के पास चिन्तामणि रत्न है, यह जान कर धन्ना के तीनों भाई धनसार से कहने लगे, कि—हम सब पर विपत्ति पर विपत्ति आने का कारण घर से चिन्तामणि

रत्न का निकल जाना ही है। गंगादेवी ने, धन्ना के शील की परीक्षा करके उसे चिन्तामणि रत्न दिया, यह झूठी बात है। वास्तव में वह चिन्तामणि रत्न अपने घर का ही है। वह रत्न अपने पूर्वजों के समय से घर मे था, और इसी के प्रताप से अपने घर में ऋद्धि सम्पदा थी। आपने जब वह चिन्तामणि रत्न धन्ना को दे दिया, और इस तरह वह रत्न घर मे से निकल गया, तब घर में सम्पत्ति कैसे ठहर सकती थी। फिर तो सम्पत्ति का जाना और विपत्ति का आना स्वाभाविक ही है। हम लोग सोचा करते थे, कि इस तरह बार-बार विपत्ति क्यों आती है। हमको यह भी विचार होता था, कि घर में से कोई उत्कृष्ट रत्न निकल गया है, इसी से सम्पत्ति चली गई है। वह रहस्य आज मालूम हुआ, कि जिसके प्रभाव से घर मे सम्पत्ति थी, वह चिन्तामणि रत्न आपने धन्ना को दे दिया है। उस रत्न के प्रभाव से ही, धन्ना यशस्वी एवं प्रभावशाली हुआ है। यदि हम लोगों को भी वह रत्न मिल जावे, तो हम उससे भी अधिक सम्पत्ति शाली एवं यशस्वी बन सकते हैं। आपने अकेले धन्ना को वह रत्न देकर हम लोगों को संकट में डाला यह अच्छा तो नहीं किया, परन्तु जो होना था वह हुआ। अब आप धन्ना से चिन्तामणि रत्न हमें दिला दीजिये। धन्ना ने इतने दिनो तक वह रत्न अपने पास रख कर बहुत सम्पत्ति प्राप्त कर ली है, अब कुछ दिन हम लोग भी उस रत्न से लाभ लेना

चाहते हैं। इसलिए आप धन्ना को समझा कर, उससे चिन्तामणि रत्न हमें दिला दीजिये।

तीनों लड़कों की बातें सुन कर, धनसार को उनकी दुर्बुद्धि के कारण बहुत ही दुःख हुआ। वह सिर पर हाथ रख कर उन लोगों से कहने लगा, कि—तुम लोगों को ऐसी बातें कहते लज्जा भी नहीं आती! तुम्हारे लिए धन्ना ने घर त्याग दिया, उज्जैन की सब सम्पत्ति छोड़ दी, और यहाँ उसी की कृपा से सब तरह आनन्द पा रहे हो, फिर भी धन्ना के लिए तुम्हारे हृदय में ऐसे विचार! चिन्तामणि कोई साधारण रत्न नहीं है, जो वह धन्ना से तुम्हें दिला दिया जावे। शील की परीक्षा में उत्तीर्ण होने से मिला हुआ वह रत्न उसी व्यक्ति के पास रह सकता है, जिसमें शील है। तुम ऐसे पापी लोग, उस रत्न को पाने के अधिकारी नहीं हो सकते। धन्ना ही उस रत्न का अधिकारी है, और अधिकारी जान कर ही गंगादेवी ने वह रत्न उसे दिया है। इसलिए तुम लोग उस रत्न पर न ललचाओ, न इस रत्न के कारण अपने हृदय में धन्ना के प्रति दुर्भाव ही लाओ, किन्तु जिस तरह आनन्द से रहते हो उसी तरह रहो। फिर विपत्ति का आह्वान न करो।

यद्यपि धनसार ने अपने तीनों लड़कों को भली भाँति समझाया, लेकिन उन दुर्बुद्धियों को धनसार का कथन उचित न जान पड़ा। धनसार का कथन समाप्त होने पर वे लोग कहने लगे,

कि—पिताजी, आप तो सदा से ही धन्ना के पक्षपाती हैं और आपकी इस पक्षपात पूर्ण नीति का ही यह परिणाम है कि हम लोगों को बार-बार विपत्ति मे पड़ना पड़ा। अब भी आप धन्ना का जो पक्ष कर रहे है, उससे लाभ के बदले हानि ही है। हम आप से स्पष्ट कह देते हैं, कि अब हम धन्ना के पास चिन्तामणि कदापि न रहने देंगे। यह नहीं हो सकता, कि जिस पर हमारा भी अधिकार है उस चिन्तामणि द्वारा धन्ना तो आनन्द करे, और हम लोग कंगालों की भाँति उसके आश्रय में रहें। हमें इस प्रकार का जीवन बहुत दुःखदायी जान पड़ता है। नीतिकारों ने भी कहा है—

> वरं वने व्याघ्र गजेन्द्र सेवितं
> द्रुमालये पत्र फलाम्बु भोजनम् ।
> तृणानि शय्या परिधान वल्कलम्
> न बंधु मध्ये धन हीन जीवनम् ॥

अर्थात्—बाघ-सिंह वाले वन में वृक्ष के नीचे रहकर, पत्र और फल खाकर, पानी पीकर, घास पर सोकर और वृक्षों की छाल पहन कर चाहे जीवन व्यतीत करना अच्छा है, परन्तु धनहीन दशा में बन्धुओं के बीच जीवित रहना अच्छा नहीं।

इसके अनुसार, हम लोगों को, इस दशा मे रहना पसन्द नहीं है। यदि आप घर के घर में हम लोगों को धन्ना से चिन्तामणि दिला देंगे, तब तो वह रत्न घर में ही रहेगा, लेकिन यदि

आपने ऐसा न किया और चिन्तामणि के लिए हम लोगों को झगड़ा करना पड़ा तो वह चिन्तामणि धन्ना के पास भी न रहेगा न हमारे ही पास रहेगा। उसे राजा ले लेगा। इसलिए यही अच्छा है, कि आप धन्ना से हमे चिन्तामणि दिला दें, और झगड़ा का अवसर न आने दें। यदि आप हमारी बात न मानेंगे तो हम राजा से फरियाद करेंगे। चाहे राजा ही चिन्तामणि रत्न क्यों न ले लें, लेकिन धन्ना के पास तो हम लोग वह रत्न कदापि नहीं रहने दे सकते।

धनसार को इस प्रकार चेतावनी दे कर, तीनों भाई बकते-झकते चले गये। घर पहुँचने पर उन लोगों की पत्नियों ने पूछा, कि—आज आप इस प्रकार क्रुद्ध क्यों हैं? क्या किसी के साथ झगड़ा हुआ है? वे लोग कहने लगे, कि—और किस के साथ झगड़ा होना! पिताजी को तो धन्ना प्रिय है। उनने, पूर्वजों के समय से जो घर में था वह चिन्तामणि रत्न धन्ना को दे दिया, इस कारण धन्ना तो आनन्द करता है, और हम लोगों को बार-बार विपत्ति का सामना करना पड़ा है, तथा यहाँ उसके आश्रित रह कर जीवन बिताना पड़ रहा है। जिस पर हमारा भी अधिकार है, उस चिन्तामणि रत्न का स्वामी अकेला धन्ना रहे और हम लोग कष्ट पावें, बार-बार धन्ना के आश्रित रह कर अपमानित जीवन व्यतीत करें, यह कैसे हो सकता है। हम धन्ना के पास चिन्ता-मणि रत्न कदापि न रहने देंगे।

इस प्रकार तीनों भाई अपनी स्त्रियों के सामने भी बहुत चिल्लाये। उनकी स्त्रियां समझ गई, कि इन तीनों भाइयों में फिर कुमति आई है, और यह लोग फिर आपत्ति बुला रहे हैं। इनके लिये देवर ने दो २ बार सब सम्पत्ति त्यागी, परन्तु इन लोगों के भाग्य में तो कष्ट भोगना बदा है, ऐसी दशा में वह सम्पत्ति इनके पास कैसे रहती। यहाँ भी-इनके पूर्व-कृत्यों पर ध्यान न देकर—देवर इन को सब तरह का सुख दे रहे हैं, फिर भी इनके हृदय मे देवरजी के प्रति दुर्भावना भरी हुई है, और यहाँ भी यह लोग कलह करना चाहते हैं।

तीनों भाईयों की पत्नियों ने, आपस में अपने-अपने पति के कार्य एवं स्वभाव की समालोचना करके यह निश्चय किया, कि ये लोग देवरजी को किसी संकट में डाल दें इस से पहले ही देवरजी को सावधान कर देना चाहिये। इस प्रकार निश्चय करके, धन्ना की भौजाइयों ने धन्ना की पत्नियों को अपने पुरुषों में आई हुई दुर्भावना से परिचित किया, और उनसे कहा, कि—आप देवरजी से कह दीजिये कि वे सावधान रहें। धन्ना की पत्नियों ने, अपनी जेठानियों से जो कुछ सुना वह सब धन्ना से कह दिया। उन बातों को सुन कर धन्ना समझ गया, कि मेरे भाई मुझ से फिर द्वेष करने लगे हैं। उसने, अपनी स्त्रियों को किसी प्रकार की चिन्ता न करने का उपदेश दिया, और स्वयं यह सोचने लगा, कि मुझे क्या करना

चाहिये! वह अपना कर्त्तव्य तो विचारने लगा, लेकिन उसने अपने भाइयों के विरुद्ध न तो एक शब्द ही निकाला, न कुछ विचार ही किया। जैसे उसका यह नियम ही था कि—

अपि वहल दहन जाल मूर्ध्नि रिपुर्मे निरनारं धमतु।
पात यतु वासि धारामह, मणुमात्रं न किंचिदपभाषे॥

अर्थात्—शत्रु चाहे मेरे सिर पर निरन्तर आग जलाते रहें या तलवार की चोट करते रहें परन्तु किंचित् भी अपभाषण न करूँ? अपनी जबान से बुरी बात न निकालूँ।

धन्ना ने विचार किया, कि मुझे चिन्तामणि में ममत्व नहीं है, न मैं उससे सहायता ही लेता हूँ। मैंने केवल एक ही बार चिन्तामणि की परीक्षा की थी, उसके पश्चात् मैंने उससे कोई सहायता नहीं ली। इस तरह मुझे तो चिन्तामणि से ममत्व नहीं है, फिर भी मैं भाइयों को चिन्तामणि देना उचित नहीं समझता। मेरे तीनों भाई उच्छृङ्खल स्वभाव के हैं। यदि वे चिन्तामणि पा जावेंगे, तो बहुत अनर्थ भी करने लगेंगे, और चिन्तामणि के लिये आपस में झगड़ा करके कट मरेंगे। लेकिन यदि उन्हें चिन्तामणि न देकर भी यहाँ रहा, तो वे लोग अवश्य ही झगड़ा मचावेंगे, जिससे अप्रतिष्ठा तो होगी ही, साथ ही यह भी सम्भव है कि राजा श्रेणिक को चिन्तामणि का लोभ हो जावे, और वह मेरे से चिन्तामणि ले ले। इस वास्ते मेरे लिये राजगृह त्याग कर चला

जाना ही अच्छा है। मैंने भाइयों के लिये सब कुछ किया, फिर भी उनके हृदय की भावना मुझे राजगृह त्यागने के लिये प्रेरित करती है, और इस कारण यह अनुमान होता है, कि मुझे अभी और कुछ मिलना शेष है।

कौशम्बी में

अम्भोजिनी वन निवास विलास मेव
हंसस्य हन्ति नितरां कुपितो विधाता।
न त्वस्य दुग्धजल भेदविधौ प्रसिद्धां
वैदग्ध्य कीर्तिमपहर्त्तुमसौ समर्थः॥

अर्थात्—हंस पर बहुत नाराज होकर विधाता उसके निवास और विलास का कमल वन तो नष्ट कर सकता है, परन्तु उसकी दूध और पानी को अलग करने की चतुराई की कीर्त्ति नष्ट करने में विधाता भी समर्थ नहीं है।

भर्तृहरि के इस कथन का आशय यह है, कि कोई व्यक्ति रुष्ट होकर किसी का ऊपरी धन-वैभव अथवा सुख-सामग्री तो

छीन सकता है, लेकिन यदि उस व्यक्ति में कोई विद्या गुण या कला विशेष है, तो उस विद्या गुण या कला और उसके कारण प्राप्त बड़ाई छीनने में वह रुष्ट आदमी कदापि समर्थ नहीं हो सकता। चाहे वह नाराज व्यक्ति विधाता ही क्यों न हो, और जिस पर वह नाराज हुआ है, वह व्यक्ति तुच्छ ही क्यों न हो।

धन्ना के लिए भी ठीक यही बात थी। उसके तीनो बड़े भाई उससे निरन्तर असन्तुष्ट रहते थे। वे अपनी शक्ति भर धन्ना का अहित करने का ही प्रयत्न करते थे, और उसका सर्वस्व छीनने के लिए उतारू रहते थे। धन्ना ने अपने रुष्ट भाइयों को सन्तुष्ट करने के लिए एक दो बार नहीं, किन्तु तीन बार समस्त सम्पत्ति त्याग दी, और उसके भाइयो ने धन्ना द्वारा त्यक्त सम्पत्ति ग्रहण कर ली, परन्तु धन्ना जो कलाएँ जानता था, उसमें जो उर्वरा विद्या-बुद्धि थी, वह जिस चतुराई का स्वामी था, उसे धन्ना के भाई न हथिया सके। परिणाम यह हुआ कि धन्ना के तीनो भाई बार-बार सम्पत्ति पाकर भी कंगाल के कंगाल ही बने रहे, और धन्ना बार-बार सम्पत्ति त्याग कर घर से खाली हाथ निकल जाने पर भी सम्पन्न ही रहा, दीन-हीन नहीं हुआ।

भाइयों के गृहकलह के कारण, गृह त्यागकर जाने का निश्चय करके, धन्ना रात के समय राजगृह से चल दिया। उसके पास चिन्तामणि रत्न के सिवा और कुछ न था। उसके शरीर

पर जो वस्त्र थे, वे भी बहुत साधारण ही थे। राजगृह से निकल कर, धन्ना मेहनत-मजदूरी करता हुआ कौशम्बी आया। यद्यपि मार्ग में उसे अनेक कष्ट सहने पड़े, फिर भी उसने चिन्तामणि से किसी भी समय सहायता नहीं ली। इस सम्बन्ध में वह यही सोचता था, कि जब मेरे मे पुरुषार्थ है, और जो काम मैं अपने पुरुषार्थ से कर सकता हूँ, उसके लिए चिन्तामणि की सहायता लेकर मैं अपने पुरुषार्थ का अपमान क्यों करूँ।

धन्ना, कौशम्बी पहुँचा। उस समय कौशम्बी में शतानिक नाम का राजा राज्य करता था। उसके यहाँ एक मणि थी। राजा ने अनेक रत्न-परीक्षकों द्वारा उस मणि की परीक्षा कराई, परन्तु कोई भी व्यक्ति यह परीक्षा न कर सका, कि यह मणि किस जाति की है, इसमें क्या विशेषता है, और इसका मूल्य क्या है! राजा शतानिक की एक कन्या का नाम सौभाग्यमंजरी था। सौभाग्य-मंजरी, बहुत ही सुन्दरी गुणवती और मृदुल स्वभाव की थी, इस कारण वह वहाँ की सब कन्याओं मे रत्न के समान मानी जाती थी। राजा शतानिक ने विचार किया, कि जिस प्रकार मेरे पास की मणि का परीक्षक न मिलने के कारण उसका उचित उपयोग नहीं हो रहा है, उसी प्रकार कन्या-रत्न सौभाग्यमंजरी को यदि स्त्री-परीक्षक पति न मिला, तो इसकी सुन्दरता एवं इसके गुणों का उचित उपयोग न होगा। इस प्रकार विचार कर, उसने यह निश्चय

किया, कि मैं सौभाग्यमंजरी का विवाह उसी पुरुष के साथ करूँगा, जो मेरे पास की मणि की ठीक परीक्षा करेगा।"

ऐसा निश्चय करके, शतानिक ने यह ढिंढोरा पिटवा दिया, कि—जो पुरुष मेरे पास की मणि की ठीक परीक्षा कर देगा, मणि का गुण एवं मूल्य बता कर मुझे विश्वास करा देगा, उसके साथ मैं राजकुमारी सौभाग्यमंजरी का विवाह कर दूँगा। ढिंढोरे द्वारा राजा शतानिक का निश्चय सुन कर, अनेक रत्न-परीक्षक लोग शतानिक के पास की मणि की परीक्षा करने आये, परन्तु कोई भी व्यक्ति उस मणि का गुण-मूल्य बताने मे समर्थ नहीं हुआ।

उन्हीं दिनों में, धन्ना भी कौशम्बी में ही था। उसने भी राजा द्वारा कराई गई घोषणा सुनी, और साथ ही यह भी सुना, कि राजा के पास जो मणि है, उसकी परीक्षा अब तक कोई भी व्यक्ति नहीं कर सका है। उसने विचार किया, कि मुझे इस अवसर से लाभ लेना चाहिए, और सब को अपनी बुद्धि का परिचय देना चाहिए। इस प्रकार सोच कर, वह कौशम्बी में रहने वाले जौहरियों के पास गया। उसने जौहरियों से कहा, कि—मैं भी आप लोगों मे का एक व्यक्ति हूँ, परन्तु अभी कुसमय के चक्कर में पड़ा हुआ हूँ। यदि आप लोग मुझे राजा के पास ले चलें, और उसके पास की मणि देखने का अवसर दिलावें, तो सम्भव है कि मैं उस मणि की परीक्षा करके उसके गुण मूल्य आदि का विवरण

चता सकूँ। यदि मैं ऐसा कर सका, तो मुझे तो लाभ होगा ही, आप लोगों की भी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। धन्ना का कथन सुनकर, जौहरियों ने उससे उसका परिचय पूछा, लेकिन उसने यह कह कर अपना परिचय देना अस्वीकार कर दिया, कि अभी परिचय देने का समय नहीं है, जब समय होगा तब मेरा परिचय आप लोगों को आप ही मिल जावेगा। जौहरियों ने धन्ना से कहा, कि—हम लोग तुम्हें राजा के पास तो ले चलेंगे, लेकिन तुम हमारी दी हुई पोशाक पहन लो। राजा के यहाँ, दीनता-सूचक वस्त्र पहने हुए रत्न-परीक्षक को सम्मान नहीं मिलता। जौहरियों के इस कथन के उत्तर में धन्ना ने कहा, कि—आपका यह कथन ठीक है, लेकिन गुणों का सम्मान करनेवाले यह नहीं देखते, कि इसके वस्त्र कैसे हैं। आप लोग मुझे इन्हीं वस्त्रों में ले चलिये। यदि मैंने मणि की परीक्षा कर दी, तब तो ये वस्त्र होने पर भी मुझे सम्मान मिलेगा, अन्यथा अच्छे वस्त्र होने पर सम्मान भी नहीं मिल सकता।

धन्ना को लेकर, जौहरी लोग राजा शतानिक के यहाँ गये। उन्होंने राजा शतानिक से प्रार्थना की, कि—आज वह मणि हम लोग फिर देखना चाहते हैं। हमारे साथ ये नये रत्न-परीक्षक भी हैं। हम लोगों को विश्वास है, कि इनके द्वारा मणि की पूरी तरह परीक्षा हो सकेगी।

जौहरियों की प्रार्थना स्वीकार करके राजा शतानिक ने, राज-

कोष में से वह मणि मंगवा कर स्वर्णथाल में जौहरियों के सामने रख दिया। जौहरियो ने, धन्ना को आगे करके मणि देखने के लिए कहा। धन्ना ने मणि देखकर कहा, कि—यह रत्न चिन्ता-मणि तो नहीं है, लेकिन है उसी जाति का रत्न। यह कह कर, उसने रत्न-परीक्षा का परिचय देते हुए यह बताया कि चिन्तामणि किन लक्षणो से पहिचानी जाती है, और इस मणि में चिन्तामणि से क्या न्यूनता है। साथ ही, उसने उस मणि का मूल्य बताया, और उसका यह गुण बताया, कि इस मणि को मस्तक पर धारण करनेवाला व्यक्ति विजय प्राप्त करता है।

धन्ना की बातें सुनकर, राजा शतानिक भी प्रसन्न हुआ और जौहरी लोग भी प्रसन्न हुए। राजा शतानिक ने धन्ना से कहा, कि—तुमने इस मणि के विषय में जो कुछ कहा है उसकी सत्यता का प्रमाण? धन्ना ने उत्तर दिया, कि—आप इस थाल में थोड़े चावल डलवा दीजिए और मणि भी इसी थाल मे रहने दीजिये। मणि के रहते इस थाल में के चावल पक्षी न चुगें, और मणि को थाल से हटा लेने पर पक्षी चावलों को चुग लें, तब तो मेरे कथन को सत्य मानिये, अन्यथा झूठ मानिये।

धन्ना के कथनानुसार, शतानिक ने थाल मे थोड़े चावल डलवा कर, चावल और मणि सहित वह थाल ऐसी जगह रखवा दिया, जहाँ पक्षीगण उसे भली प्रकार देखते थे। यह करके सब

लोग दूर-दूर खड़े होकर देखने लगे। पक्षियों ने थाल में के चावल देखे भी, लेकिन वे थाल के पास नहीं आये, न उनने थाल में पड़े हुए चावलों पर चोंच ही मारी। कुछ देर तक ऐसा देखकर राजा शतानिक ने थाल में से मणि को उठवा लिया। थाल में से मणि हटते ही, पक्षीगण थाल पर टूट पड़े, और उसमें के चावल चुग गये।

मणि की परीक्षा हो जाने और परीक्षा के सत्य ठहरने से राजा बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने धन्ना से कहा, कि—तुमने इस मणि की ठीक परीक्षा की है. इसलिए मैं मेरी घोषणानुसार तुम्हारे साथ अपनी कन्या सौभाग्यमंजरी का विवाह करना चाहता हूँ। तुम सौभाग्यमंजरी के साथ विवाह करना स्वीकार करो। शतानिक के इस कथन के उत्तर में धन्ना ने कहा, कि—आप मुझे जानते भी नहीं हैं, और मेरी दशा भी देख ही रहे हैं कि मैं कैसा दीन हूँ। इसलिए मेरे साथ राज-कन्या का विवाह करना क्या ठीक होगा? धन्ना का उत्तर सुनकर, शतानिक और भी प्रसन्न हुआ। उसने धन्ना से कहा, कि—इस समय तुम चाहे जैसे होओ, लेकिन वास्तव में तुम दीन नहीं हो। कोई दीन व्यक्ति उस समय कदापि लोभ संवरण नहीं कर सकता, जब कि उसे राज-कन्या मिल रही हो। राजकन्या मिलने के समय इस प्रकार निस्पृह रहना, यह तुम्हारी महानता है। धन्ना ने कहा, कि—आपका

यह कथन ठीक भी हो, तब भी राजकन्या की इच्छा जाने बिना मुझ जैसे गरीब के साथ उनका विवाह करना कैसे ठीक होगा। मैं कैसा गरीब हूँ, यह तो आप देख ही रहे हैं। मेरे रहने को घर भी नहीं है, न मेरे पास कुछ दिन खाने को ही है। इसके सिवा, मेरा विवाह भी हो चुका है, और एक ही नहीं किन्तु तीन विवाह हो चुके हैं, तथा तीनो ही पत्नियाँ जीवित है। इसलिए आप अपने प्रस्ताव पर पुन. विचार कर लीजिए।

धन्ना की सत्य तथा स्पष्ट बातें सुनकर, शतानिक बहुत प्रसन्न हुआ। उसने धन्ना से कहा, कि—तुमने जो बातें कही हैं, उन पर मैंने तो विचार कर ही लिया है, लेकिन सौभाग्यमंजरी को भी तुम्हारे सामने ही बुलाये लेता हूँ, जिसमे वह भी सब बातों पर विचार कर ले। यदि तुम्हारी कही हुई बातें जान कर ही वह तुम्हारे साथ विवाह करना स्वीकार करे, तो उस दशा में तो तुम्हे कोई आपत्ति न होगी न? धन्ना ने उत्तर में कहा, कि—उस दशा में तो मुझे किसी प्रकार की आपत्ति हो ही कैसे सकती है! लेकिन मैं यह निवेदन कर देना उचित और आवश्यक समझता हूँ, कि जिस मणि की परीक्षा करने के कारण आप मेरे साथ राजकन्या का विवाह करना चाहते हैं, आप उस मणि का किसी भी समय दुरुपयोग न करें। अच्छी वस्तु का सदुपयोग भी होता है, और दुरुपयोग भी। इसलिए ऐसा न हो, कि आप इस मणि के

कारण अभिमान लाकर निष्कारण ही दूसरे पर अत्याचार करने के लिए उतारू हो जावें। यदि आपने ऐसा किया, तो स्वयं भी अपमानित होंगे, तथा इस मणि का भी अपमान करावेंगे।

धन्ना का कथन यथार्थ मान कर, शतानिक ने राजकन्या सौभाग्यमंजरी को बुलाया। सौभाग्यमंजरी के आ जाने पर शतानिक ने उसे मणि की परीक्षा के सम्बन्ध में की गई अपनी घोषणा, धन्ना द्वारा मणि की सच्ची परीक्षा होना, और विवाह के सम्बन्ध में धन्ना द्वारा कही बातों से परिचित करके उससे 'तेरी क्या इच्छा है ?' यह प्रश्न किया। दीनवेशधारी धन्ना का स्वाभाविक सौन्दर्य देखकर, सौभाग्यमंजरी धन्ना पर मुग्ध हो गई। उसने शतानिक से कहा कि—पिता जी, मुझे गार्हस्थ्य धर्म का पालन करने के लिए पति की सहचारिणी बनना है। ऐसी दशा में, भावी पति गरीब है या विवाहित है आदि बातें देखना अनावश्यक है; तथा उस दशा में तो और भी अनावश्यक है, जब कि आप मणि की परीक्षा करनेवाले के साथ मेरा विवाह करने की घोषणा कर चुके हैं। आपकी घोषणानुसार यदि मुझे अङ्गहीन अथवा रोगी पति मिलता तो मैं उसे भी सहर्ष स्वीकार करती, तो आप तो मेरा विवाह ऐसे पुरुष के साथ करना चाहते हैं, जो प्रत्येक दृष्टि से श्रेष्ट है।

इस प्रकार सौभाग्यमंजरी ने भी धन्ना के साथ अपना विवाह

करना स्वीकार किया। अन्त में, धन्ना और सौभाग्यमंजरी का विवाह हुआ। धन्ना, सौभाग्यमंजरी के साथ आनन्दपूर्वक रहने लगा। राजा शतानिक ने धन्ना के लिए सब प्रबन्ध कर दिया। साथ ही उसे कुछ राज-कार्य भी सौंप दिया। धन्ना ने राज्य की बहुत उन्नति की, जिससे प्रसन्न होकर राजा ने धन्ना को कुछ भूमि जागीर में दी।

धन्ना ने विचार किया, कि मुझे राजा से जो भूमि प्राप्त हुई है, उसमें कोई आदर्श कार्य करना चाहिए। जिससे राजा और कर्मचारियों को यह मालूम हो जावे, कि राज्य की उन्नति एवं राज्य का प्रबन्ध किस प्रकार किया जा सकता है।

इस प्रकार सोचकर, धन्ना ने उस भूमि में एक नगर बसाया। उसने नगर को इस ढंग से बसाया, कि जिससे वह नगर आदर्श कहा जा सके। निवास एवं जीवन सम्बन्धी सब आवश्यकताओं की पूर्त्ति करनेवाले उस नगर में, धन्ना ने आदर्श व्यापारियों एवं कृषकों को बसाया, और उस नगर का नाम धनपुर रखा। धन्ना, उस नगर का राजा हुआ। वह प्रजा को सब तरह आनन्द देने लगा।

धन्ना ने धनपुर में रहनेवाले लोगों के सुख का और सब प्रबन्ध तो किया था, परन्तु धनपुर की जन-संख्या अधिक हो गई थी इसलिए वहाँ के लोगों को पानी का कुछ कष्ट था। धन्ना ने

सोचा, कि मुझे एक ऐसा तालाब बनवाना चाहिए, जिससे प्रजा को पानी का जो कष्ट हो रहा है वह भी मिट जावे, तथा कृषि भी सींची जा सके, और इस नगर की शोभा भी बढ़ जावे। इस प्रकार सोचकर, धन्ना ने एक विशाल तालाब की नींव डाली। वह तालाब बनवाने लगा। तालाब खोदने आदि कार्य करनेवाले मजदूरों के विषय में उसने यह नीति रखी, कि सङ्कटापन्न स्थान भ्रष्ट एवं दीन दुःखी लोगों को मजदूरी करने के लिए प्रथम अवसर दिया जावे।

जिस रात को धन्ना राजगृह नगर से चुपचाप चल दिया था, उस रात की समाप्ति पर प्रातःकाल जब धन्ना की तीनों स्त्रियाँ धन्ना के शयनागार में गईं, तब उन्हें धन्ना की शय्या खाली मिली। वे आश्चर्य एवं चिन्तापूर्वक धन्ना की खोज करने लगीं, परन्तु उन्हें धन्ना का पता न चला। हाँ शय्या पर से उन्हें वे वस्त्राभूषण अवश्य मिले, जिन्हें धन्ना धारण किये रहता था। वस्त्राभूषण पाकर वे समझ गईं, कि पति वेश बदल कर चुप चाप कहीं चले गये। वे दौड़ी हुई अपनी सासू के पास गईं। उन्होंने अपनी सासू से कहा, कि—हमें आपसे यह कहते हुए दुःख हो रहा है, कि आप के पुत्र रात के समय चुपचाप न मालूम कहाँ चले गये। बहुओं से यह दुःखद समाचार सुनकर, धन्ना की माता को बहुत दुःख हुआ। थोड़ी ही देर में यह बात सारे नगर में

फैल गई। धन्ना के तीनों भाई भी दौड़े हुए धन्ना के घर आये, और धनसार से पूछने लगे, कि—धन्ना कहाँ चला गया, और क्यों चला गया? धनसार ने उनसे कहा, कि—तुम लोगों की दुष्टता का ही यह परिणाम है। तुम लोगों ने यहां भी शान्ति नहीं रखी, यहां भी झगड़ा मचाया, इसीसे धन्ना न मालूम कहां चला गया है। धनसार का यह कथन सुनकर, उसके तीनों लड़के क्रुद्ध हो उठे। वे धनसार से कहने लगे, कि—आप तो हमारे लिए सदा से ही ऐसा कहते आये हैं। आपकी दृष्टि में हम तीनों ही अपराधी हैं, धन्ना तो बहुत भला है। यह तो आप कहेंगे ही क्यों, कि जिस चिन्तामणि पर हम तीनों का भी अधिकार है, वह चिन्तामणि अब तक अकेला धन्ना दबाये रहा, और अब जब हम लोगों ने चिन्तामणि माँगी, तब वह चिन्तामणि लेकर कहीं भाग गया। धन्ना गया तो चिन्तामणि बचाने के लिए, फिर भी आप उसके जाने का अपराध हमारे सिर लादें यह तो आपकी सदा की ही नीति है। इस प्रकार धनसार के तीनों पुत्रों ने, धन्ना के जाने का कारण चिन्तामणि की रक्षा करना बताकर धनसार से और कलह किया।

धन्ना के चले जाने का समाचार, राजा और गोभद्र तथा कुसुमपाल ने भी सुना। यह समाचार सुनकर उन्हें और राजगृह की समस्त प्रजा को बहुत ही दुःख हुआ। सब लोग यह विचारने

लगे कि धन्ना इस प्रकार चुप चाप क्यो चला गया। साथ ही धन्ना की खोज भी करने लगे। लेकिन धन्ना के जाने का कारण किसी के भी समझ मे नहीं आया, न धन्ना का पता ही चला। धीरे-धीरे राजा प्रजा आदि सब लोगो को मालूम हो गया, कि धन्ना से उसके भाई द्वेष करते थे, उनने कलह मचाया था, इसी से धन्ना घर-द्वार त्याग कर चुपचाप चला गया है, और इससे पहले भी वह भाइयों के कलह से दुःखी होकर इसी प्रकार दो बार गृह-सम्पत्ति त्याग चुका था। यह जानकर सब लोग धन्ना के भाइयों की निन्दा करने लगे, और उन तीनों के कारण धनसार के लिए भी अपवाद बोलने लगे।

धन्ना का जाना, राजा श्रेणिक को बहुत खटकने लगा। 'अभयकुमार की अनुपस्थिति की कमी धन्ना द्वारा बहुत कुछ पूरी हुई थी, लेकिन अब तो धन्ना भी चला गया। उसके चले जाने मे मेरे यहाँ ऐसा एक भी बुद्धिमान नहीं रहा, जिससे मैं किसी कार्य मे सलाह ले सकूँ, या जो कठिन माने जाने वाले कार्य भी अपनी बुद्धि से निपटा डाले।' इन विचारो से, राजा श्रेणिक को धन्ना के चले जाने से बहुत दु'ख हुआ। उसने धन्ना की बहुत खोज कराई, परन्तु धन्ना का कहीं भी पता न लगा।

जब भी कोई कठिन कार्य आता, तभी राजा श्रेणिक धन्ना को याद करता, तथा उसके चले जाने के लिए धनसार और उसके-

तीनों लड़कों के विषय में व्यंगात्मक बात भी बोल दिया करता। दूसरी ओर प्रजा भी समय-समय पर धन्ना के तीनों भाई एवं धनसार—की निन्दा किया करती। धनसार एवं उसके तीनों पुत्र लोगों की बातें सुनते-सुनते दुःखी हो गये। उस दुःख से दुःखी होकर, धनसार ने धन्ना को ढूँढने जाने का निश्चय किया। निन्दित और अपमानित जीवन न सह सकने के कारण, तथा धनसार के साथ न जाकर राजगृह मे रहने पर अधिक निन्दा होगी इस भय से, धन्ना के तीनों भाई भी धनसार के साथ जाने को तैयार हुए। धनसार एवं उसके तीनो पुत्रों ने अपना फैला हुआ काम-काज समेट लिया, और धन्ना को ढूँढने जाने को तैयारी करने लगे।

धनसार सेठ और उसकी पत्नी ने, धन्ना को तीनों बहुओं को बुलाकर उनसे कहा, कि—धन्ना के चुप-चाप चले जाने से तुम तीनों को दुःख है, और हमें भी दुःख है। यदि धन्ना कह कर जाता, चुपचाप न जाता, तब तो अधिक दुःख न होता लेकिन वह चुप-चाप बिना कुछ कहे सुने चला गया। इससे उसका वियोग असह्य हो रहा है। धन्ना के चले जाने के कारण हम लोगों की जो निन्दा हो रही है, उसके तथा धन्ना के वियोग के दुःख से मुक्त होने के लिए हम लोगों ने धन्ना को ढूँढने जाने का निश्चय किया है। धन्ना, कहाँ तथा कब मिलेगा और उसे ढूँढने

में कितने कष्ट सहने होंगे, यह नहीं कहा जा सकता। इसलिए तुमसे हमारा यह कहना है, कि हम लोग तो धन्ना को ढूँढने जाते हैं, और तुम तीनो हमारे या धन्ना के आने तक अपने-अपने पिता के यहाँ रहो।

सासू और ससुर का यह कथन सुनकर, सोमश्री तथा कुसुमश्री ने विचार किया, कि हम में सासू ससुर के साथ रह कर मार्ग के कष्ट सहने की क्षमता नहीं है। इसलिए हमें, सासू-ससुर की सम्मत्यानुसार पिता के घर जाकर रहना ही ठीक है। इस प्रकार विचार कर सोमश्री और कुसुमश्री ने धनसार और उसकी पत्नी से कहा, कि—यद्यपि पति को ढूँढने के कार्य के समय आपके साथ रह कर आपकी सेवा करना हमारा कर्त्तव्य है, परन्तु हम प्रवास के कष्ट सहने में समर्थ नहीं हैं। ऐसी दशा मे यदि हम साहस करके आपके साथ चलीं भी, तो आपके लिए और बोझ रूप होंगी। इसलिए हम आपकी आज्ञानुसार, पति के आने तक अपने-अपने पिता के यहाँ रहें, यही ठीक है।

इस प्रकार कह कर, सोमश्री और कुसुमश्री ने तो अपने-अपने पिता के यहाँ रहना स्वीकार कर लिया, परन्तु सुभद्रा ने अपने ससुर-सासू से कहा, कि—आपने जो कुछ कहा, वह आपके योग्य ही है। हमको कष्ट से बचाना आपका कर्त्तव्य है, और आपने हमें पिता के घर रहने का उपदेश देकर उस कर्त्तव्य का

पालन किया है, परन्तु आपका यह उपदेश मानने से पहले मुझे अपने कर्त्तव्य का भी विचार कर लेना चाहिए। पत्नी का कर्त्तव्य पति के आनन्द में भाग लेना ही नहीं है, किन्तु सुख और दुःख दोनो में पति के साथ रहना है। यदि पति चुपचाप न गये होते तब तो मैं उनके साथ ही जाती, फिर चाहे कितने भी कष्ट क्यों न होते, परन्तु वे चुपचाप चले गये, इससे मुझे उनके साथ जाने का अवसर न मिला। लेकिन अब, जब कि आप पति को ढूँढने के लिए जा रहे हैं और पति की खोज में कष्ट उठाने को तैयार हुए हैं, तब मैं आपके साथ न रह कर पिता के यहाँ कैसे जा सकती हूँ! यदि मैंने ऐसा किया, तो मुझ जैसी स्वार्थिनी दूसरी कौन होगी? मेरी बहन कुसुमश्री और सोमश्री में मार्ग के कष्ट सहने की शक्ति नहीं है, इसलिए उनका तो अपने-अपने पिता के घर जाना ठीक है, परन्तु मैं ऐसा कदापि नहीं कर सकती। मैं, आप लोगों के साथ ही चलूँगी। आप जिस कार्य के लिए कष्ट सहने को तैयार हुए हैं, वह कार्य मेरा भी है। फिर मैं कष्ट के भय से आपका साथ कैसे छोड़ सकती हूँ! आप लोग वृद्ध होकर भी मेरे पति को ढूँढ़ने का कष्ट सहें, तब मैं आपके साथ न रहकर पिता के घर कैसे जाऊँ! पतिव्रता स्त्री और साधु पुरुष, अपने पति और परमात्मा की खोज में कष्ट की अपेक्षा नहीं करते, किन्तु उन कष्टों को भी आनन्दपूर्वक सहते हैं। इसलिए आप मुझको यहाँ छोड़

जाने की अकृपा न कीजिये। मैं, आपके साथ ही रहूँगी। मैं अपने लिए आप लोगों को किसी प्रकार का कष्ट न होने दूँगी, किन्तु मुझ से जो हो सकेगी उस सेवा द्वारा आपको श्रमरहित करने का प्रयत्न करूँगी। आप, मुझे साथ लेने में किसी भी प्रकार का सकोच न करें।

सुभद्रा की विनम्र और युक्तियुक्त बातों का, धनसार कुछ भी उत्तर न दे सका। सुभद्रा का कथन सुनकर, वह गद्गद् हो उठा। उसके हृदय पर सुभद्रा के शब्दों का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। प्रसन्नता के कारण उसका गला रुँध गया! प्रसन्नता का आवेग कम होने पर धनसार ने सुभद्रा से कहा, कि—पुत्रवधू, मैं तुम्हारी प्रशन्सा किन शब्दों में करूँ! तुम्हारी बातों ने, मेरे उत्साह को द्विगुण कर दिया है। तुम जैसी पतिव्रता स्त्री, असम्भव कार्य भी सम्भव बना सकती है! मुझे विश्वास है, कि तुम हमारे साथ रहोगी तो—जिस उद्देश्य से अपना प्रवास है वह—उद्देश्य बहुत शीघ्र सफल होगा। हृदय को आह्लादित करनेवाली तुम्हारी बातें सुनकर, अब मैं तुमसे यहाँ रहने के लिए नहीं कह सकता। तुम, हम लोगों के साथ अवश्य चलो, और हमारा नेतृत्व करो। तुम ऐसी साहसिन महिला के नेतृत्व में, हम सब लोग आनन्द में रहेंगे।

धन्ना की खोज में

—०○—

बहुत से पुरुष, स्त्रियों को गृह-कार्य निपुण तो मानते हैं, लेकिन घर से बाहर के कार्यों की व्यवस्था के लिए स्त्रियों को सर्वथा अयोग्य समझते हैं। ऐसे लोग, स्त्रियों में बुद्धि की न्यूनता मानते हैं। उनकी समझ से स्त्रियों में केवल इतनी ही बुद्धि होती है, कि जिससे वे गृह-कार्य कर सकें। उनकी दृष्टि में, स्त्रियों में इससे अधिक बुद्धि नहीं होती। परन्तु वास्तविक बात इससे भिन्न है। स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा बुद्धि कम होती है, और स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में बुद्धि अधिक होती है, यह बात कोई भी समझदार व्यक्ति नहीं कह सकता। प्रकृति ने, स्त्री और पुरुष दोनों को समान बुद्धि दी है। दोनों में समान विचार-शक्ति और

साहस है। यह बात दूसरी है, कि स्त्रियों को बुद्धि विकास के लिए—गुरुतर कार्य करने के लिए तथा दूरदर्शिता एव धैर्य का परिचय देने के लिए—अवसर ही न दिया जावे और फिर उन्हें बुद्धिहीना कहा जावे, अन्यथा इन बातों में वे पुरुषों की अपेक्षा किंचित् भी न्यून नहीं हैं। बेचारी स्त्रियों को ऐसा अवसर ही न दिया जावे, और फिर उनको बुद्धिहीना कह कर गृहकार्य के सिवा अन्य कार्यों के लिए अयोग्य बताया जावे, तो यह स्त्रियों के साथ एक प्रकार का अन्याय ही किया जाता है। जिस तरह स्त्रियों को कार्य करने अथवा बुद्धि–विकास के लिए अवसर नहीं दिया जाता, उसी प्रकार यदि पुरुषों को भी अवसर न मिले, तो पुरुष भी, बुद्धि विवेक एवं कार्य क्षमता में स्त्रियों से बढ़कर नहीं हो सकते। इसके विरुद्ध, जैसा अवसर पुरुषों को प्राप्त होता है वैसा ही अवसर स्त्रियों को भी मिले, तो वे स्वयं को पुरुषों से कदापि पीछे नहीं रहने दे सकतीं। बल्कि सम्भव है, कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक व्यवस्थित कार्य कर सकें। क्योंकि, स्त्रियों में और बातें तो पुरुषों की तरह की हैं ही, लेकिन धैर्य और सहिष्णुता में वे पुरुषों से कहीं बढ़कर निकलेंगी। इसलिए अवसर मिलने पर स्त्रियाँ, गृह-कार्य के साथ ही अन्य कार्यों में भी पुरुषों के समान ही क्षमता बता सकती हैं। यह बात धन्ना-पत्नी सुभद्रा के चरित्र से और भी अधिक स्पष्ट है।

धनसार, उसकी पत्नी, उसके तीनों पुत्र और तीनों पुत्रों की पत्नियाँ, तथा सुभद्रा, ये सब लोग धन्ना को ढूँढने के लिए जाने को तैयार हुए। कुसुमश्री तथा सोमश्री, सासू-ससुर आदि सब से मिलकर अपने-अपने पिता के यहाँ चली गईं। सुभद्रा भी अपने माता-पिता से मिलने के लिए गई। गोभद्र एवं भद्रा को यह जान कर बहुत प्रसन्नता हुई, कि सुभद्रा अपने ससुर—सासू के साथ अपने पति को ढूँढने के लिए जा रही है। उन्होंने, सुभद्रा को उचित शिक्षा देकर विदा दी। अन्त में, धनसार अपने परिवार के लोगों को साथ लेकर रात के समय चल दिया। कुछ थोड़े से लोगों के सिवा, उसने किसी को अपने जाने की खबर न होने दी। उसने अपने साथ कुछ धन-माल भी ले लिया।

मार्ग एवं वन के कष्ट सहते हुए, धनसार उसके पुत्र, उसकी स्त्री एवं पुत्र वधुएँ जा रही थीं। और सब तो पहले दो बार इस तरह के कष्ट सह चुके थे, लेकिन सुभद्रा के लिए कष्ट सहन का यह पहला ही अवसर था। वह, गोभद्र सेठ के यहाँ जन्म कर बड़ी हुई थी, और बड़ी होने के पश्चात् धन्ना की पत्नी बन कर आनन्द में रही थी। कष्ट किसे कहते हैं, और कष्ट कैसा होता है, इसका उसे अनुभव न था। ऐसा होते हुए भी, सुभद्रा अपने सास-ससुर और जेठ-जेठानियों के साथ बराबर चलती, मार्ग में सब को श्रम-रहित करने का प्रयत्न करती, और रात्रि-निवास के

स्थान पर पहुँच कर सब के लिए भोजन शयन की व्यवस्था करती। प्रवास के कारण होने वाले कष्ट से न तो वह स्वयं ही कभी दु खी हुई, न उसने किसी को दुःखी होने ही दिया। जब मार्ग में सब लोग विश्रामार्थ ठहरते, तब सुभद्रा कोई धर्मकथा या कहानी सुनाकर सब लोगों मे नया जीवन और नया उत्साह भरती। धनसार और उसके पुत्र आदि ने प्रवास तो पहले भी किया था, परन्तु इस बार सुभद्रा साथ थी इसलिए इस प्रवास में सब को पहले की तरह कष्ट न उठाना पड़ा।

सब लोग जंगल में जा रहे थे। अचानक डाकुओं ने आकर उन सब को घेर लिया। डाकुओं ने, उन सब के पास जो कुछ था वह छीन लिया। किसी के पास एक समय खाने तक को न रहने दिया। डाकुओं द्वारा पास का सब माल-असबाब लुट जाने से, धनसार बहुत दुःखी हुआ। वह कहने लगा, कि इन दुर्भागी पुत्रो के कारण मुझे तो संकट में पड़ना ही पड़ा, लेकिन सुकुमारी सुभद्रा भी संकट सह रही है। इस प्रकार कहता हुआ, धनसार बहुत खेद करने लगा! सुभद्रा ने विचारा, कि पास का माल-असबाब तो गया ही, लेकिन इस दुःख से यदि साहस भी छूट गया, तो सब लोगों का जीवन संकट में पड़ जावेगा। इस समय सब को, और प्रधानतः ससुर को धैर्य बंधाना चाहिए।

इस प्रकार सोचकर सुभद्रा ने धनसार से कहा, कि—जब

आप कुटुम्ब के नायक भी इस थोड़े से दुःख से घबरा गये, तब हम सब की क्या दशा होगी ! इसका विचार करो। यदि जीवन है, तो धन माल बहुत होगा। धन-माल जाने से, इस प्रकार दुःखी होने या घबरानेकी क्या आवश्यकता है ! अपने में साहस होगा तो धन-माल न होने पर भी अपन अपना ध्येय सिद्ध कर सकेंगे, लेकिन यदि साहस खो दिया, तो फिर जीवन रहना भी कठिन हो जावेगा। आपके पास का द्रव्य तो डाकू छीन ले गये, लेकिन आपके कनिष्ठ पुत्र तो स्वयं ही सब सम्पत्ति त्याग कर गये हैं। यदि सम्पत्ति त्यागने के साथ ही वे साहस भी त्याग देते, तो क्या वे कहीं जा सकते थे, और कुछ कर सकते थे ? सम्पत्ति तो आती-जाती ही रहती है। स्वयं आपको इसका अनुभव है। फिर दुःख क्यों करते हैं ! आप, किसी भी प्रकार का दुःख न करें। अपने में साहस रहेगा, तो अपन मेहनत-मजदूरी करके अपना पेट भर लेंगे, और सम्भव है कि आपके पुत्र मिल जावें, इसलिए अपने को अधिक दिनों तक मेहनत मजदूरी भी न करनी पड़े।

सुभद्रा के वचनों से, धनसार आदि सभी लोगों को बहुत धैर्य तथा, शान्ति प्राप्त हुई। सब लोग सुभद्रा के साहस की प्रशंसा करते हुए कहने लगे, कि इस समय सुभद्रा का कथन हम सब को सन्तप्त हृदय के लिए शीतल जल के समान हुआ है।

यदि सुभद्रा साथ न होती, तो हम लोगों को बहुत ही संकट सहने पड़ते।

सब लोग आगे बढ़े। सुभद्रा ने कुछ सामान्य नियम बना दिये थे, जिनके अनुसार सब लोग निश्चित समय तक मार्ग चल कर, शेष समय भोजन प्राप्त करने तथा विश्राम करने आदि में व्यतीत करते। सुभद्रा द्वारा बनाये गये नियमों का पालन करने के कारण, सब लोग बिना श्रम एवं दुःख के आगे बढ़ते जाते थे।

चलते-चलते सब लोग उसी धनपुर नगर में आये, जहाँ धन्ना का राज्य था और जिसकी सीमा में धन्ना विशाल सरोवर बनवा रहा था। सुभद्रा ने धनसार आदि सब लोगों से कहा, कि—डाकुओं द्वारा लुट जाने के पश्चात अपने को कभी पेट भर भोजन नहीं मिला है, और आगे के लिए भी अपने पास ऐसी कोई सामग्री नहीं है, कि जिससे पेट भर भोजन मिल सके। इसके सिवा, नित्य चलते रहने के कारण सब लोग थक भी गये हैं। इसलिए यदि कुछ दिन के लिए अपन इस नगर में ठहर जावें, तो ठीक होगा। यहाँ जो विशाल तालाब बन रहा है, सम्भव है कि उसमें काम करने के लिए अपने को भी स्थान मिल जावे। और ऐसा होने पर अपन सब पेट भर कर भोजन भी कर सकेंगे, तथा आगे के प्रवास में काम आने के लिए कुछ बचा भी सकेंगे।

सुभद्रा की सम्मति मान कर, सब लोग धनपुर में कुछ दिनों

के लिए ठहर गये। सब लोगों को ठहराकर तथा सब के लिए भोजन आदि की व्यवस्था कर के, सुभद्रा उस व्यक्ति के पास गई, जो धन्ना की ओर से तालाब खोदने के लिए मजदूर रखने तथा मजदूरो से काम लेने के लिए नियुक्त था। उसके सन्मुख जाकर सुभद्रा ने उससे कहा, कि हम लोग विदेशी हैं, जो विपत्ति के मारे यहाँ आये हैं। क्या आप, हम लोगो को मजदूरी करने का अवसर देंगे? तालाब के कार्य का निरीक्षण करनेवाला कर्मचारी सुभद्रा की आकृति एवं उसकी सुन्दरता देखकर समझ गया, कि यह किसी भले परिवार की स्त्री है, परन्तु इस समय विपत्ति मे पड़ी हुई है, और आजीविका की खोज में है। इस प्रकार समझ कर उसने सुभद्रा से कहा, कि इस तालाब पर मजदूरी करने के लिए विपद्ग्रस्तों को पहले स्थान दिया जाता है। तुम तथा तुम्हारे साथ के लोग यहाँ प्रसन्नता से मजदूरी कर सकते हैं।

सुभद्रा ने, ससुर सासू जेठ जेठानियो और अपना नाम मजदूरों में लिखवा दिया। सब लोग तालाब पर मजदूरी करने लगे। धनसार के तीनों लड़के मिट्टी खोदते, और शेष सब लोग खुदी हुई मिट्टी उठा-उठा कर पाल पर डालते। सुभद्रा इस बात का बहुत ध्यान रखती, कि वृद्ध सासू-ससुर को अधिक श्रम न हो। दिन भर मजदूरी करने के पश्चात सन्ध्या के समय जो कुछ प्राप्त

होता, सुभद्रा उसमें से कुछ भविष्य के लिए बचा कर, शेष से भोजनादि की व्यवस्था करती। वह, सबको खिला-पिला कर फिर स्वयं खाती-पीती तथा सब को सुला कर स्वयं सोती। साथ ही, अपने सास-ससुर के हाथ-पाँव दाब कर उनकी थकावट भी मिटाती।

जो तालाब बन रहा था, उसका निरीक्षण करने के लिए धन्ना भी तालाब पर आया करता था। एक दिन, धन्ना की दृष्टि धनसार आदि पर पड़ी। धन्ना ने उन सब को पहचान लिया। अपने माता-पिता भाई-भौजाई और अपनी प्रिय सुभद्रा को दीन-हीन दशा में देखकर, धन्ना को बहुत ही दुःख हुआ। विशेषतः सुभद्रा को मिट्टी ढोती देखकर, उसका हृदय पसीज उठा। वह अपने मन में कहने लगा, कि इसका त्याग तो मेरे त्याग से भी बढ़ कर है। मैंने पुरुष होकर भी जो त्याग नहीं किया, और जो कष्ट नहीं सहे, वह त्याग और वह कष्ट सहन सुभद्रा द्वारा देख रहा हूँ। यहाँ सुभद्रा अकेली ही दिखाई पड़ती है, इससे स्पष्ट है कि कुसुमश्री और सोमश्री नहीं आई हैं, केवल सुभद्रा ही आई है। यदि सुभद्रा चाहती तो उन दोनों की ही तरह राजगृह में अपने पिता के यहाँ रह सकती थी, लेकिन इसने मेरे लिए सुख को लात मार कर दुःख मोल लिया है। धन्य है इसको! यद्यपि मेरे लिए यही उचित है, कि मैं पूर्व की भाँति पिता आदि को कष्ट

मुक्त करूँ, लेकिन ऐसा करने से पूर्व मुझे इस समय सुभद्रा की परीक्षा करनी चाहिए। सुभद्रा की परीक्षा करने के लिए ऐसा दूसरा अवसर नहीं मिल सकता। मनुष्य आवेश में आकर एक बार तो स्वयं को कष्ट में डाल लेता है, परन्तु प्रायः यह भी होता है, कि कष्ट से घबराकर कई लोग फिर सुख की इच्छा करते हैं, और उचित या अनुचित मार्ग से सुख प्राप्त करना चाहते हैं। सुभद्रा भी कष्ट से घबराई है या नहीं, यह भी सुख चाहती है या नहीं, और दुःख से मुक्त होकर सुख प्राप्त करने के लिए अनुचित मार्ग ग्रहण कर सकती है या नहीं, इसकी परीक्षा के लिए यही समय उपयुक्त है। इसलिए मुझे अपना परिचय देने में जल्दी न करनी चाहिए, किन्तु पहले सुभद्रा की परीक्षा कर लेनी चाहिए। कहावत ही है, कि—

धीरज धर्म मित्र अरु नारी।
आपति काल परखिये चारी॥

इस प्रकार विचार कर, धन्ना उस दिन तो चला गया, और दूसरे दिन वेश बदल कर फिर तालाब पर आया, जिससे धनसार आदि उसको पहचान न सकें। तालाब पर आकर उसने मजदूरों से काम लेने वाले निरीक्षक से यह पूछा, कि—ये नये मजदूर कौन तथा कहाँ के हैं? निरीक्षक ने उत्तर दिया, कि—इन लोगों ने पूछने पर भी अपना परिचय नहीं दिया है। यह कहते हुए

उसने सुभद्रा की ओर संकेत कर के कहा, कि—वह भी कहती है, कि आप हमसे श्रम लेकर हमें पारिश्रमिक दीजिये, हमारा परिचय जानने का प्रयत्न मत करिये। निरीक्षक का यह उत्तर सुन कर, धन्ना प्रसन्न हुआ। उसने सुभद्रा की नीची दृष्टि देखकर यह तो अनुमान किया, कि सुभद्रा मेरे द्वारा ली जाने वाली परीक्षा में उत्तीर्ण ही होगी, यह दुःख-मुक्त होने के लिए अपना सतीत्व कदापि नष्ट न होने देगी, फिर भी उसने सुभद्रा की परीक्षा करने का अपना विचार नहीं बदला। उसने कार्य-निरीक्षक से कहा, कि इन नये मजदूरों से अधिक काम मत लेना, किन्तु नाम मात्र का काम लेना, और इन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो इसका ध्यान रखना।

निरीक्षक से यह कह कर, धन्ना ने सुभद्रा को सुनाते हुए निरीक्षक से कहा, कि—ये नये मजदूर विदेशी हैं। यहाँ इनका घर-बार नहीं है। इसलिए मैं इनको अपना आत्मीय मानता हूँ। इनसे कह दो, कि इन्हें जिस वस्तु की आवश्यकता हो, मेरे यहाँ से ले आया करें। श्रम करने के पश्चात् ये लोग दाल-साग के बिना ही रोटी खाते होंगे। मेरे यहाँ छाछ होती ही है, इस लिए इन लोगों से कह दो, कि ये मेरे यहाँ से छाछ ले आया करें।

धन्ना का कथन सुनकर सुभद्रा को यह विचार तो हुआ, कि इस पुरुष का स्वर परिचित जान पड़ता है, फिर भी उसने धन्ना

की ओर नहीं देखा । वह सोचती थी, कि यह पर-पुरुष है, और पर-पुरुष को देखना पतिव्रता के लिए दूषण रूप है । धन्ना का कथन समाप्त होते ही, तालाब के निरीक्षक ने धनसार सुभद्रा आदि को धन्ना का कथन सुना दिया, और अपनी ओर से यह भी कह दिया, कि—ये अपने मालिक हैं, इस लिए इनके यहाँ से छाछ आदि लाने में किसी तरह का संकोच मत करना । छाछ ऐसी वस्तु है, कि जो असम्बन्धित व्यक्ति के घर से भी लाई जाती है, तो इनमें तो अपना स्वामि-सेवक का सम्बन्ध है ।

धन्ना तथा निरीक्षक का कथन सुनकर, धनसार आदि ने धन्ना के यहाँ से छाछ लाना स्वीकार किया । धन्ना, घर आया । उसने अपनी पत्नी सौभाग्यमंजरी को अपना परिचय सुनाकर, उससे अपने माता-पिता आदि के आने का हाल कहा । सौभाग्यमंजरी, अपना नाम सार्थक करनेवाली थी । वह, सरल विनम्र निरभिमानिनी एवं पति परायणा स्त्री थी । घर के कार्य भी प्रायः वह स्वयं अपने हाथ से ही किया करती थी । धन्ना से जेठ ससुर आदि का आना सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुई । उसने धन्ना से कहा, कि—आप उन सब को घर क्यों नहीं लाये ? उन्हे मेहनत-मजदूरी में ही क्यों लगे रहने दिया ? उन सब को कैसा कष्ट होता होगा । अब आप उन्हे शीघ्र ही बुलवा लीजिये । मेरी समझ में नहीं आता, कि उन्हे पहचान कर भी आपका हृदय क्यों नहीं पसीजा !

सौभाग्यमंजरी के इस कथन से धन्ना को बहुत प्रसन्नता हुई। उसने सौभाग्यमंजरी से कहा, कि—मैं उन्हें घर तो लाऊँगा ही, परन्तु कुछ ठहर कर। मुझे सुभद्रा की परीक्षा करनी है, इसलिए अभी उन लोगों को घर न लाऊँगा। मैंने आज उन लोगो से कह दिया है, कि वे अपने घर से छाछ ले जाया करें।

यह कह कर, धन्ना ने सौभाग्यमंजरी को कुछ वे कार्य बताये, जो सुभद्रा की परीक्षा में सहायक थे। साथ ही उसने सुभद्रा एवं अपनी भौजाइयों के रूप रंग डील-डौल आदि से सौभाग्यमंजरी को परिचित किया, जिससे सौभाग्यमंजरी पहचान सके, कि ये मेरी जेठानी हैं और यह सुभद्रा है।

सुभद्रा तथा उसकी जेठानियाँ, धन्ना के घर से छाछ लाने लगीं। उन्होंने, सास-ससुर के कथनानुसार छाछ लाने के लिए एक-एक दिन का क्रम बना लिया। धन्ना ने, सौभाग्यमंजरी को सब के रंग रूप और आकृति शरीर आदि से परिचित कर ही दिया था, इसलिए सौभाग्यमंजरी ने पहचान लिया, कि यह सुभद्रा है और यह मेरी बड़ी अथवा छोटी जेठानी है। धन्ना के कथनानुसार, सौभाग्यमंजरी समय-समय पर सुभद्रा को बढ़िया भोजन-सामग्री तथा वस्त्राभूषण देने लगती, लेकिन सुभद्रा ने छाछ के सिवा—न तो कभी कोई वस्तु ली ही, न वह किसी वस्तु पर ललचाई ही। तब सौभाग्यमंजरी ने भेद नीति से काम लेना शुरू

किया। वह, सुभद्रा को तो अच्छी छाछ देती, और उसकी जेठानियों को साधारण छाछ देती। धन्ना के यहाँ की छाछ खाकर धनसार आदि बहुत प्रसन्न होते, लेकिन जिस दिन सुभद्रा छाछ लाती, उस दिन सब को अधिक प्रसन्नता होती। क्योंकि, सुभद्रा को सौभाग्यमंजरी अच्छी छाछ दिया करती थी। सुभद्रा द्वारा लाई गई छाछ खाकर धनसार कहने लगता, कि—आज की छाछ बहुत ही अच्छी है, जिस दिन सुभद्रा छाछ लाती है, उस दिन की छाछ का स्वाद अपने घर की छाछ की तरह का होता है; आदि। धनसार द्वारा की जानेवाली प्रशन्सा का, धनसार की पत्नी भी समर्थन करने लगती। सुभद्रा की जेठानियों को, सासू ससुर द्वारा की जानेवाली सुभद्रा की प्रशन्सा बुरी लगने लगी। इसी बीच में एक बात और ऐसी हो गई, कि जिसके कारण सुभद्रा की जेठा-नियों ने छाछ लाना अस्वीकार कर दिया, और कह दिया, कि सुभद्रा की लाई हुई छाछ अच्छी होती है, इसलिए वही छाछ लावे, हम छाछ लाने न जावेंगी।

एक दिन—जब कि छाछ लाने की बारी सुभद्रा की थी—सौभाग्यमंजरी ने एक हण्डा दही मथ कर रख छोड़ा। उसने, उस मथे हुए दही में पानी भी नहीं डाला, और उसमें का मक्खन भी नहीं निकाला। जब सुभद्रा छाछ लेने आई, तब सौभाग्य मंज़री ने छाछ देने के साथ ही वह दही का हण्डा भी यह कह

कर उसे दिया, कि—यह दही तुम्हारे वृद्ध-सासू-ससुर के लिए भेंट देती हूँ। सुभद्रा ने सोचा, कि दूध-दही साधारण वस्तु हैं। इनके यहाँ से छाछ तो प्राय. नित्य ही जाती है, इनने कृपा करके आज दही भी दिया है; इसलिए यह दही लेने में कोई हर्ज नहीं है। इस प्रकार सोचकर, सुभद्रा ने वह दही भी ले लिया। धनसार आदि सभी लोग, दही खाकर बहुत ही प्रसन्न हुए। धनसार, सुभद्रा की प्रशन्सा करने लगा, और उस प्रशन्सा का उसकी पत्नी भी समर्थन करने लगी। सुभद्रा की जेठानियों को, सुभद्रा की प्रशन्सा बहुत ही बुरी लगी। वे आपस में कहने लगीं, कि अब अपने घर का कल्याण नहीं है। सुभद्रा को आज तो दही मिला है, अब देखें कल क्या मिलता है और आगे क्या होता है! इस प्रकार वे, व्यङ्ग-भरे शब्दों में सुभद्रा को अस्पष्ट दूषण लगाने लगीं। उनकी बातें सुभद्रा के हृदय में तीर की तरह लगीं, फिर भी वह कुछ नहीं बोली।

इस घटना के दूसरे दिन, छाछ लाने के लिए सुभद्रा की कोई जेठानी नहीं गई। तीनों ही ने कह दिया, कि—अब हम छाछ लाने न जावेंगी, किन्तु सुभद्रा ही जावेगी। क्योंकि, सुभद्रा को छाछ भी अच्छी मिलती है, तथा दही भी मिलता है। बहुत कहने सुनने पर भी जब उन तीनों में से कोई छाछ लाने नहीं गई, तब धनसार ने सुभद्रा से छाछ ले आने के लिए कहा। जेठानियों की

बातों के कारण, सुभद्रा का हृदय तो छाछ लाने के लिए जाने का नहीं होता था, फिर भी ससुर का कहना मानकर सुभद्रा छाछ लाने के लिए गई। उस दिन से सुभद्रा ही छाछ लाया करती।

परीक्षा और मिलन

बन्धु स्त्री भृत्यवर्गस्य बुद्धेः सत्वस्यचात्मनः ।
आपन्निकषपाषाणे नरो जानाति सारताम् ॥

अर्थात्—पुरुष आपत्ति रूपी कसौटी पर, बन्धु स्त्री नौकर-चाकर बुद्धि और अपने आत्मा का सत्व, इन सब को कस कर इनका सार देखते हैं।

इस कथन का सार यह है, कि बन्धु स्त्री आदि की परीक्षा विपत्ति के समय ही होती है। जब तक विपत्ति नहीं है, किन्तु सम्पत्ति है, तब तक तो बन्धु भी सहायता के लिए तैयार रहते हैं, स्त्री भी सती तथा आज्ञाकारिणी रहती है, नौकर-चाकर

भी साथ रह कर सेवा करते हैं, बुद्धि भी ठीक काम देती है, और साहस तथा उत्साह भी रहता है। लेकिन विपत्ति के समय प्रायः इसके विपरीत होता है। इसलिए इन सब की कसौटी का साधन सम्पत्ति का समय नहीं है, किन्तु विपत्ति का समय है। विपत्ति के समय भी जो बन्धु सहायता करे, जो स्त्री सती तथा आज्ञाकारिणी रहे, जो सेवक सेवा करे, जो बुद्धि ठीक रहे और जो साहस उत्साह रहे, वे ही विश्वास-योग्य हैं। विपत्ति रूपा कसौटी पर कसे बिना किसी पर विश्वास कर लेना मूर्खता है।

धन्ना, चतुर था। वह, नीति के इस कथन को ठीक समझता था। इसलिए उसने, विपत्ति में पड़ी हुई सुभद्रा की परीक्षा करने का विचार किया। उसने सोचा, कि सम्पत्ति के समय तो स्त्री का सती रहना कोई आश्चर्य की बात ही नहीं है, और विपत्ति आने पर कई स्त्रियाँ आवेश में आकर स्वयं को पति के लिए कष्ट में डाल लेती हैं, परन्तु दीर्घ-कालीन कष्ट सहने के पश्चात सुख के प्रलोभन मे न पड़ कर सतीत्व की रक्षा करनेवाली स्त्रियाँ बहुत कम होती हैं। बहुत-सी स्त्रियाँ जो सम्पत्ति के समय पतिव्रता रहती हैं, और कभी-कभी पति के लिए कष्ट भी सहती है, कष्ट सहती-सहती अकुला जाती हैं, तथा अवसर आने पर सुख के बदले अपना सतीत्व बेंच देती हैं। ऐसी तो कोई ही स्त्री निकलती है, जो बहुत काल तक दुःख सह कर भी सतीत्व की रक्षा करे, सामने आये

हुए सुख को सतीत्व के लिए ठुकरा दे, और इस प्रकार अपना चरित्र किसी भी दशा में कलंकित न होने दे। सुभद्रा ने अब तक तो सतीत्व का परिचय दिया है, लेकिन अब इसकी दूसरी परीक्षा करके यह देखना उचित है, कि बहुत काल के दुःख से यह घबरा गई है या नहीं! और यदि घबरा गई है, तो दुःख-मुक्त होने एवं सुख प्राप्त करने के लिए अपने सतीत्व की उपेक्षा कर सकती है या नहीं। कुसुमश्री एवं सोमश्री ने तो राजगृह में ही रह कर यह स्पष्ट कर दिया, कि हम कष्ट नहीं सह सकतीं। इसलिए उनकी परीक्षा की बात ही नहीं हो सकती। जो पहले ही परीक्षा-क्षेत्र में उतरने से डरता है, वह परीक्षा क्या देगा। परीक्षा तो उसी की ली जा सकती है, जो परीक्षा के क्षेत्र में है।

सुभद्रा की परीक्षा लेने का विचार करने के साथ ही, धन्ना ने अपनी भौजाइयों अपनी प्रजा एवं राजा शतानिक की परीक्षा लेने का भी विचार किया। उसने सोचा, कि माता-पिता वृद्ध हैं. इस लिए उन्हें परीक्षा देने का कष्ट न देना चाहिए। और भाई तो मुझ से सदा ही विरुद्ध रहे तथा रहते हैं। इसलिए यदि उनकी परीक्षा लेने का प्रयत्न करूँगा, तो वे परीक्षण कार्य को दूसरा ही रूप देंगे। इसलिए मुझे भौजाइयों की परीक्षा लेनी चाहिए। क्योंकि, भौजाइयाँ मुझ से स्नेह करती हैं, इस कारण परीक्षा के अन्त में रहस्य प्रकट हो जाने पर वे मुझ से अप्रसन्न न होंगी।

भौजाइयों की परीक्षा लेने के साथ ही मुझे अपनी प्रजा की भी यह परीक्षा लेनी चाहिए, कि मेरी प्रजा में सच्ची बात कहने का साहस है या नहीं, और वह मेरे प्रति जो भक्ति बताती है, वह भक्ति कृत्रिम है या अकृत्रिम, तथा उसमें मेरा साथ देने की वीरता और शक्ति है या नहीं। इसी प्रकार जो राजा शतानिक स्वयं को न्याय-प्रिय समझता है, उसकी भी परीक्षा लेनी चाहिए, कि वह अपने प्रिय दामाद का अन्याय सह सकता है या नहीं! यदि वह अपने स्नेही द्वारा किया गया अन्याय सह ले, उसके विरुद्ध कुछ न कहे, तब तो उसकी न्याय-प्रियता एक पाखण्ड ही है।

सुभद्रा की जेठानियों ने छाछ लाना छोड़ दिया था, इसलिए सुभद्रा ही धन्ना के घर से छाछ लाया करती थी। एक दिन—जब कि वह धन्ना के घर मे छाछ लेने आई हुई थी—उससे सौभाग्य-मंजरी ने उसका परिचय पूछा। धन्ना भी वहीं छिप कर बैठा हुआ था। सौभाग्यमंजरी के पूछने पर सुभद्रा ने पहले तो यह कह कर वहाँ से निकलना चाहा, कि हम मजदूरी करनेवाले लोग हैं, परन्तु सौभाग्यमंजरी ने उने प्रेमपूर्वक रोक लिया, जाने नहीं दिया। उसने, सुभद्रा से उसका परिचय बताने के लिए आग्रह पूर्ण अनुरोध किया। विवश होकर सुभद्रा ने सौभाग्य-मंजरी से कहा, कि—मैं राजगृह के गोभद्र सेठ की लड़की हूँ। मेरे तीन जेठ तीन जेठानियाँ और सासू-ससुर यहीं साथ ही हैं।

मेरे पति धन्नाजी, अपने भाइयों द्वारा कलह उत्पन्न होने के कारण न मालूम कहाँ चले गये। हम सब लोग उन्हें ही ढूँढ़ने निकले हैं, परन्तु मार्ग में हम लोगों को चोरों ने लूट लिया, हमारे पास कुछ भी न रहने दिया, इसमे जीवन-निर्वाह करने के लिए हम सब लोग आपके तालाब पर मजदूरी करते हैं। यही है मेरा परिचय।

यह कहती हुई सुभद्रा की आँखों से आँसू गिरने लगे। वह, जाने के लिए बढ़ी, इतने ही में उसके सामने धन्ना आ खड़ा हुआ। अपने सामने एक अपरिचित पुरुष को देखकर, सुभद्रा सहम उठी। वह सोचने लगी, कि इस समय मैं दूसरे के घर में भी हूँ, और यह पुरुष भी सामने खड़ा है, इसलिए ऐसा न हो, कि यहाँ मुझे किसी प्रकार के संकट में पड़ना पड़े। समझ में नहीं आता, कि यह पुरुष किस उद्देश्य से इस तरह मार्ग रोक कर खड़ा है।

असमंजस में पड़ी हुई सुभद्रा इस प्रकार सोच रही थी, इतने ही में धन्ना ने कहा, कि—हे सुन्दरी! तुम किस विचार में पड़ी हुई हो? तुम किसी प्रकार का भय न करो। मैं, तुम्हे कष्ट-मुक्त करने की हितकामना से ही तुम्हारा मार्ग रोक कर खड़ा हूँ, और तुम से कहता हूँ, कि तुम अपना यह सुन्दर शरीर और यह रूप-यौवन मिट्टी ढोने मे नष्ट न करो, किन्तु यहाँ आनन्द पूर्वक रहकर मेरे हृदय तथा इस घर की स्वामिनी बनो। अभी

अपना परिचय देते हुए तुमने जो कुछ कहा, वह मैंने भी सुना है। तुम्हारा जो निठुर पति तुम ऐसी कोमलाङ्गिनी को त्याग कर चला गया है, उसकी खोज मे तुम कब तक कष्ट उठाओगी और अपना जीवन नष्ट करोगी ? क्या पता है, कि तुम्हारा वह पति जीवित है या नहीं, और यदि जीवित भी है, तो उसके हृदय में तुम्हारे प्रति स्थान भी है या नहीं। इस तरह के कष्ट सहने और युवावस्था व्यतीत हो जाने के पश्चात यदि तुम्हारा पति मिला भी तो किस काम को ? और उस दशा में भी वह तुम्हे आदर देगा या नहीं, यह भी कौन जाने। यदि उसके हृदय मे तुम्हारे प्रति प्रेम होता, तो वह तुम्हे त्यागकर ही क्यों जाता ! और अब क्या ठीक है, कि उसने अपना हृदय किसी दूसरी स्त्री को न सौंप दिया हो। इसलिए उसकी आशा छोड, इस घर को अपना घर और मुझे अपना पति बना कर, शेष जीवन आनन्दपूर्वक व्यतीत करो। तुम्हारे जिन जेठो के कारण तुम्हारा पति तुम्हे भी त्याग गया है, उन जेठो के साथ कष्ट न सहो।

धन्ना को, सुभद्रा के सामने मार्ग रोक कर खड़ा और इस प्रकार कहते देखकर सौभाग्यमंजरी तो हँसने लगी, परन्तु धन्ना की बातों ने सुभद्रा के हृदय मे आग-सी लगा दी। उसको धन्ना की बातें हृदय में लगे हुए तीर की तरह असह्य हुई। कुछ देर तो वह इस बात का निश्चय न कर सकी कि इस समय मुझे क्या

करना चाहिए, लेकिन इस अवस्था में उसे अधिक समय तक न रहना पड़ा। उसने साहस-पूर्वक धन्ना पर रोष प्रकट करते हुए उससे कहा, कि—तुम किससे क्या कह रहे हो, इसका विचार करो। तुम चाहते हो, कि जिस तरह तुमने सदाचार का मस्तक ठुकरा दिया है उसी तरह मैं भी सदाचार को त्याग कर तुम्हारे साथ भ्रष्ट तथा कलङ्कित जीवन व्यतीत करूँ, लेकिन मुझ से इस तरह की आशा करना व्यर्थ है। तुम्हारी दुष्कामना मुझ से कदापि पूरी नहीं हो सकती। मैं, तुम ऐसे दुष्ट पुरुषों की ओर देखना भी पाप मानती हूँ, तो तुम्हारी बात मान कर दुराचार में तो पड़ ही कैसे सकती हूँ। मजदूरी करना मैं अनुचित नहीं मानती, कष्ट सहना मेरी दृष्टि में तप है, लेकिन तुम्हारा बताया हुआ मार्ग अपनाना, अनुचित एवं अपराध है। मुझ को यह पता न था, कि तुम ऐसी वृत्ति के पुरुष हो, अन्यथा मैं तुम्हारे यहाँ पाँव भी न रखती। अपने यहाँ आई हुई किसी पर-स्त्री के सामने ऐसा प्रस्ताव करने में तुम्हें लज्जा भी नहीं हुई? मुझे तुम्हारी इस पत्नी के व्यवहार पर और भी आश्चर्य हो रहा है, जो बैठी हुई-अपने पति का अनुचित कार्य देखकर भी-हँस रही है, और अपने पति को उचित शिक्षा भी नहीं देती। रावण की पत्नी मन्दोदरी ने भी अपने पति को समय पर उचित बात कही थी, लेकिन यह तो पति की अनुचित बात देख-सुन कर और प्रसन्न

हो रही है ! मैं तुम से कहती हूँ, कि तुम मेरा मार्ग छोड़ दो। मुझे जाने दो। मेरे सौन्दर्य की अग्नि में भस्म मत होओ। तुम्हारा यह घर आदि मेरी दृष्टि में तुच्छ है। मैं, तुम्हारी इस सम्पदा पर तो क्या, इन्द्र की सम्पदा पर भी नहीं ललचा सकती। मैं अपना स्पष्ट निर्णय सुनाये देती हूँ, कि चाहे मेरे प्राण भी जावें, मैं अपना सतीत्व कदापि नष्ट नहीं कर सकती। सतीत्व के सन्मुख, मैं अपने प्राणों को तुच्छ समझती हूँ। इसलिए तुम मुझ से अपनी दुराशा पूर्ण होने की आशा मत करो, और मार्ग से हट जाओ। मैं, अपने पति के सिवा संसार के समस्त पुरुषों को अपने पिता भ्राता के समान मानती हूँ। अपने पति के सिवा, मैं संसार के किसी भी पुरुष को नहीं चाह सकती।

सुभद्रा की दृढ़तापूर्ण बातें सुन कर धन्ना हृदय मे तो प्रसन्न हुआ, फिर भी उसने सुभद्रा से कहा, कि—बस—बस तेरी बातें रहने दे ! मैं जानता हूँ, कि तू कैसी पतिव्रता है। यदि तू पतिव्रता होती, और तेरे हृदय में पूर्ण पति-प्रेम होता, तो पति का वियोग होने पर भी अब तक जीवित न रहती, किन्तु मर जाती। खाती है, पीती है, और जीवित है, फिर भी अपने को पतिव्रता कहना यह तो केवल एक ढोंग है। मेरे सामने इस तरह का ढोंग मत चला। मैं सोचता हूँ कि तू कष्ट न भोगे, और इसीलिए मैं तुझे अपनी बनाना चाहता हूँ, लेकिन तू मुझे पतिव्रत का पाखण्ड बता

रही है। मैं तेरे हित के लिए तुझ से यही कहता हूँ, कि तू मेरा कथन स्वीकार कर ले!

घन्ना का यह कथन, सुभद्रा के लिए और भी अधिक दुःख-दायी जान पड़ा। उसने घन्ना से कहा, कि—मैं पतिव्रता होकर भी पति के वियोग में क्यों जीवित हूँ, इससे तुम्हे क्या पचायत? मुझे, यह आशा है कि मेरे पति मुझे मिलेंगे। उस आशा-तन्तु के सहारे ही मैं जीवित हूँ, अन्यथा तुम्हारे लिए यह कहने को शेष न रहता, कि पति-वियोग का दुःख होने पर भी क्यों जीवित हो! अब तुम मार्ग से अलग हो जाओ, जिससे मैं अपने स्थान को जाऊँ। मुझे यहाँ आये बहुत देर हुई है, इसलिए मेरे घर के लोग चिन्ता करते होंगे।

घन्ना ने कहा, कि—यह तो ठीक, परन्तु यदि तुम्हे तुम्हारा पति मिल जावे, तो क्या तुम उसे पहचान लोगी? और पहचान लोगी तो कैसे? सुभद्रा ने उत्तर दिया, कि—मैं अपने पति को अवश्य ही पहचान लूँगी। मैं, उन्हें उनकी आकृति एवं वाणी से पहचान कर भी विश्वास के लिए उनसे वे बातें भी जानूँगी, जो गुप्त हैं। मतलब यह कि जिस तरह दमयन्ती ने नल को पहचाना था, उसी तरह मैं भी अपने पति को पहचान लूँगी।

सुभद्रा को परीक्षोत्तीर्ण मान कर, घन्ना ने मुसकराते हुए कहा, कि—तुम्हारा पति क्या वही घन्ना है, जो पुरपैठान में उत्पन्न हुआ

था, वहाँ से चलकर उज्जैन आया था, तथा उज्जैन से राजगृह आया था ? जिसने राजगृह में कुसुमपाल सेठ का सूखा हुआ बाग हरा करके कुसुमपाल की लड़की कुसुमश्री के साथ विवाह किया था, मस्त सिंचानक हाथी को वश करके राजा श्रेणिक की लड़की सोमश्री के साथ विवाह किया था, और एकाक्ष धूर्त के पंजे से गोभद्र सेठ को बचाकर तुम्हारे साथ विवाह किया था, वही धन्ना तुम्हारा पति है ? तुम्हारा पति वही धन्ना है, जो भाइयों द्वारा उत्पन्न कलह से बचने के लिए रात के समय राजगृह से चला गया है ? वही धन्ना तुम्हारा पति है, या दूसरा ?

धन्ना की बातें सुनकर, सुभद्रा के हृदय में पति-प्रेम की एक लहर दौड गई। उसने धन्ना की ओर देखा, और धन्ना को पहचानते ही वह दौड कर उसके पैरों पड कहने लगी—नाथ! मुझे क्षमा करो। मैंने आपको नहीं पहचाना था, इसी कारण आप के लिए कठिन शब्द कहे।

उस समय सुभद्रा का हृदय बहुत ही आनन्दित था। उसके हृदय के आनन्द का पार न था। वह, धन्ना के पैरों पर पड़ी हुई बार-बार क्षमा की प्रार्थना कर रही थी। धन्ना ने सुभद्रा को उठा कर उससे कहा, कि—तुम जिन बातों के लिए क्षमा चाह रही हो, वे बातें ऐसी नहीं हैं कि जिनके लिए तुम्हे क्षमा चाहनी पड़े। तुम्हारी उन बातों से, मेरा हृदय तुम्हारी ओर अधिक आकर्षित

हुआ है। यदि तुम-मुझ से कड़ी बातें न कह कर मधुर बातें करतीं, तब तो मेरे हृदय मे तुम्हारे प्रति वह स्थान न रहता जो अब है, और तुम उस परीक्षा में भी अनुत्तीर्ण रहतीं, जो मेरे द्वारा ली जा रही थी। लेकिन तुमने मुझ से ऐसी बातें कहीं, पतिव्रत में ऐसी दृढ़ता बताई, जिससे परीक्षा में भी उत्तीर्ण हुई हो, तथा मेरे हृदय पर भी पूर्ण आधिपत्य कर सकी हो। तुम्हारी ओर से मुझे यह विश्वास हो गया है, कि तुम पूर्ण पतिव्रता हो। तुमने मेरे लिए बहुत कष्ट उठाया है। यदि तुम चाहतीं, तो सोमश्री तथा कुसुमश्री की तरह अपने पिता के घर रह सकती थीं, परन्तु तुम्हारे हृदय मे मेरे प्रति जो अतुल प्रेम है, उसने तुम्हें कष्ट सहने के लिए विवश कर दिया, और इसी कारण तुम अपने पिता के घर नहीं रहीं।

इस प्रकार कह कर, धन्ना ने सुभद्रा को सान्त्वना दी। सौभाग्य मंजरी भी सुभद्रा के पास आई। उसने, सुभद्रा को धन्यवाद देकर उसकी प्रशन्सा की। धन्ना ने सुभद्रा से कहा, कि— अब तुम यहीं ठहरो, मैं एक काम और करना चाहता हूँ। धन्ना की आज्ञा मानकर, सुभद्रा, धन्ना के घर ही ठहर गई। सौभाग्य-मंजरी, सुभद्रा का आदर करके उसकी सेवा करने लगी।

सुभद्रा जब छाछ लेकर बहुत देर तक नहीं लौटी, तब धनसार को बहुत ही चिन्ता हुई। वह कहने लगा, कि सुभद्रा ने इतनी

देर कभी भी नहीं लगाई थी, फिर आज क्या कारण है जो वह इतनी देर होने पर भी नहीं आई ! वह किसी सङ्कट में तो नहीं पड़ गई है । इस प्रकार कहते हुए धनसार ने, अपनी तीनों बहुओं से सुभद्रा की खोज करने के लिए कहा । धनसार का कथन मानकर, सुभद्रा की खोज करने के लिए सुभद्रा की तीनों जेठानियाँ गईं तो, परन्तु यह बड़-बड़ाती हुई, कि हम पहले ही कहती थीं कि सुभद्रा की प्रशन्सा मत करो, यह प्रशन्सा किसी दिन कुल में कलङ्क लगवा देगी ! इसी प्रकार जिस दिन वह दही लाई थी, हमने उसी दिन अनुमान कर लिया था कि कुछ घोटाला है !

इस प्रकार बड़बड़ाती हुई, धन्ना की तीनों भौजाइयाँ धन्ना के यहाँ गईं । वहाँ उनने सुभद्रा के विषय में पूछ ताछ की, परन्तु धन्ना ने उन लोगों को यह उत्तर देकर लौटा दिया, कि—तुम लोग जाओ, वह तो जिसकी थी उसे मिल गई ! धन्ना का उत्तर सुनकर, उसकी भौजाइयों ने यही समझा, कि सुभद्रा को इसी ने अपने यहाँ रख लिया है, और सुभद्रा इसकी उपपत्नी बन गई है । वे, रोती-चिल्लाती अपने स्थान पर आईं । उनने धनसार आदि से कहा, कि—सुभद्रा को उस आदमी ने अपनी उपपत्नी बनाकर रख लिया है, जिसका यह तालाब बन रहा है, जो इस नगर का स्वामी कहाता है, तथा जिसके यहाँ सुभद्रा छाछ लाने गई थी ।

बहुओं से यह सुनकर, धनसार बहुत ही दुःखी हुआ। उस पर जैसे विपत्ति का वज्र ही टूट पडा। वह विलाप करता हुआ कहने लगा, कि मुझे धन्ना और धन के जाने या मजदूरी करने से वैसा दुःख नहीं हुआ था, जैसा दुःख सुभद्रा के जाने से हुआ है। सुभद्रा के जाने से, मेरी और कुल की प्रतिष्ठा नष्ट हुई है। मुझे यह नहीं मालूम था, कि गोभद्र की बेटी एवं मेरी पुत्रवधू इस तरह चली जावेगी, अन्यथा या तो मैं उसे साथ ही न लाता, या इस नगर में न रुकता।

इस प्रकार कहता हुआ, धनसार बहुत विलाप करने लगा। उसके तीनों लड़कों ने उससे कहा, कि—पिताजी, इस तरह दुःख करने से क्या लाभ होगा? सुभद्रा के इस तरह जाने से अपने कुल को जो कलङ्क लगता है, वह हमारे लिए भी असह्य है। आप कुछ भोजन कर लीजिये, फिर अपन चारों इस नगर के प्रतिष्ठित साहूकारों से मिलेंगे। जिसने सुभद्रा को अपने घर में बलात् रोक लिया है, उसकी अनुचित कार्यवाही के विरुद्ध बोलने वाला इस नगर में कोई तो निकलेगा ही।

लडकों ने इस तरह समझाबुझाकर धनसार को शान्त किया। फिर भोजन करके धनसार तथा उसके परिवार के सब लोग बाजार में जाकर जोर-जोर से रोने चिल्लाने लगे। लोगों के पूछने पर, धनसार ने अपनी समस्त कष्ट-कथा लोगों को सुनाई।

धनसार की बातें सुनकर बाजार के लोग कहने लगे, कि यहां के नगर-नायक के विरुद्ध अब तक तो ऐसी बात कभी सुनने में नहीं आई, कि उनने किसी की बहू-बेटी पर बुरी दृष्टि दी हो। लेकिन आज यह क्या सुना जा रहा है! जो प्रजा के लिए पिता के तुल्य है, क्या उस नगर-नायक की मति भ्रष्ट हो गई है, या उसको किसी प्रकार का अभिमान हो गया है, अथवा इन लोगों को दीन तथा विदेशी जान कर उसने इनकी पुत्र-वधू छीन ली है! कुछ भी हो, अपने को साव-धान होकर इन गरीबों की सहायता करनी चाहिए, और इनकी जो स्त्री नगर-नायक के यहाँ है, वह इन्हे वापिस दिलानी चाहिए। यह बात केवल इन्हीं लोगों तक सीमित नहीं है, किन्तु इस घटना पर से भविष्य विषयक विचार करना भी उचित है। नगर-नायक ने आज इन लोगों के परिवार की स्त्री को बलात् रोक लिया है, तो कल अपने घर की किसी स्त्री को भो रोक लेगा! पड़ोस के मकान में लगी हुई आग के लिए यह समझना चाहिए, कि यह आग हमारे ही घर में लगी है, और ऐसा समझकर वह आग बुझाने का प्रयत्न करना चाहिए।

बाजार के लोगों ने, नगर के पंचों को एकत्रित करके उन्हे सारी घटना से परिचित तथा धन्ना के पास जाने के लिए तैयार किया। पंच लोग, धनसार, उसकी पत्नी, उसके पुत्र एवं पुत्रवधुओं को साथ लेकर धन्ना के यहाँ गये। उनने, धनसार की फ़रियाद

धन्ना को सुनाकर उसने कहा, कि—आप महाराजा शतानिक के जामाता और इस नगर के राजा हैं। आपके लिए, दूसरे की स्त्री माता-बहन के समान होनी चाहिए। आज तक तो आपका व्यवहार ऐसा ही देखा गया, लेकिन आज आपके विषय में इन लोगों की फरियाद सुनकर हम सब लोगों को दुख एवं आश्चर्य हुआ है, तथा इसीलिए हम लोग आपके पास उपस्थित हुए हैं।

पंचों का कथन सुनकर, धन्ना ने उत्तर में उनसे कहा, कि चाँदनी यदि चाँद में मिल जावे, तो इसमें किसी के लिए कहने सुनने की कौन-सी बात है। इसी प्रकार प्रेमिका यदि प्रेमी से मिल जावे तो क्या बुरा है?

धन्ना का यह उत्तर सुनकर, सब लोग बहुत ही आश्चर्य में हुए। वे आपस में कहने लगे, कि यह तो और भी बुरी बात है। यह तो ऐसा कह कर दूसरे की स्त्री अपनी बनाने का विधान ही कर रहे हैं! पंच लोग आपस में इस तरह बातें कर रहे थे, इतने ही में धन्ना ने धनसार को एक ओर ले जाकर उससे कहा, कि पिताजी, मैं दूसरा कोई नहीं, किन्तु आपका धन्ना हूँ। धन्ना से यह सुनकर तथा उसे पहचान कर, धनसार को बहुत प्रसन्नता हुई। पूर्व-दुःख के स्मरण, एवं धन्ना मिल गया इसी हर्ष के कारण उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे। धन्ना ने उससे कहा, कि—

पिताजी, अभी कुछ कहने-सुनने का समय नहीं है। आप घर में पधार कर स्नान भोजन करिये।

यह कह कर, धन्ना ने धनसार को घर में भेज दिया, जहां सुभद्रा और सौभाग्यमंजरी उसकी सेवा सुश्रुषा करने लगीं। धनसार को घर में भेजकर, धन्ना फिर पंचों के पास आया। उसने पंचों से कहा, कि—जिनका झगड़ा था उन्हें मैंने समझा लिया, इसलिए अब तो कोई झगड़ा नहीं रहा न? धन्ना के प्रश्न का पंच लोग कुछ उत्तर दें, उससे पहले ही धन्ना के तीनों भाई चिल्लाकर कहने लगे, कि—इसने हमारे पिता का न मालूम क्या किया है! न मालूम उन्हे कैद कर दिया है, या मार डाला है! हमारे छोटे भाई की पत्नी तो इसने अपने घर में बन्द कर ही रखी है, हमारे पिता की भी न मालूम क्या दशा की है!

भाइयों का कथन सुन कर धन्ना ने उनसे कहा, कि—आप लोगों के पिता को न तो मैंने कैद ही किया है, न मार ही डाला है। आप लोग मेरे साथ चलो, मैं आपको आपके पिता से मिलाये देता हूँ। धन्ना के यह कहने पर भी, उसके भाई धन्ना के साथ जाने को तैयार नहीं हुए। जब पंचों ने उन्हें विश्वास दिलाया, तब वे लोग धन्ना के साथ में गये। अपने भाइयों को घर में ले जाकर धन्ना ने उनसे भी यही कहा, कि—आप लोग मुझे क्षमा करो, मैं आपका छोटा भाई धन्ना हूँ। धन्ना को पहचान कर वे

तीनों भी बहुत प्रसन्न हुए। धन्ना ने उन्हें भी पिता की तरह घर में भेज दिया। इसी प्रकार उसने अपनी माता को भी गुपचुप भीतर बुला लिया। बाहर केवल उसकी तीनों भौजाइयां ही रह गईं, और पंच रह गये। धन्ना ने पंचों से कहा, कि—वे तीनों भी जिसके थे उसमें मिल गये। ये देखो उनके हस्ताक्षर। धन्ना का कथन सुन कर, पंच लोग आश्चर्यचकित रह गये। वे लोग कुछ निश्चय न कर सके, कि यह क्या मामला है। धन्ना ने संकेत द्वारा पंचों को कुछ समझा भी दिया, इससे वे पंच लोग उठकर चल दिये। पंचो को जाते देख, धन्ना की भौजाइयाँ दुःखित हो पंचों से कहने लगीं, कि—इस आदमी ने हमारे ससुर और पतियों को न मालूम कहाँ भेज दिया, और क्या किया। हमारी सासू भी न मालूम कहाँ गायब कर दी गई है। यहां हमारा कोई साथी सहायक नहीं रहा। इस पुरुष ने, हमारे घर के सभी लोगों को अपने घर में बन्द कर लिया। अब हम कहां जावें! हम बिलकुल अनाथ हो गई हैं। यदि पंच लोग भी हमारी सहायता न करेंगे, तो फिर हमारी सहायता कौन करेगा!

धन्ना की भौजाइयों ने पंचों से इस प्रकार बहुत कहा सुना, परन्तु धन्ना द्वारा किये गये संकेत के कारण पंचों ने यही उत्तर दिया, कि—जब तुम्हारी देवरानी और तुम्हारे पति ससुर आदि ही समझ गये, तब हम क्या कर सकते हैं। और ये इस नगर

के स्वामी हैं, इसलिए भी हम क्या कर सकते हैं। इस प्रकार उत्तर देकर, पंच लोग अपने-अपने घर चले गये। यह देखकर धन्ना की भौजाइयों को बहुत निराशा हुई, फिर भी उनने साहस नहीं छोड़ा। लोगों से पूछ-ताछ करके उनने यह मालूम कर लिया, कि जिसने हमारी देवरानी एवं सासू-ससुर तथा हमारे पतियो को अपने यहां रख कर उनसे हमारा वियोग कराया है, वह, कौशम्बी के महाराजा शतानिक का जामाता और उनके अधीन इस नगर का राजा है। यह जान कर, वे तीनों शतानिक के यहाँ पुकार करने गईं। राजा शतानिक ने उन तीनों को अपने सामने बुलाकर उनसे पूछा, कि—तुम लोगो को क्या दुःख है? धन्ना की तीनों भौजाइयों ने, राजा शतानिक को सब वृत्तान्त आद्योपान्त कह सुनाया, और उससे प्रार्थना की, कि आपके दामाद के पंजे मे हमारे मनुष्यों को छुडवा दीजिये।

फरियाद सुनकर, शतानिक को बहुत विचार हुआ। एक ओर तो यह प्रश्न था कि जिसके विरुद्ध फरियाद है वह मेरा दामाद है, और दूसरी ओर न्याय का प्रश्न था। थोडी देर के लिए शतानिक के हृदय मे दोनों प्रश्नो का द्वन्द्व होता रहा, परन्तु अन्त में न्याय की विजय हुई। शतानिक ने यह निर्णय किया, कि यदि मैं इन स्त्रियों की फरियाद पर ध्यान न दूँगा, जामाता के विरुद्ध फरियाद होने के कारण फरियाद की उपेक्षा कर दूँगा, तो

अराजकता फैल जावेगी और लोगों में मेरी निन्दा होगी। इसके विरुद्ध यदि मैं न्याय के सन्मुख दामाद की भी उपेक्षा कर दूँगा, तो भविष्य में ऐसा अपराध करने का किसी का साहस भी न होगा, तथा लोगों में मेरी प्रशन्सा भी होगी। इस प्रकार सोचकर, उसने न्याय करने का ही निश्चय किया।

राजा शतानिक ने, धन्ना की तीनों भौजाइयों को आश्वासन देकर उनके लिए ठहरने आदि का प्रबन्ध करा दिया। पश्चात् उसने धन्ना के नाम एक पत्र लिखा, जिसमें फरियाद का उल्लेख करते हुए, धन्ना को कुछ उपदेश दिया. और यह सूचित किया. कि फरियाद से सम्बन्धित चारों पुरुष तथा दोनों स्त्रियों को यहाँ भेज दिया जावे। शतानिक का दूत. पत्र लेकर धन्ना के पास गया। धन्ना ने शतानिक का पत्र पढ़ा, लेकिन उसने उस पत्र की कोई अपेक्षा नहीं की, और दूत से कहा कि—तुम महाराजा से कह देना कि जिसके आदमी उसको मिल गये, इसमें आपका क्या! आप इसमें अनावश्यक हस्तक्षेप करने का प्रयत्न न करें।

दूत ने जाकर शतानिक को धन्ना का उत्तर सुनाया। धन्ना का उत्तर अनुचित मानकर, शतानिक को बहुत क्रोध हुआ। वीर-रस जागृत होने के कारण, उसकी आंखें लाल हो गईं। उसने तत्क्षण दूसरा दूत भेज कर धन्ना को यह सूचना दी, कि या तो तुम महाराजा, शतानिक की आज्ञानुसार उन छहों स्त्री-पुरुषो को

महाराजा की सेवा में भेज दो, अन्यथा युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। शतानिक द्वारा दी गई यह चुनौती, धन्ना ने स्वीकार कर ली। उसने दूत से कहा कि—हम युद्ध के लिए तैयार हैं, तुम महाराजा से कह दो कि वे आवें।

दूत को विदा करके, धन्ना ने अपने नगर के लोगों को बुला कर उन्हें सब वास्तविक बातों से परिचित किया, और राजा द्वारा दी गई चुनौती भी सुनाई। साथ ही यह भी कहा, कि मैंने राजा द्वारा दी गई चुनौती स्वीकार कर ली है। यद्यपि महाराजा जो कुछ जानते हैं उसके आधार पर उनकी युद्ध-तैयारी अनुचित नहीं है, और ऐसी दशा में अपना युद्ध करना अनुचित भी है, फिर भी अपने को कायरता न दिखानी चाहिए, किन्तु युद्ध के लिए तैयार तो रहना ही चाहिए, और आवश्यकता होने पर युद्ध करना भी चाहिए। मेरा अनुमान है, कि युद्ध करने से पहले ही वास्तविकता प्रकट हो जावेगी जिससे युद्ध होगा ही नहीं, लेकिन यदि हम अभी से वास्तविकता प्रकट कर देंगे, या युद्ध के लिए तत्परता न दिखावेंगे, तो अपनी गणना कायरों में होगी। राजा शतानिक यही कहेंगे, कि—बनिये तो बनिये। वे युद्ध करना क्या जाने! राजा को यह कहने का अवसर न मिले, और भविष्य में वह सहसा युद्ध की चुनौती न दे, इसके लिए अपने को युद्ध के लिए तैयार तो होना ही चाहिए।

प्रजा ने, धन्ना की बात स्वीकार की। नगर के लोग, सैनिकों के रूप में सज्ज हो गये। धन्ना भी सेनापति बन कर सेना के आगे हुआ, और नगर के बाहर शतानिक की सेना की प्रतीक्षा करता हुआ सेना सहित खड़ा रहा। उधर शतानिक ने, दूत द्वारा धन्ना का उत्तर सुना। उसने भी युद्ध का डंका बजवा दिया, और वह भी सेना लेकर धनपुर की ओर चला।

राजा शतानिक का प्रधान, चतुर था। युद्ध की तैयारी देख कर उसने सोचा, कि यह अनायास युद्ध कैसा! और युद्ध भी ससुर दामाद के बीच! इस प्रकार सोच कर, वह युद्ध के लिए जाते हुए शतानिक के पास गया। उसने शतानिक से पूछा, कि—यह युद्ध किस कारण होगा? शतानिक ने, प्रधान को युद्ध के कारण से परिचित किया। प्रधान ने शतानिक से कहा, कि—आप अभी ठहरिये, मैं उन स्त्रियों से भी बात चीत कर लूँ, जिनकी पुकार पर यह युद्ध की तैयारी हुई है। शतानिक ने प्रधान की यह बात स्वीकार की।

प्रधान, धन्ना की भौजाइयों के पास गया। उसने उनसे विस्तृत पूछताछ की! धन्ना की भौजाइयों ने पूछ ताछ का जो उत्तर दिया, उस पर से प्रधान सोचने लगा, कि राजजामाता ने जो यह उत्तर दिया, कि मिलने वाले मिल गये आदि, इस उत्तर का क्या अर्थ! इसके सिवा वे यदि इनकी देवरानी को ही चाहते थे,

तो फिर इनके पति एवं सासू–ससुर को अपने यहाँ क्यों रोक लिया ? और जब उन सब को अपने यहाँ रख लिया, तब इन तीनों स्त्रियों को अपने यहाँ स्थान क्यों नहीं दिया ? इन बातों पर एवं जामाता के उत्तर पर विचार करने से जान पड़ता है, कि इस मामले में कोई रहस्य है।

प्रधान, लौट कर शतानिक के पास आया। उसने शतानिक से कहा, कि—मैंने उन तीनों स्त्रियों से बात चीत की है। उनसे मेरी जो बात चीत हुई, उस पर से मेरा तो यह अनुमान है, कि जामाता ने कोई अनुचित कार्य नहीं किया है, किन्तु वे आपको छका रहे हैं। इसलिए आप युद्ध की तैयारी स्थगित कर दीजिये। ऐसा न हो कि निष्कारण ही युद्ध हो जावे। यदि युद्ध हुआ, तो दोनों ही तरह से अपनी ही हानि है। इसलिए युद्ध करने से पहले सब बातों का भली भांति विचार करना उचित है, जिसमें निष्कारण रक्तपात न हो। मैं जहाँतक समझ पाया हूँ, राज-जामाता ऐसे अन्यायी व्यक्ति नहीं हैं जो परदार को अपनी बनाने का प्रयत्न करें, अथवा किसी पर अत्याचार करें। इसलिए फरियाद करनेवाली स्त्रियों की जिस देवरानी को उनने अपने यहाँ रख ली है, वह जामाता की ही पत्नी होनी चाहिए, और शेष स्त्री पुरुष उनके कुटुम्बी होने चाहिएँ।

प्रधान का यह कथन सुनकर राजा ने कहा, कि—यदि ऐसा

हो, तब तो अच्छा ही है। परन्तु ऐसा ही है इसका विश्वास क्या! और जब ऐसा ही है, तब उनने अपनी भौजाइयों को अपने यहाँ स्थान क्यों नहीं दिया?

प्रधान ने उत्तर दिया, कि—ये सब बातें तो उनसे मिलने और पूछने पर ही मालूम हो सकती हैं। आप अभी युद्ध स्थगित रखें, मैं जामाता के पास जाकर सब बात मालूम करता हूँ।

शतानिक को ठहरा कर, प्रधान धनपुर गया। सेना सहित धन्ना, नगर के बाहर शतानिक की सेना की प्रतीक्षा मे खड़ा हुआ ही था। धन्ना के सामने जाकर प्रधान ने उससे कहा, कि—आपने तो अपने ससुर पर ही चढ़ाई कर दी! क्या अपने ससुर की हत्या करेंगे? धन्ना ने उत्तर दिया, कि—मैं वैश्य हूँ, परन्तु कायर नहीं हूँ किन्तु वीर हूँ। महाराजा ने जब युद्ध की चुनौती दी, तब मैं उसे अस्वीकार करने की कायरता कैसे बता सकता था! प्रधान ने कहा, कि—यह तो ठीक है, परन्तु वास्तविक बात क्या है? 'मिलने वाले मिल गये' आदि आपके उत्तर से मैं समझता हूँ, कि जिन लोगों को आपने अपने यहाँ रोक लिया है, वे सब आपके कुटुम्बी ही हैं। मेरा यह अनुमान सही है न? प्रधान का कथन सुनकर, धन्ना हँस पड़ा। धन्ना को हँसते देख कर, प्रधान को अपने अनुमान पर पूर्ण विश्वास हो गया। उसने धन्ना से कहा, कि—जब ऐसा ही है, तब मेरी समझ से

वे तीनो स्त्रियाँ आपकी भौजाई हैं। परन्तु आपने अपनी पत्नी, अपने पिता-माता और भाइयों को तो अपना लिया, फिर भौजाइयों का क्या अपराध है, जो उन्हे नहीं अपनाया ?

प्रधान के इस कथन के उत्तर मे धन्ना ने कहा, कि—मेरे हृदय मे भौजाइयों के प्रति किसी प्रकार का दुर्भाव नहीं है। मैंने केवल यह देखने के लिए ही उन तीनो को अपने घर में स्थान नहीं दिया, और अपना सम्बन्ध नहीं बताया, कि देखें कोई इनकी पुकार सुनता है या नहीं, और महाराजा दुर्बल का पक्ष लेते हैं या नहीं। प्रधान ने कहा, कि—अब तो आपका उद्देश्य पूरा हो गया न ? अब तो आप अपनी भौजाइयों को अपने यहाँ स्थान देंगे न ? धन्ना ने उत्तर दिया, कि—जिस उद्देश्य से यह सब किया था, वह उद्देश्य पूरा हो गया। फिर मैं भौजाइयों को क्यों न अपनाऊँगा।

प्रधान, लौट कर शतानिक के पास गया। उसने शतानिक से कहा, कि—मेरा अनुमान ठीक निकला। जिन तीन स्त्रियों की फरियाद पर से आपने युद्ध की तैयारी की, वे तीनों स्त्रियाँ आपके जामाता की भौजाइयाँ हैं। इसी प्रकार जिन लोगों को उनने अपने यहां रोक लिया है, उनमें से एक उनकी पत्नी है, दूसरी माता है, और शेष पिता एवं भाई हैं। यदि इस विषयक छान-बीन न की जाती, तो अनावश्यक ही युद्ध हो जाता, और फिर

पश्चात्ताप करना पड़ता। अब आप जामाता की तीनों भौजाइयों को सम्मानपूर्वक उनके पास भेज दीजिये।

प्रधान का यह कथन सुनकर, राजा शतानिक ने प्रधान से कहा, कि—तब तो जामाता ने मुझे खूब ही छकाया! जो हुआ सो हुआ, अब तुम जामाता की भौजाइयों को वास्तविकता से परिचित करके, उन्हें उनके देवर के पास भेज दो।

दोनों ओर की युद्ध-तैयारी रुक गई। प्रधान ने धन्ना की भौजाइयों से कहा, कि—आप लोग अपने देवर के पास जाइये। वे आपको आपके कुटुम्बियों से मिला देंगे। 'देवर' शब्द सुनते ही, धन्ना की भौजाइयाँ आश्चर्य में पड़कर बोलीं, कि—हमारे देवरजी हैं कहाँ, जो हम उनके पास जावें? यदि देवरजी मिल जावें, तब तो हमारा सब कष्ट ही मिट जावे। उनकी खोज में ही तो हम सब को कष्ट सहना पड़ रहा है। प्रधान ने उत्तर दिया, कि—जिनने आपकी देवरानी अपने घर में रख ली है, वे आपके देवर ही हैं। आप उन्हें पहचान ही न सकीं।

प्रधान की बात सुनकर, धन्ना की भौजाइयाँ बहुत प्रसन्न हुईं। प्रधान ने उन तीनों को पालकी में बैठा कर, धन्ना के यहां भेज दिया। धन्ना ने अपनी तीनों भौजाइयों का स्वागत करके उन्हें प्रणाम किया, और अपने अपराध के लिए वह उनसे क्षमा मांगने लगा। उसने उन्हें यह भी बताया, कि—मैंने आप लोगों

को अपने घर में स्थान क्यों नहीं दिया था। धन्ना, इस तरह अपराध मानकर भौजाइयो से क्षमा मांगता था और भौजाइयाँ स्वयं द्वारा सुभद्रा को कहे गये कटु शब्दों के लिए धन्ना तथा सुभद्रा से क्षमा मांगती थीं। वे कहती थीं, कि आप जिस व्यवहार के लिए हमसे क्षमा मांगते हैं, वह तो बिना क्षमा मांगे भी विस्मृत हो जावेगा, परन्तु हमने सुभद्रा को जो कटु शब्द कहे हैं, वे विस्मृत होने योग्य नहीं हैं। नीतिकारों का कथन है, कि—

रोहते शायकैर्विद्धं वनं परशुनाहतम्।
वाचा दुरुक्तं वीभत्सं नापि रोहति वाक्क्षतम्॥

अर्थात्—बाण से हुआ घाव भर जाता है, और कुल्हाडे से कटा हुआ वन भी हरा हो जाता है, लेकिन वीभत्स और कटुवाणी से जो घाव होता है, वह कभी नहीं मिटता।

राजगृह और मार्ग में

—०।०—

सज्जनों के लिए गंगा की उपमा दी जाती है। गंगा, हिमालय पर्वत से निकल कर समुद्र में जाती है। यद्यपि वह वह कर जाती तो है समुद्र में, लेकिन मार्ग में उसके किनारे जो ग्राम नगर हैं, उन्हें भी सुखी बनाती जाती है। वह जहां जन्मी है, वहां के लोग भी उसके द्वारा सुख पाते हैं, जहां समुद्र में मिली है, वहां के लोग भी सुख पाते हैं, और जहां होकर निकली है वहां के लोग भी। वह, मार्ग के ग्राम नगरों की गन्दगी मिटाने स्वरूप उनका दु:ख हरण करके, पीने और कृपि के लिए उत्तम जल देने रूप सुख देती जाती है। इस तरह गंगा के सम्पर्क में

जो भी आता है, गंगा अपनी योग्यतानुसार उसका दुःख हरण करके उसे सुख प्रदान करती है। सज्जनो का भी ठीक यही स्वभाव है। वे भी, अपने सम्पर्क में आये हुए व्यक्ति के दुःख को मिटाकर उसे सुखी बनाने का ही प्रयत्न करते हैं। अपने इस गुण के कारण ही, वे सर्वप्रिय होते है। यह बात दूसरी है, कि जिस तरह वर्षा का जल और सब के लिए सुखदायी होता है, परन्तु जवास के लिये दुःखदायी होता है। इसी प्रकार जो सब को आनन्ददायक प्रतीत होते है, वे सज्जन भी कुछ लोगों को दुःखदायक लगें, परन्तु इसमें सज्जनों का दोष नहीं है, किन्तु उन लोगों की प्रकृति का ही दोष है, जो सज्जनों को दुःखदायी मानते हैं। जो सूर्य सब को आनन्दकारी जान पड़ता है, चिमगादड़ों को यदि वही सूर्य दुःखदायी जान पड़े तो इसमे सूर्य का क्या दोष है !

धन्ना, सज्जन-प्रकृति का मनुष्य था। 'सज्जनो को सभी चाहते हैं' इस कहावत के अनुसार धन्ना को भी सभी चाहते थे। जो लोग उसके सम्पर्क में आये, उन सभी के हृदय में धन्ना की चाह थी। हाँ, ऊपर जो उदाहरण दिये गये हैं उनकी तरह धन्ना के तीनों भाई धन्ना से अवश्य असन्तुष्ट रहते थे, लेकिन इसमें धन्ना का अपराध न था, किन्तु उन तीनो के स्वभाव का ही अपराध था। धन्ना के तीनों भाई धन्ना से असन्तुष्ट रहते थे, इस-कारण धन्ना को असज्जन नहीं कहा जा सकता। वह तो सज्जन

ही था। उसकी सज्जनता का सबसे बड़ा प्रमाण यही है, कि वह स्वयं से द्रोह रखनेवाले भाइयों का भी अहित नहीं चाहता था, किन्तु उनका भी हित ही करता था। इसके सिवा, वह जहां जन्मा वहां के लोगों को भी आनन्द ही मिला, और एक जगह से दूसरी जगह जाते हुए मार्ग के लोगों का भी दुःख मिटा कर उसने उन्हे सुखी किया। पूर्व प्रकरणो से तो यह बात सिद्ध है ही, इस प्रकरण से भी यही बात प्रकट होगी।

धन्ना के घर के सब लोग आनन्दपूर्वक रहने लगे। धन्ना इस बात का सदा ध्यान रखता, कि किसी को किसी प्रकार का कष्ट न हो। वह माता पिता और भाई भौजाई का बहुत आदर करता। सौभाग्यमंजरी और सुभद्रा भी, पति, जेठ, ससुर-सास और जेठानियों की तन मन से सेवा करतीं। किसी को किसी भी प्रकार का कष्ट न था, परन्तु धन्ना के भाइयों के हृदय में चिन्तामणि रत्न की बात सदा ही खटका करती थी। वे आपस में यही कहा करते कि पिताजी ने अकेले धन्ना को चिन्तामणि रत्न दिया, इसीसे अपने को कष्ट सहने पड़े और धन्ना आनन्द में ही रहा तथा रहता है। उस चिन्तामणि के प्रताप से ही, धन्ना को वह जहां भी जाता है वहीं सम्पत्ति घेरे रहती है।

धन्ना के तीनों भाई इस प्रकार सोचते थे फिर भी प्रकट में कुछ नहीं कह पाते थे। इतने ही में, राजगृह से राजा श्रेणिक के

भेजे हुए कुछ सामन्त लोग धन्ना को राजगृह ले जाने के लिए आये। धन्ना के मिल जाने पर धनसार ने राजगृह यह सन्देश भेज दिया था, कि हम लोग जिस उद्देश्य से निकले थे, हमारा वह उद्देश्य पूरा हुआ है, धन्ना मिल गया है और हम सब लोग आनन्द में हैं। धनसार द्वारा भेजा गया यह सन्देश पाकर, कुसुमपाल गोभद्र और श्रेणिक आदि सभी लोगों को बहुत प्रसन्नता हुई। इस समाचार के मिलने से सोमश्री तथा कुसुमश्री को जो हर्ष हुआ, उसका तो कहना ही क्या है। वे दोनों, अपने पति धन्ना का दर्शन करने के लिए बहुत उत्कण्ठित हुईं। गोभद्र कुसुमपाल तथा नगर के दूसरे लोगो के हृदय में भी यही विचार हुआ, कि धन्नाजी को यहाँ बुलाया जाय तो अच्छा। इसी प्रकार राजा श्रेणिक को भी धन्ना का पता पाकर प्रसन्नता हुई, और उसने भी धन्ना को बुलाने का निश्चय किया। उसने, अपने कुछ सामन्तो को धन्ना के पास धन्ना को लाने के लिए भेजा, और उससे कहने के लिए यह भी कहा, कि आपके बिना राज्य मे बड़ी अव्यवस्था हो रही है, तथा चन्द्रप्रद्योतन के यहाँ से अभयकुमार को भी मुक्त कराना है, अतः आप शीघ्र आइये।

राजा श्रेणिक के भेजे हुए सामन्त लोग, धन्ना के पास आये। वे, धन्ना से मिले। उनने राजा-प्रजा का सन्देश सुनाकर, धन्ना से राजगृह चलने का अनुरोध किया। उन लोगों

को साथ लेकर, धन्ना, राजा शतानिक के दरबार में गया। उसने शतानिक को सामन्तों का परिचय देकर उनके आने का उद्देश्य सुनाया। श्रेणिक के सामन्तों ने भी राजा शतानिक से यह प्रार्थना की, कि—आप धन्नाजी को राजगृह जाने की अनुमति दे दीजिये। शतानिक ने धन्ना की इच्छा जान कर यह कहा, कि—यद्यपि मेरी हार्दिक इच्छा तो यह है, कि राजजामाता यहीं रहें, फिर भी महाराजा श्रेणिक का इन पर पहला अधिकार है, इसलिए मैं यही कहता हूँ, कि ये जैसा उचित समझें वैसा करें। यदि ये जाना चाहते हों, तो मैं भी स्वीकृति देता हूँ।

शतानिक से राजगृह जाने की स्वीकृति प्राप्त करके, धन्ना अपने नगर मे आया। उसने नगर, राजपाट और धन-भण्डार आदि सब कुछ अपने पिता तथा भाइयों को सौंप कर, उन्हें सब व्यवस्था समझा दी। यह करके, धन्ना राजगृह के लिए चल पड़ा। सुभद्रा और सौभाग्यमंजरी भी धन्ना के साथ राजगृह चलीं। माता पिता भाई-भौजाई आदि सब से मिल कर तथा सब को धैर्य बँधा कर, अपनी दोनों पत्नियों सहित धन्ना धनपुर से राजगृह के लिए चला। शतानिक ने धन्ना के लिए मार्ग का सब प्रबन्ध कर ही दिया था।

राजगृह जाता हुआ धन्नाजी, "लक्ष्मीपुर" नाम के नगर में आया। लक्ष्मीपुर मे "जितारि" नाम का राजा राज्य करता था।

जितारि राजा की एक कन्या का नाम "गीतकला" था। गीतकला सुन्दरी थी, और गीत-कला में अपना नाम सार्थक करती थी। गीतकला अपना विवाह ऐसे पुरुष के साथ करना चाहती थी, जो सङ्गीत में प्रवीण हो। उसने यह प्रतिज्ञा की थी, कि—"मैं उसी पुरुष के साथ अपना विवाह करूँगी, जो संगीत कला में, कम से कम मेरी समानता का हो। मैं अपने संगीत से मृग को मोहित करके उसके गले में पुष्पमाल डालूँगी। जो पुरुष मेरे द्वारा डाली गई पुष्पमाल संगीत के बल से मृग के गले से निकाल लेगा, उसी को मैं अपना पति बनाऊँगी।"

गीतकला ने अपनी यह प्रतिज्ञा लोगों में प्रसिद्ध कर दी। सब लोग गीतकला को—ऐसी प्रतिज्ञा करने के कारण-बुद्धिहीना कहने लगे, लेकिन गीतकला ने लोगों द्वारा की जानेवाली निन्दा की कोई अपेक्षा नहीं की। वह अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रही। गीतकला को अपनी पत्नी बनाने की इच्छा से अनेक लोग गीतकला को अपनी संगीतज्ञता का परिचय देते थे, लेकिन सफलता न मिलने से उन्हें निराश होकर लौटना पड़ता था। यह देखकर, गीतकला के माता पिता आदि ने गीतकला को प्रतिज्ञा त्यागने के लिए बहुत समझाया, परन्तु गीतकला अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रही।

धन्ना लक्ष्मीपुर पहुँचा। वहाँ के राजा ने, धन्नाजी का आना जानकर उसका बहुत स्वागत-सत्कार किया, और उसे अपना

अतिथि बनाया। लक्ष्मीपुर में धन्ना ने गीतकला की प्रतिज्ञा और उस विषय में अनेक पुरुषों की असफलता का हाल सुन ही लिया था। प्रसङ्गवश लक्ष्मीपुर के राजा जितारि ने भी गीतकला की प्रतिज्ञा की बात कहते हुए धन्ना से यह कहा, कि—गीतकला को प्राप्त करने की आशा से अनेक पुरुष आये, परन्तु गीतकला की प्रतिज्ञा पूर्ण करने में एक भी पुरुष समर्थ नहीं हुआ। इससे मैं तो यह समझता हूँ, कि पुरुषों में गीतकला की तरह का संगीतज्ञ कोई है ही नहीं। राजा जितारि के इस कथन के उत्तर में धन्ना ने कहा, कि आपका ऐसा समझना भूल है। संसार में अनेक पुरुष गीतकला से भी बढ़कर संगीतज्ञ होंगे, परन्तु वे आपकी जानकारी में न होंगे। दूसरे को बात तो अलग रही, मैं स्वयं भी गीतकला की प्रतिज्ञा पूर्ण करने में समर्थ हूँ, परन्तु मुझे विवाह नहीं करना है, इसी से मैं गीतकला की प्रतिज्ञा सुन कर भी उसे पूर्ण करने का प्रयत्न नहीं करता। यदि आप कहें, तो मैं अपने संगीत का परिचय दूँ, परन्तु मेरा ऐसा करना विवाह के उद्देश्य से न होगा।

धन्ना का कथन सुनकर, राजा जितारि प्रसन्न हुआ। उसने धन्ना से कहा, कि—कृपा करके आप यह अवश्य बताइये, कि आप मेरी गीतकला से बढ़कर अथवा उसके समान संगीतकार हैं। यदि आप मेरी यह प्रार्थना स्वीकार करेंगे, तो पुरुषों के विषय में मेरा

जो भ्रम है वह भी मिट जावेगा, तथा गीतकला के हृदय में भी यह भावना न रहेगी, कि पुरुषों में मेरी तरह का संगीत जानने-वाला कोई नहीं है। धन्ना ने कहा, कि—अच्छा, आप मुझे एक वीणा मँगवा दीजिये, तथा राजकुमारी से कहिये, कि वे मृग के गले में माला डालें।

धन्ना को वीणा दी गई। धन्ना वीणा झनकारने लगा, जिसे सुनकर गीतकला प्रसन्न भी हुई, और उसे यह आशा भी हुई, कि इस पुरुष द्वारा सम्भवतः मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण होगी। गीतकला वीणा लेकर जंगल में गई। वीणा पर उसने ऐसा राग अलापा, कि जिससे वन के मृग मोहित होकर उसके पास आ गये। गीतकला ने समीप आये हुए मृगों में से एक मृग के गले में पुष्पमाला डाल दी, और फिर गाना बजाना बन्द कर दिया। गाना बजाना बन्द होते ही सब मृग वन में भाग गये।

गीतकला, नगर में लौट आई। उसने धन्ना के पास यह सन्देश भेजा कि अब आप अपनी कला बताइये। यह सन्देश पाकर, धन्ना वीणा लेकर वन मे गया। उसने भी वीणा पर ऐसा राग अलापा, कि जिससे वन के मृग उसके पास आ गये। उन मृगों में वह मृग भी था, जिसके गले मे गीतकला ने पुष्पमाला डाल दी थी। धन्ना राग अलापता हुआ तथा वीणा बजाता हुआ धीरे-धीरे नगर की ओर बढ़ा। संगीत से मुग्ध बने हुए मृग भी

धन्ना के साथ-साथ नगर की ओर चले। वे सङ्गीत से इस तरह मोहित हो गये थे, कि उन्हें यह भी पता न था, कि हम किस ओर जा रहे हैं। धन्ना ने, राजमहल से वन तक का मार्ग पहले ही साफ करा दिया था। धीरे-धीरे बढ़ता हुआ, धन्ना राज-महल में पहुँचा। उसके साथ-साथ मृग भी राजमहल में चले गये। जिस मृग के गले में गीतकला ने पुष्पमाल डाल दी थी, धन्ना ने उस मृग के गले से पुष्पमाल निकाल कर गीतकला के गले में डाल दी, और उसी प्रकार राग अलापता हुआ मृगों को फिर वन में ले गया। वन में पहुँच कर धन्ना ने गाना बजाना बन्द कर दिया, जिससे मृग इधर-उधर भाग गये।

अपनी प्रतिज्ञानुसार पुरुष मिलने से, गीतकला को बहुत प्रसन्नता हुई। जब धन्ना वन से लौट कर आया, तब गीतकला उसके गले में वरमाल डालने लगी। धन्ना ने उससे कहा, कि—मैंने यह कार्य विवाह होने की आशा से नहीं किया है, किन्तु आपके पिता का भ्रम मिटाने के लिए किया है। मेरा विवाह भी हो चुका है। मेरी चार पत्नियों में से दो तो मेरे साथ ही हैं, और दो पत्नी राजगृह में हैं। इसलिए आप मेरे साथ विवाह न करके किसी दूसरे योग्य पुरुष के साथ विवाह करें, तो अच्छा! धन्ना के इस कथन के उत्तर में गीतकला ने उससे कहा, कि—मैं विषय-भोग के लिए ही विवाह नहीं करना चाहती। यदि मैं इसी

के लिए विवाह करना चाहती होती, तो मैंने जो प्रतिज्ञा की थी वह करने और अब तक अविवाहित रहने का कोई कारण ही न था। मेरा उद्देश्य यह है, कि जो पुरुष संगीतकला जाननेवाला हो, जिसके साथ विवाह करने पर मेरी कला की प्रतिष्ठा हो, उस पुरुष के साथ विवाह करके मैं उसकी सेवा करूँ; और जब मैं इसी उद्देश्य से विवाह करना चाहती हूँ, तब मुझे यह देखने की आवश्यकता ही नहीं रहती, कि आपका विवाह हो चुका है या नहीं! मैं, आप ऐसा पुरुष ही खोज रही थी। सद्भाग्य से मुझे आप प्राप्त हुए हैं, इसलिए मेरा अनादर मत करिये, किन्तु मुझे स्वीकार करके कृतार्थ कीजिये।

गीतकला की नम्रता एवं चातुरी-पूर्ण प्रार्थना, धन्ना अस्वीकार न कर सका। गीतकला ने धन्ना के गले में वरमाल डाल दी, और अन्त में दोनों का विवाह हुआ।

राजा जितारि के प्रधान मन्त्री की कन्या का नाम सरस्वती था। सरस्वती, गीतकला की सखी थी। जिस समय गीतकला ने धन्नाजी के गले में वरमाल डाली, उसी समय सरस्वती ने भी धन्ना के गले में वरमाल डाल दी। गीतकला की प्रार्थना से विवश होकर धन्ना ने उसके साथ तो विवाह करना स्वीकार किया, परन्तु सरस्वती से धन्ना ने कहा, कि—मेरे पर पत्नियों का बहुत बोझ हो गया है। इसलिए अब आप और बोझ न बढ़ाइये। धन्ना के

इस कथन के उत्तर में सरस्वती ने कहा, कि—मैं तो गीतकला की दासी हूँ। जहाँ गीतकला है, वहीं मैं भी हूँ। मेरी यह प्रतिज्ञा है, कि जहाँ गीतकला रहेगी वहाँ मैं भी रहूँगी। इसलिए आप मुझे भी स्वीकार करने की कृपा कीजिये।

गीतकला ने भी धन्ना से यह प्रार्थना की, कि—सरस्वती मेरी प्रिय सखी है, और इसने मेरे साथ रहने के लिए ही अब तक अपना विवाह नहीं किया है, इसलिए मेरी प्रार्थना है, कि आप सरस्वती की आशा पूर्ण कीजिये। गीतकला की इस प्रकार की सिफारिश, और सरस्वती की नम्र प्रार्थना मान कर धन्ना ने सरस्वती के साथ भी विवाह किया। वह, अपनी चारों स्त्रियों के साथ आनन्द से रहने लगा। राजा जितारि का स्नेह, धन्ना को लक्ष्मीपुर से निकलने न देता था।

लक्ष्मीपुर में ही पन्नामलक नाम का एक सेठ रहता था। पन्नामलक श्रावक था, और धनसम्पन्न तथा प्रतिष्ठाप्राप्त भी था। उसके, राम, काम, श्याम और गुणधाम नाम के चार पुत्र थे, तथा लक्ष्मीवती नाम की एक कन्या थी। लक्ष्मी बहुत सुन्दरी थी, और गुणों से तो वह अपना नाम सार्थक करती थी। पन्नामलक ने वृद्धावस्था आने पर विचार किया, कि मुझे संसार-व्यवहार में ही न फँसा रहना चाहिए, किन्तु आत्मा का कल्याण करने के लिए कुछ विशेष धर्मध्यान करना चाहिए। यह सोचने के साथ ही

उसने यह भी सोचा, कि मेरे लड़के यदि सदा सम्मिलित रहें तब तो अच्छा ही है, लेकिन यदि ऐसा न हो तो ये आपस में सम्पत्ति के लिए झगड़ा न करें, और अलग होकर भी प्रेम पूर्वक रहे, इसका प्रबन्ध भी मुझे अभी से कर देना चाहिए। जिसमें श्रम द्वारा संचित सम्पत्ति, भाइयों के पारस्परिक कलह का कारण बन कर नष्ट न हो जावे।

इस प्रकार विचार कर, पन्नामलक ने अपने चारों लड़कों को बुलाकर उनसे अपना धर्मकार्य विषयक विचार प्रकट किया। पश्चात् उन्हें ऐक्य का महत्व बता कर, चारों भाइयो को सम्मिलित रहने का उपदेश दिया। साथ ही उनसे यह भी कहा, कि यदि तुम चारों भाई एक साथ न रह सको, तो फिर आपस में झगड़ा किये बिना अलग हो जाना। अलग रहना बुरा नहीं है, लेकिन आपस में कलह करना बुरा है। आपस में अनबन होने की दशा में सम्मिलित न रहना ही अच्छा है। इस बात को दृष्टि में रख कर ही मैंने अपना घर ऐसा बनवाया है, कि जिसमे चारों भाई अलग-अलग रह सको। मकान का कौन-सा भाग किसको मिले, इसका विवरण मैंने बहियों में लिखवा दिया है। साथ ही, मैंने अपनी सब सम्पत्ति चार भागो में विभक्त करके भण्डार के चारों कोनों में गड़वा दी है। कौन-सा भाग किसका है, यह बात भी मैंने बहियों में लिखवा दी है। उसके अनुसार चारों भाई

अपनी-अपनी सम्पत्ति, तथा अपना-अपना मकान ले लेना। आपस में कलह मत करना।

लड़कों ने पत्रामलक की बात स्वीकार की। पत्रामलक, घर से अलग रहकर धर्मकार्य करने लगा। कुछ दिन तक धर्मकार्य करते रहने के पश्चात्, पत्रामलक संथारे द्वारा कालधर्म को प्राप्त हुआ। पत्रामलक के मरने के पश्चात् उसके चारों लड़के कुछ दिनों तक तो आनन्द से एक साथ रहे, परन्तु फिर कुछ मतभेद उत्पन्न हो गया, जिससे चारों का सम्मिलित रहना कठिन हो गया। भाइयों ने विचार किया, कि अब अपने को पिता के उपदेशानुसार अलग हो जाना चाहिए। इस प्रकार सोच-कर उनने वह वही निकाली, जिसमें पत्रामलक ने घर-सम्पत्ति के भाग लिख दिये थे। उस वही के आधार से, उन चारों ने अपने-अपने भाग का घर ले लिया। फिर सम्पत्ति खोदी। पत्रामलक ने वही में यह लिख दिया था, कि अमुक कोण में गड़ी हुई सम्पत्ति अमुक की है, और अमुक कोण में गड़ी हुई सम्पत्ति अमुक की।

चारों भाइयों ने, भण्डार के चारों कोनों में गड़े हुए चार हण्डे निकाल कर उनको खोला। जो हण्डा सब से छोटे भाई के नाम पर था, उसमें से तो स्वर्णमुद्राएँ रत्न आदि आठ क्रोड़ की सम्पत्ति निकली, लेकिन शेष तीन भाइयों के नाम के तीन हण्डों में से एक में धूल-मिट्टी निकली, दूसरे में कागज के टुकड़े निकले,

और तीसरे में पशु की हड्डियाँ निकलीं। यह देखकर, छोटे भाई के सिवा शेष तीनों भाई पिता को अन्यायी कहकर कोसने लगे। पश्चात तीनों भाइयों ने यह विचार किया, कि चारों हण्डों में से जो कुछ निकला है, वह चारो भाइयों में समान रूप से बाँट लिया जावे; लेकिन छोटा भाई ऐसा करने के लिए तैयार नहीं हुआ। उसने कहा, कि—मैं अपने हण्डे में से निकले हुए धन में तुम तीनों को भाग देकर, बदले में धूल निरुपयोगी कागज़ और पशु की हड्डियाँ क्यों लूँ। पिताजी मेरे लिए जो व्यवस्था कर गये हैं, उसके विरुद्ध मैं कुछ भी नहीं कर सकता।

चारों भाइयों में—इसी बात को लेकर—झगड़ा हुआ। कलह के कारण चारों भाइयों का खाना-पीना भी विष के समान हो गया। साथ ही, लेन-देन और वाणिज्य व्यवसाय को भी धक्का लगने लगा। उन चारों की बहन लक्ष्मी, गृहकलह से बहुत दुःखी हुई। वह अपने भाइयों को कलह न करने के लिए बहुत समझाती, परन्तु उस बेचारी की कौन सुनता! वह सोचने लगी, कि मेरे पिता अपने चारों लड़कों में किसी प्रकार का भेद नहीं रखते थे, और वे धर्मात्मा एवं न्यायशील भी थे। फिर द्रव्य बाँटने मे उनने भेद क्यों किया होगा! मेरे घर का यह झगड़ा कैसे मिटे! इस तरह सोच कर, उसने निश्चय किया, कि यदि कोई मेरे घर का यह झगड़ा मिटा दे, तो मैं उसकी दासी बनने तक को तैयार हूँ।

पन्नामलक के लड़कों ने, अपना झगड़ा राजा के सामने रखा। राजा जितारि भी विचार में पड गया, कि इस झगड़े को किस तरह निपटाया जावे! उसने सोच विचार कर, उस झगड़े को निपटाने का भार धन्ना को सौंप दिया। धन्ना ने पन्नामलक के चारों लड़कों से कहा, कि—तुम लोग घर जाओ, मैं कल अमुक समय पर तुम्हारे यहाँ आकर झगड़े का निर्णय कर दूँगा।

दूसरे दिन, धन्ना पन्नामलक के यहां गया। भूमि में से निकले हुए हण्डे देखकर, तथा पूछताछ करके धन्ना ने तीनों बड़े लड़कों से कहा, कि—यदि तुम तीनों को भी आठ-आठ क्रोड की सम्पत्ति मिल जावे, तब तो तुम प्रसन्न हो जाओगे न? उन तीनों ने उत्तर दिया, कि-फिर हम लोगों के लिए अशान्ति का क्या कारण। फिर तो हम लोगों में कोई झगडा ही न रहेगा। धन्ना ने बड़े भाई राम से कहा, कि—तुम आठ क्रोड़ की सम्पत्ति प्राप्त करके क्या करोगे? राम ने उत्तर दिया, कि—मैं लेन-देन का व्यापार करूँगा। धन्ना ने कहा, कि—तुम अपने पिता का आठ क्रोड़ का लेना सम्हालो, और वही-खाते ले लो। देख लो, तुम्हारे यहां की वहियों में आठ क्रोड़ का लेना है। तुम्हारे पिता ने तुम्हारे भाग में कागज के टुकड़ों से भरा हुआ हण्डा इसी उद्देश्य से रखा है, कि लेना-देना तुम्हें मिले।

यह कहकर, धन्ना ने लेन-देन की वहियाँ राम को सौंप दीं।

राम प्रसन्न हो गया। फिर धन्ना ने काम को बुला कर, उससे पूछा, कि—तुम आठ क्रोड़ की सम्पत्ति का क्या करोगे? काम ने उत्तर दिया, कि मैं कृषि-व्यवसाय करूँगा। धन्ना ने कहा, कि—इसीलिए तुम्हारे पिता ने तुम्हारे भाग में धूल-मिट्टी से भरा हण्डा रखा है। तुम अपने पिता की कृषि-सम्हालो, जो आठ क्रोड़ की ही है। यह कर धन्ना ने उसे कृषि-सम्बन्धी हिसाब की बहियां सौंप दीं। धन्ना के इस निर्णय से, काम प्रसन्न हुआ।

धन्ना ने तीसरे भाई श्याम को बुलाकर उससे पूछा, कि—तुम अपने भाग की आठ क्रोड़ की सम्पत्ति का क्या करोगे? श्याम ने उत्तर दिया, कि—मैं पशु-पालन का व्यसाय करूँगा। धन्ना ने उसको पशुओ के हिसाब की वही सौंप कर उससे कहा, कि—तुम अपने पिता के पशु सम्हालो, जो आठ क्रोड़ के हैं। तुम्हारे पिता ने तुम्हारे भाग मे जो हण्डा दिया है, उसमें पशुओं की हड्डियां इसी उद्देश्य से भरी हैं, कि तुम पिता के पशु सम्हालो। और तुम तीनो का छोटा भाई तुम्हारे पिता के समय बच्चा था। तुम्हारे पिता को इसकी रुचि मालूम न थी, कि यह क्या व्यापार कर सकता है। इसलिए तुम्हारे पिता ने, इसके वास्ते स्वणमुद्रा आदि आठ क्रोड़ की सम्पत्ति रख दी थी।

धन्ना के निर्णय से चारों भाई बहुत प्रसन्न हुए, तथा लक्ष्मी भी हर्षित हुई। चारों भाई, अपने पिता के लिए कहे गये अनु-

चित शब्दों के विषय में, तथा अपनी मूर्खता से उत्पन्न कलह के कारण आपस में जो कहा सुनी हुई थी उसके लिए पश्चात्ताप करने लगे। साथ ही धन्ना को धन्यवाद देकर कहने लगे, कि यदि ये न होते तो अपन चारों भाई आपस में लड़ मरते, और पैतृक सम्पत्ति भी नष्ट कर देते। अपने सद्भाग्य से ही ये इस नगर में आ गये, और गीतकला के साथ इनका विवाह हुआ, तथा इन्हें यहां रुकना पड़ा।

इस प्रकार धन्ना का उपकार मानते हुए चारों भाई यह विचार करने लगे, कि राजजामाता धन्नाजी ने अपने पर जो उपकार किया है, उसके ऋण से थोडा बहुत मुक्त होने के लिए अपने को क्या करना चाहिए। विचार विनिमय के पश्चात् चारों भाइयों ने यह निश्चय किया, कि यदि बहन लक्ष्मी स्वीकार करे तो धन्नाजी के साथ उसका विवाह कर दिया जावे। लक्ष्मी विवाह के योग्य हो ही गई है, और धन्नाजी की तरह का दूसरा वर भी मिलना कठिन है। इसलिए यही अच्छा है, कि लक्ष्मी का विवाह धन्नाजी के साथ कर दिया जावे, जिसमें इनके साथ अपना स्थायी सम्बन्ध भी हो जावे, और लक्ष्मी को योग्य वर भी मिल जावे।

इस प्रकार निश्चय करके चारों भाइयों ने लक्ष्मी से पूछा। लक्ष्मी ने कहा, कि—मेरी तो यह प्रतिज्ञा ही थी, कि जो पुरुष

मेरे भाइयों का कलह मिटा देगा, मैं उसका दासीत्व भी स्वीकार कर लूँगी। ऐसी दशा में, मुझे धन्नाजी के साथ विवाह करने में क्या आपत्ति हो सकती है! प्रतिज्ञानुसार, मैं धन्नाजी की दासी हो ही चुकी हूँ। यह तो मेरे लिए सौभाग्य की ही बात होगी कि उनके साथ मेरा विवाह हो जावे।

राम, काम, श्याम और गुणधाम, अवसर देखकर धन्ना के पास गये। उन्होंने, लक्ष्मी की प्रतिज्ञा के साथ ही अपना विचार धन्ना को कह सुनाया। धन्ना ने पहले तो लक्ष्मी के साथ विवाह करने से इनकार किया, परन्तु अन्त मे लक्ष्मी की दृढ़ता तथा उसके भाइयों के अनुनय विनय से विवश होकर, उसने लक्ष्मी के साथ विवाह कर लिया। यह उसका सातवाँ विवाह था। सात विवाह की सात पत्नियो मे से दो तो राजगृह मे थीं, और शेष पाँच धन्ना के साथ लक्ष्मीपुर में थीं।

लक्ष्मीपुर में ही एक दूसरा सेठ भी रहता था। उसको एक युवती कन्या विवाह के योग्य हो गई थी। वह, कन्या के लिए वर की खोज में था, इतने ही में एक धूर्त्त के पंजे में फँस गया। इस धूर्त्त ने कोई अच्छा कार्य करके सेठ से यह वचन ले लिया था, कि मैं पहले जिस वस्तु पर हाथ रखूँ, वह वस्तु मेरी होगी। सेठ उस धूर्त्त से वचन बद्ध हो चुका, लेकिन फिर उसका दुर्भाव ज्ञान कर सेठ को यह भय हुआ, कि यह धूर्त्त कहीं मेरी पत्नी या

कन्या को न हड़प ले। उस सेठ ने धूर्त को अनेक रत्नादि बता कर उससे कहा, कि तुम चाहे जिस चीज पर हाथ रख कर वह चीज ले सकते हो, लेकिन धूर्त ने यही कहा, कि मुझे इनमें से कोई भी चीज पसन्द नहीं है, आप मुझे अपने घर में ले चलिये, वहां मैं जिस चीज पर हाथ रखूं, उसका स्वामी मैं होऊँगा। सेठ उस धूर्त का अभिप्राय समझ गया, कि यह धूर्त मेरी कन्या हथियाना चाहता है। यह समझने के कारण सेठ घबरा गया। वह चाहता था, कि मुझे अपनी प्रतिज्ञा से भी विमुख न होना पड़े, और मेरी कन्या भी इस धूर्त के पंजे में न फँसे। उसने धूर्त से बहुत कहा सुना, सेठ के हितैषियों ने भी धूर्त को बहुत समझाया, परन्तु वह किसी भी तरह नहीं माना। घबराया हुआ सेठ, धन्ना के पास गया। उसने धन्ना को सब बात सुनाई। धन्ना ने उसे सान्त्वना देकर उससे कहा, कि—मैं कल तुम्हारे यहां आकर इस संकट से तुम्हारा उद्धार कर दूँगा।

दूसरे दिन धन्ना उस सेठ के घर गया। उसने धूर्त को बुलाकर उसे बहुत कुछ समझाया, उससे रत्नादि लेने के लिए भी कहा, परन्तु धूर्त नहीं माना। तब धन्ना ने सेठ की पत्नी एवं पुत्री को घर की दूसरी मंजिल पर चढ़ा कर दूसरी मंजिल पर चढ़ने के और मार्ग बन्द करके एक सीढ़ी रख दी। यह करके उसने धूर्त से कहा, कि—अच्छा, तुम सेठ से प्राप्त वचन के

अनुसार जिस भी वस्तु को चाहो, उस वस्तु पर हाथ रख कर उसे ले लो। सेठ ने तुम्हें वचन दिया ही है, कि जिस वस्तु पर पहले हाथ रखोगे, वह वस्तु तुम्हारी है।

धूर्त्त, प्रसन्न हुआ। वह सेठ के घर में जाकर, सेठ की कन्या गुणवती को इधर-उधर देखने लगा। उसने देखा, कि गुणवती घर को दूसरी मंजिल पर खड़ी हुई है। वह, गुणवती के सिर पर हाथ रखने के लिए सीढ़ी द्वारा दूसरी मंजिल पर चढ़ने लगा। सीढ़ी द्वारा दूसरा मंजिल पर चढ़ने के समय सीढ़ी पर हाथ रखना और उसे पकड़ना पड़ता ही है। वह धूर्त्त भी हाथ से सीढ़ी पकड़ कर ऊपर चढ़ने लगा, लेकिन जैसे ही वह कुछ चढ़ा, वैसे ही धन्ना ने उसको पकड़कर ऊपर चढ़ने से रोक लिया, और उससे कहा, कि—बस, यह सीढ़ी लेकर घर जाओ। सेठ ने तुमको यही वचन दिया था, और तुमने सेठ से यही वचन पाया था, कि जिस चीज पर हाथ रखो वह चीज तुम्हारी है। इसके अनुसार तुम यह सीढ़ी ले जाओ। क्योंकि तुमने सब से पहले इसी सीढ़ी पर हाथ रखा है। धन्ना का कथन सुन-कर धूर्त्त कुछ चाँ-चूँ करने लगा, लेकिन धन्ना के सामने उसकी धूर्त्तता कब चल सकती थी। वह अपना-सा मुँह लेकर चला गया।

धूर्त्त के पंजे से स्वयं को मुक्त देख कर, सेठ सेठानी और गुणवती को बहुत प्रसन्नता हुई। सेठ ने, धन्ना के उपकार से मुक्त

होने के लिए तथा अपनी कन्या को योग्य पति से जोड़ने के लिए, गुणवती का विवाह धन्ना के साथ कर दिया। इस प्रकार धन्ना के आठ विवाह हो गए।

कुछ दिन तक लक्ष्मीपुर में रहने के पश्चात, धन्ना ने राजा जितारि आदि से विदा मांगी। बहुत कहने-सुनने पर सब लोगों ने धन्ना को विदा किया। धन्ना, राजगृह के लिए चल पड़ा। उसके साथ, उसकी छः पत्नियां भी थीं।

धन्ना, राजगृह के समीप पहुँचा। धन्ना आ रहा है यह जान कर, राजा श्रेणिक तथा नगर के दूसरे लोग उसकी अगवानी जाकर उसे सम्मानपूर्वक नगर मे लाये। धन्ना के आने से सब लोगों को बहुत प्रसन्नता हुई। सोमश्री एवं कुसुमश्री को धन्ना के आने से जो हर्ष हुआ, उसका तो कहना ही क्या था। लेकिन हर्षित होने के साथ ही वे इस विचार से मन ही मन लज्जित भी थीं, कि हम कष्ट के समय अपने-अपने पितृगृह को चली गईं थीं, सुभद्रा की तरह पति को ढूँढने नहीं गईं थीं।

धन्ना, अपने घर आया। वह, सब लोगों से मिला जुला। कुसुमश्री और सोमश्री भी अपने पतिगृह को आईं। परन्तु लज्जा के कारण उनकी दृष्टि ऊपर नहीं उठती थी। धन्ना, उनके लज्जित होने का कारण समझ गया। उसने सोमश्री एवं कुसुमश्री को सान्त्वना देते हुए उनसे कहा, कि—तुम इस बात के कारण

किंचित् भी संकुचित न होओ, कि सुभद्रा की तरह तुम भी पिताजी के साथ क्यों नहीं गई थीं। सुभद्रा के साथ न जाकर तुमने कोई अपराध नहीं किया है, जिसके लिए तुम्हें लज्जित होना पड़े। प्रत्येक व्यक्ति को वही कार्य करना चाहिये, जिसके करने की उसमें शक्ति है। जिस कार्य को पूर्णता पर पहुँचाने की शक्ति नहीं है, उसका प्रारम्भ न करना बुरा नहीं है, लेकिन किसी कार्य को प्रारम्भ करके क्षमता के अभाव से वह कार्य बीच ही में छोड़ देना बुरा है। सुभद्रा में कष्ट सहने की शक्ति थी, और तुम में शक्ति नहीं थी। इसलिये तुम अपने-अपने पिता के यहां चली गई, यह बुरा नहीं, किन्तु अच्छा किया था। इसके लिए तुम्हें लज्जित होने की आवश्यकता नहीं है। मेरे हृदय में तुम दोनों के लिए भी वैसा ही स्थान है, जैसा स्थान सुभद्रा आदि के लिए है। इसलिए तुम लोग किसी प्रकार का संकोच न करो।

धन्ना ने, इस प्रकार कहकर सोमश्री और कुसुमश्री को सान्त्वना दी। वे दोनों, धन्ना से अपनी अशक्तता के लिए क्षमा मांग कर सुभद्रा के पास गईं। सुभद्रा, सोमश्री और कुसुमश्री से प्रेमपूर्वक मिली। वे दोनों सुभद्रा की प्रशन्सा करके स्वयं की निन्दा करने लगीं। वे कहने लगीं, कि—हे देवी! आप ही सच्ची पत्नी और पतिव्रता हैं। आप ऐसे स्त्री-रत्न के प्रभाव से ही यह वसुन्धरा स्थिर है। एक कवि ने कहा है—

आपत्काले तु सम्प्राप्ते यन्मित्रं मित्रमेवतत् ।
वृद्धिकाले तु सम्प्राप्ते दुर्जनोऽपि सुहृद् भवेत् ॥

अर्थात्—आपत्तिकाल आने पर जो मित्र रहे, वही मित्र है। जब अच्छे दिन होते हैं, तब तो दुर्जन भी मित्र हो जाते हैं।

इसके अनुसार पति को ढूँढने का कष्ट सहने के समय हम यहीं रह गईं, और अब सुख के समय फिर आगई हैं। लेकिन आपने पति को ढूँढने में घोर कष्ट सहा है। इस तरह आप जैसी पति-परायण और हम जैसी स्वार्थिनी दूसरी कौन स्त्री होगी ?

इस प्रकार सोमश्री और कुसुमश्री स्वयं की निन्दा करके पश्चात्ताप करती हुई बहुत दु:खी हुईं, लेकिन धन्ना की तरह सुभद्रा ने भी समझाबुझा कर उन्हें सन्तुष्ट किया। साथ ही सौभाग्य-मंजरी आदि से उनका परिचय कराया। सब को एक दूसरी का परिचय जान कर बहुत प्रसन्नता हुई।

धन्ना की आठों पत्नियों में सब से बड़ी कुसुमश्री थी, और उससे छोटी सोमश्री थी। सुभद्रा, धन्ना की तीसरी पत्नी थी, इस से वह कुसुमश्री तथा सोमश्री से छोटी थी, फिर भी उसकी चातुरी व्यवहारकौशल्य, व्यवस्थाकौशल्य एवं नम्रता से धन्ना की सभी स्त्रियाँ प्रभावित थीं। इस कारण जो सुभद्रा से छोटी थीं वे तो सुभद्रा को बड़ी मानती ही थीं लेकिन कुसुमश्री और

सोमश्री भी सुभद्रा का वैसा ही आदर करती थीं, जैसा आदर धन्ना की वे पत्नियाँ करती थीं जो सुभद्रा से छोटी थीं, अथवा जैसा आदर घर के किसी बड़े व्यक्ति का किया जाता है। वे प्रत्येक कार्य सुभद्रा की सम्मति से ही किया करती थीं, और सुभद्रा की सम्मति को आज्ञा रूप मानती थीं।

एक दिन सुभद्रा के सिवा धन्ना की शेष सातों पत्नियों ने आपस में यह परामर्श किया, कि सुभद्रा अपन सब से अधिक बुद्धिमती एवं व्यवस्थाकुशल है। सुभद्रा में अपने से अधिक गुण भी हैं। इसलिए यह उचित होगा, कि अपन सब पति से प्रार्थना करके उनसे सुभद्रा को पटरानी-पद प्रदान करावें। इस प्रकार परामर्श करके, एक दिन अवसर देखकर कुसुमश्री और सोमश्री ने अपना यह विचार धन्ना के सन्मुख प्रकट किया, तथा धन्ना से यह प्रार्थना की कि आप सुभद्रा को पटरानी-पद प्रदान करें। हम सब के लिए सुभद्रा नौका के समान हैं। इनमें हम सब में बड़ी होने योग्य समस्त गुण हैं। कुसुमश्री और सोमश्री के इस कथन का धन्ना की पाँचों छोटी पत्नियो ने भी समर्थन किया।

कुसुमश्री और सोमश्री द्वारा किया गया प्रस्ताव सुन कर तथा अपनी पाँच छोटी पत्नियों को प्रस्ताव का समर्थन करते देखकर धन्ना को तो प्रसन्नता हुई, लेकिन सुभद्रा कहने लगी, कि मैं पटरानी बनने के योग्य नहीं हूँ। इस पद की अधिकारिणी या तो

वहन कुसुमश्री हैं, या सोमश्री हैं। मैं इन दोनों से छोटी हूँ। इनके रहते मैं यह पद ले भी नहीं सकती, न मैं इसके योग्य ही हूँ। यह इन सब वहनों की कृपा है, जो मेरे लिए ऐसा कहती हैं। मैं इनकी सेवा सदा की भाँति करती रहूँगी, परन्तु बड़ी या पट-रानी बनने की योग्यता मुझ में नहीं है।

इस प्रकार सुभद्रा ने बहुत आनाकानी की, परन्तु अन्त में सब के आग्रह एवं धन्ना के समझाने से वह अधिक कुछ न कह सकी। सुभद्रा से पटरानी-पद लेना स्वीकार करा कर, सब ने सुभद्रा को पाट पर बैठा, उसका अभिषेक किया और धन्ना ने उसे पट-रानी-पद प्रदान करके अपनी सब पत्नियों में बड़ी बनाया।

अपनी आठों पत्नियों सहित धन्ना, राजगृह में आनन्दपूर्वक रहने लगा। उसने, प्रधान-पद का कार्य सम्हाल कर राजकार्य की सब व्यवस्था ठीक कर दी। राजा श्रेणिक आदि सब लोगों को बहुत प्रसन्नता हुई।

पश्चात्ताप और प्रायश्चित

संसार में जो भी दुःख है, वह अज्ञान के कारण ही। तत्व पदार्थ या बात के वास्तविक स्वरुप या उनसे होने वाले कार्य के लाभ हानि आदि को न जानना अज्ञान है। कभी-कभी यह होता है, कि पदार्थादि के विषय में जानकारी तो होती है, लेकिन वह जानकारी होती है उल्टी। इस तरह की उल्टी जानकारी को विपरीत ज्ञान कहते हैं, जिसकी गणना अज्ञान में ही है। ऐसा अज्ञान ही दुःख का कारण है। मनुष्य अज्ञानवश बुरे काम को अच्छा काम मानता है, और अच्छे काम को बुरा मानता है। जब तक कोई व्यक्ति बुरे काम को बुरा और अच्छे काम को अच्छा नहीं मानता, तब तक वह अच्छे काम का आचरण भी

कैसे कर सकता है और बुरे काम को त्याग भी कैसे सकता है, तथा बुरे काम के लिए खेद या पश्चात्ताप भी कैसे कर सकता है। कोई काम त्यागा तो तभी जा सकता है, और उसके विषय में खेद या पश्चात्ताप भी तभी हो सकता है, जब वह काम बुरा माना जावे। बल्कि किसी बुरे काम को अच्छा मानने पर तो उस बुरे काम का पुनः पुनः आचरण किया जाता है। अज्ञान से होने वाले इस तरह के व्यवहार से ही दुःख होता है। जब अज्ञान मिट जाता है, बुरे काम को बुरा और अच्छे काम को अच्छा मानने रूप ज्ञान हो जाता है तब दुःख नहीं रहता। फिर जितने—जितने अन्श में अज्ञान मिटकर ज्ञान होता जाता है और अज्ञानजनित आचरण त्याग कर ज्ञानजनित आचरण करता जाता है, उतने ही उतने अन्श में दुःख से निकलकर सुख प्राप्त करता जाता है, तथा जब अज्ञान निःशेष हो जाता है तब दुःख भी निःशेष हो जाता है।

ज्ञान या अज्ञान का सम्बन्ध भी पूर्व–कृत्यों से है। पूर्व के अशुभ कर्मों से ही ज्ञान पर आवरण रहता है और अज्ञान का उदय रहता है। ऐसे अशुभ कर्म जैसे–जैसे दूर होते जाते हैं, ज्ञान पर का आवरण भी वैसे ही वैसे हटता जाता है और फिर स्वयं ही या किसी निमित्त से या किसी के उपदेश से वास्तविकता को समझा जाता है।

धन्ना के तीनों भाइयों में अज्ञान था, इसी कारण वे धन्ना की अच्छाई को भी बुराई मानते थे, और अपनी बुराई को भी अच्छाई समझते थे, तथा फिर-फिर बुराई करते थे। भव-स्थिति पकने पर जब उनका अज्ञान मिटा और वे वास्तविकता को समझ गये, तब उनका कैसा परिवर्तन हुआ, उनने अपने दुष्कृत्य के लिए कैसा पश्चात्ताप किया तथा अपने पाप नष्ट करने के लिए कैसा प्रायश्चित्त लिया, यह बात इस प्रकरण से ज्ञात होगी।

धन्ना अपने माता-पिता और भाई—भौजाइयों को धनपुर में ही रख आया था। वह अपना छोटा—सा राज्य भी उन्हीं लोगों को सौंप आया था, तथा वहाँ उपार्जित सम्पत्ति का स्वामी भी उन्हें ही बना आया था। उसके भाई कुछ समय तक तो अच्छी तरह रहे, लेकिन फिर अनेक प्रकार के उत्पात तथा प्रजा पर अत्याचार करने लगे। उनके शासन से धनपुर की प्रजा बहुत ही दुःखी हो गई। धनसार सेठ अपने तीनों लड़कों को समय-समय पर बहुत समझाया करता, लेकिन वे उद्दण्ड स्वभाववाले तीनो भाई पिता की शिक्षा की उपेक्षा करते उस पर ध्यान न देते। धन्ना भी चलते समय अपने भाइयों को बहुत कुछ समझा गया था, लेकिन उन तीनों ने धन्ना का वह समझाना भी विस्मृत कर दिया।

तीनों भाइयों के शासन से दुःखी होकर धनपुर की प्रजा

राजा शतानिक के पास पुकार ले गईं। राजा शतानिक ने धन्ना के सम्बन्ध को दृष्टि में रखकर पहले तो धन्ना के तीनों भाइयों को प्रजा पर अत्याचार न करने के लिए सावधान किया, लेकिन सावधान करने पर भी जब वे तीनों भाई नहीं माने, तब उसने यह आज्ञा दी कि तुम तीनों भाई मेरे राज्य से बाहर निकल जाओ। यह आज्ञा देने के साथ ही राजा शतानिक ने धनसार और स्त्रियों के लिए यह छूट रखी, कि इनके लिए मेरे राज्य से बाहर जाना आवश्यक नहीं है।

धन्ना के तीनों भाई अपनी अपनी पत्नी को साथ लेकर कौशम्बी के राज्य से बाहर निकले। धनपुर में केवल धनसार ही अपनी पत्नी सहित रह गया। कौशम्बी के राज्य से बाहर निकल कर, धन्ना के तीनों भाइयों ने कुछ माल खरीदा और बनजारों की तरह बैलों पर माल लादकर वे राजगृह की ओर चले। बैलों पर लदा हुआ किराणा बेंच-बेंच कर खाते हुए तीनों भाई—पत्नियों सहित-राजगृह के समीप पहुँचे। उधर धन्ना घोडे पर बैठ कर राजगृह नगर से बाहर वन में वायु सेवनार्थ उसी ओर आया हुआ था। लदे हुए बैलों के साथ अपने भाई भौजाइयों को देखकर उसने पहचान लिया, कि ये तो मेरे भाई और भौजाइयाँ हैं। यद्यपि भाइयों के कारण धन्ना को एक बार नहीं किन्तु अनेक बार कष्ट

उठाने पड़े थे, और भविष्य में ऐसा न होगा इसके लिए विश्वास करने का कोई कारण न था, फिर भी धन्ना ने उनके कृत्यों का कोई विचार नहीं किया। वह नीति के इस कथन का पालन करता था, कि —

दाक्षिण्यं स्वजने दया परजने शाठ्यं सदा दुर्जने
प्रीतिः साधुजने नयो नृपजने विद्वज्जनेष्वार्जवम्।
शौर्यं शत्रुजने क्षमा गुरुजने नारीजने धूर्तता
ये चैव पुरुषाः कलासुकुशलास्तेष्वेव लोकस्थितिः॥

अर्थात्—स्वजनों के प्रति उदारता, परजनों के प्रति दया, दुष्टों के प्रति शठता, सज्जनों से प्रीति, राजाओं के प्रति नीति, विद्वानों से नम्रता, शत्रुओं के प्रति वीरता, अपने से बड़ों के प्रति क्षमा और स्त्रियों के प्रति धूर्तता यानी चतुराई का व्यवहार करनेवाले कलाकुशल लोगों से ही लोकमर्यादा या लोकस्थिति है

धन्ना, ऐसा ही कलाकुशल था, इसलिए वह अपने भाइयों से मिला। धन्ना के मिलने से उसके भाइयों एवं उसकी भौजाइयों को बहुत प्रसन्नता हुई। धन्ना, उन सब को चुपचाप अपने यहाँ लिवा लाया। उसने बैलों पर लदा हुआ किराणा अपने यहाँ उतरवा कर बैलों के लिए खाने-पीने की व्यवस्था करा दी, और भाइयों भौजाइयों को भी प्रेमपूर्वक अपने यहाँ रखा। धन्ना की पत्नियाँ अपनी जेठानियों से मिलीं। उनने जेठानियों का अच्छी

तरह सत्कार किया। जेठानियों को भी धन्ना की पत्नियों से मिल कर प्रसन्नता हुई।

अपने भाई-भौजाइयों को श्रमरहित करने के पश्चात् धन्ना ने उनसे पूछा, कि—आप लोगों को धनपुर क्यों त्यागना पड़ा, तथा माता-पिता कहाँ हैं? धन्ना के इस प्रश्न का उत्तर उनके भाइयों में से किसी ने भी नहीं दिया। वे लोग तो केवल अपनी आँखों से आँसू ही गिराते रहे, लेकिन उनकी स्त्रियों ने अपने पुरुषों द्वारा किया गया प्रजा पर अत्याचार एव उसके परिणाम स्वरूप राजा शतानिक द्वारा निर्वासन दण्ड दिये जाने की सब कथा कह सुनाई। साथ ही यह भी बताया, कि—'आपके माता-पिता धनपुर में ही हैं। उन्हे वहां की प्रजा ने अपने माता-पिता की तरह मानकर रखा है। राजा शतानिक ने भी उनसे वहीं रहने का अनुरोध किया, परिणामतः उन्हें वहीं रुकना पड़ा। राजा और प्रजा की ओर से हम तीनों को वहीं रहने के लिए कहा गया था परन्तु पति को छोड़ कर हम वहां कैसे रह सकतीं थीं! हमारे भाग्य में यदि किसी एक स्थान पर रहना और शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करना होता, तो आपके भाइयों में दुर्मति क्यों होती! हमारा जीवन इधर उधर भटकने में ही बीता है। आप ऐसे सब तरह सुयोग्य देवर के मिलने पर भी हमारा जीवन अशान्ति-मय ही रहा।'

यह कह कर धन्ना की भौजाइयाँ भी आँखों से आंसू गिराने लगीं। धन्ना ने अपने भाइयों और अपनी भौजाइयों को सान्त्वना दी। धन्ना के तीनों भाई-भौजाई धन्ना के यहां आनन्द से रहने लगे। कुछ दिनों के पश्चात् धन्ना ने विचार किया, कि माता-पिता वहां अकेले हैं और हम चारों भाई यहा हैं। वृद्धावस्था में उनके पास कोई भी नहीं है। इसलिए भाइयों तथा भौजाइयों को उन्हीं के पास भेज देना ठीक है।

इस प्रकार विचार कर उसने अपने भाइयों से कहा, कि वृद्ध माता-पिता धनपुर में रहें और अपन सब यहाँ रहें, यह ठीक नहीं। इसलिए आप लोग धनपुर जाकर वहीं माता-पिता के पास रहें। मैं राजा के नाम पत्र देता हूँ। राजा शतानिक आप लोगों के पूर्व अपराध क्षमाकर देगा, और आप लोगों को जो अनुभव हुआ है, उसके कारण भविष्य में आप लोग प्रजा के साथ सद्व्य-वहार करेंगे, ऐसी मुझे आशा है। इसलिए आप लोगों का वहीं जाना अच्छा है। मैं यहाँ राजकार्य का भार वहन कर रहा हूँ। राजा श्रेणिक मुझे जाने भी न देंगे, और यहाँ का कार्यभार आप लोग सम्हाल भी न सकेंगे।

इस प्रकार समझाबुझा कर तथा कुछ सम्पत्ति देकर धन्ना ने अपने भाइयों और अपनी भौजाइयों को धनपुर के लिए विदा किया। धन्ना के भाई-भौजाई धनपुर के लिए चले, परन्तु मार्ग में

उन्हें चोरों ने लूट लिया । उनके पास कुछ भी न रहने दिया । तीनों दम्पति कष्ट में पड़ गये । यह दशा देख कर धन्ना की भौजाइयों ने धन्ना के तीनों भाइयों से कहा, कि आप लोगों पर बार-बार विपत्ति आने का कारण यही है कि आप लोगों के हृदय में महान उपकारी देवरजी के प्रति दुर्भाव भरा हुआ है । आप लोगों में देवरजी के प्रति जब तक दुर्भाव रहेगा, तब तक शांति नहीं मिल सकती । अब तो बहुत कष्ट सह चुके हो, इसलिए अब हृदय को पाप–भावना निकाल कर देवरजी के पास शान्ति से रहो । दूसरे झंजटों में मत पड़ो ।

स्त्रियों की बात सुनकर तीनों भाइयों को अपने दुष्कृत्यों के कारण बहुत ग्लानि हुई । उनने स्त्रियों से कहा कि तुम लोगों का कथन ठीक तो है, परन्तु अब धन्ना के पास जाकर उसे अपना दुर्भागी मुख कैसे बतावें । हम अब तक कैसे-कैसे दुष्कृत्य कर चुके हैं और धन्ना ने हम पर कैसा-कैसा उपकार किया है । वस्तुतः हमारी दुर्भावना ने ही हमें बार बार कष्ट में डाला है, जिसके लिए आज पश्चात्ताप भी हो रहा है, फिर भी हमें यह विचार होता है कि हम लोग अब फिर धन्ना के सामने कैसे जावें । इस कथन के उत्तर में धन्ना की भौजाइयों ने कहा—कि जिस तरह अब तक आप लोग कष्टमुक्त होने के लिए देवरजी का आश्रय लेते रहे हैं उसी तरह इस बार भी उन्हीं का आश्रय लीजिए । बल्कि पहले

के आश्रय 'लेने में और इस वार के आश्रय लेने में इस कारण वहुत अन्तर है कि पहले आपको अपने दुष्कृत्यों के लिए पश्चात्ताप नहीं था, वल्कि देवरजी के प्रति द्वेपवुद्धि थी, लेकिन अव आपको पश्चात्ताप भी हो रहा है, तथा देवरजी के प्रति द्वेष-वुद्धि भी नहीं है। इसलिए देवरजी के पास जाने मे पहले की अपेक्षा इस वार अधिक अच्छाई है। यदि भविष्य मे देवरजी के प्रति आपके हृदय में ईर्षा-द्वेष न हुआ, तो आपको कष्ट में भी न पड़ना पड़ेगा। अपने पास चारों ने कुछ रहने भी नहीं दिया है, इसलिए अपने को धनपुर पहुँचना भी कठिन है । मार्ग मे ही पेट भरने के लिए इधर उधर भागना होगा । इससे यही अच्छा है कि अपन सव देवरजी के पास ही चलें, और भविष्य मे उन्हीं के पास रह कर उनकी आज्ञानुसार कार्य करें ।

पत्नियों सहित तीनो भाई जैसे-तैसे राजगृह आये । सव लोग घर के पिछले द्वार से धन्ना के घर में गये । भाई भौजाइयों को देख कर धन्ना को आश्चर्य हुआ । उनकी दीन दशा से धन्ना समझ गया, कि इन लोगो को मार्ग में किसी संकट का सामना करना पड़ा है। उसने अपने भाइयो से वापस लौटने और दुर्दशा का कारण पूछा। धन्ना के तीनों भाई पहले तो आँसू वहाते रहे, परन्तु धन्ना द्वारा धैर्य मिलने पर उनने चोरों द्वारा लुटे जाने की बात धन्ना से कही । साथ ही यह भी कहा कि हमको वार वार

हमारी दुर्भावना ने ही कष्ट मे डाला है। तुम जैसा भाई संसार मे किसी को शायद ही मिला होगा। जो एक वार नहीं किन्तु अनेक वार हमारे अपकारों पर ध्यान न देकर हम पर उपकार ही करे, ऐसा भाई तुम्हारे सिवा कौन होगा! लेकिन हम ऐसे दुष्ट-स्वभाव वाले हैं कि—तुम्हारे द्वारा किये गये उपकारो को विस्मृत करके-तुम्हारा अपकार ही करते रहे। तुम मे सदा दूषण ही देखते रहे, तुम्हारे अच्छे कार्य को भी बुरा बताते रहे और तुम्हारी सरलता तथा सहृदयता को भी कपट का ही रूप देते रहे। हमारी इस मनोवृत्ति के कारण हम लोगों को भी बार-बार कष्ट भोगना पड़ा, हमारे साथ-साथ वृद्ध माता-पिता को भी संकट सहने पड़े, और हमारा उपकार करने, हम पर दया करने के कारण तुम्हे भी कष्ट सहने पड़े। हम अपने दुर्गुण कहां तक कहे! हम ऐसा पापी और कृतघ्न दूसरा कोई न होगा। यद्यपि माता-पिता और तुम्हारी भौजाइयों से हमे सदा अच्छी सम्मति ही मिला करती, लेकिन हमारी दुर्बुद्धि उन अच्छी सम्मतिओं को बुरे रूप से ही ग्रहण करती। इसका परिणाम भी हमे भोगना ही पड़ा। अब हम तुम्हारी शरण हैं। तुम जैसा उचित समझो वैसा व्यवहार हमारे साथ करो, परन्तु अब हम लोगो को अपनी ही शरण मे स्थान दो। विलम्ब मत करो।

भाइयों का हृदय-परिवर्त्तन देख कर धन्ना बहुत ही आनन्दित

हुआ, और उनका पश्चात्ताप सुनकर उसका हृदय भ्रातृप्रेम एवं करुणा से द्रवित हो उठा। उसने अपने भाइयों के पैरों पड़ कर कहा कि अब आप लोग किसी भी तरह का दुःख मत कीजिये। आपके पश्चात्ताप ने आपका सब पाप नष्ट कर दिया। आप जिन कार्यों के लिए पश्चात्ताप करते हैं, वे सब कार्य मेरे लिए तो अच्छे ही रहे। उन्हीं के कारण मैं पुपैठान से निकल कर उन्नति कर सका। इसलिए मैं तो आपका उपकार ही मानता हूँ। आप विषाद त्याग कर आनन्द से रहिये।

अपनी अपनी पत्नियो सहित धन्ना के तीनों भाई धन्ना के यहां आनन्द से रहने लगे। अब उनके हृदय में धन्ना के प्रति कलुषित भावना न थी, किन्तु उनको अपने पूर्वकृत्यों के लिए पश्चात्ताप था। कुछ दिनो के पश्चात् धन्ना ने अपने माता-पिता को भी राजगृह बुला लिया। धन्ना के माता-पिता को यह देख कर बहुत ही प्रसन्नता हुई कि धन्ना के तीनों भाई अब धन्ना के प्रति द्वेष नहीं रखते किन्तु स्नेह रखते हैं।

धन्ना के तीनो भाई अब सरलतापूर्वक रहते थे। वे किसी भी झंजट मे न पड़ते, किन्तु अपना अधिकान्श समय धर्म-कार्य में व्यतीत करते। इसी तरह उन तीनों की पत्नियां, तथा धनसार और धनसार की पत्नी भी अपना समय धर्मध्यान में ही लगाती।

धार्मिक क्षेत्र होने के कारण राजगृह में मुनि महात्मा आया ही करते थे। तदनुसार एक बार कोई मुनि आये। अपने समस्त परिवार सहित धनसार ने उन मुनि से धर्मोपदेश सुना। पश्चात् उसने उन ज्ञान-सम्पन्न मुनि से कहा कि महाराज, इन मेरे चारों लड़कों के गुण रुचि और स्वभाव में परस्पर कैसा अन्तर है, यह बात आप अपने ज्ञान से जानते ही हैं। मैं जानना चाहता हूँ कि इन चारों में से तीन बड़े लड़कों की अपेक्षा इस छोटे पुत्र धन्ना में उत्कृष्ट गुण उदारता सरलता सहनशीलता और सम्पन्नता क्यों है? आप इनके पूर्व-भव के कार्य पर से यह बताने की कृपा कीजिये।

धनसार के इस प्रश्न के उत्तर में वे मुनि कहने लगे, कि तुम्हारे ये चारों पुत्र पूर्व-भव में भी भाई-भाई ही थे। ये चारों धन सम्पन्न थे तथा सम्मिलित ही रहते थे। वैसे तो चारों भाई सुकृत्य करने वाले थे परन्तु तीन भाइयों की अपेक्षा चौथे भाई इस तुम्हारे छोटे पुत्र में उदारता और धार्मिक भावना अधिक थी। एक बार तीन भाई घर से बाहर गये हुए थे, घर पर चौथा भाई ही था जो उदार प्रकृति का था। उसी समय एक मुनि भिक्षा के लिए इनके घर आये। जो भाई घर पर था, उसने भक्ति-भाव एवं हर्षपूर्वक मुनि को आहार पानी का दान दिया। आहार पानी लेकर वे मुनि घर से निकले, इतने ही में वे तीनों भाई भी

आ गये, जो घर से बाहर गये हुए थे। मुनि को अपने घर से आहार पानी ले जाते देखकर तीनों भाई कुछ रुष्ट हुए। उनने चौथे भाई से कहा कि इन धर्मढोंगियों को भोजन पानी क्यों दिया। ऐसे लोग बहुत घूमते रहते हैं, जो कमाकर खाने के बदले धर्म के नाम पर माँग खाते हैं। इस तरह उन तीन भाइयों ने स्वयं दान नहीं दिया, किन्तु दिये गये दान का अनुमोदन करने के बदले उसका और विरोध किया। उन तीनों भाइयों ने दूसरे बहुत से सुकृत किये थे, इससे वे उस भव को त्याग कर तुम्हारे यहाँ लाला, बाला, काला नाम के तीन बड़े पुत्र हुए परन्तु मुनि को दिया गया दान अनुचित बताने एवं उस दान का विरोध करने के कारण इन लोगों में उदारता सहनशीलता बुद्धिमता तथा सम्पन्नता नहीं आई। बल्कि ये लोग जीवनभर पराश्रित रहे। इन लोगों के पास सम्पत्ति आती भी नहीं और जो सम्पति इनको दी जाती है वह भी इन्हें त्यागकर चली जाती है। तुम्हारे छोटे पुत्र धन्ना ने उस जन्म में उदारता रखकर मुनि को दान दिया था, इसलिए इस जन्म में भी यह उदार बुद्धिमान तथा सम्पत्तिशाली हुआ। इसके पीछे सम्पत्ति उसी प्रकार दौड़ती रही, जिस प्रकार शरीर के पीछे छाया दौड़ती रहती है। इसने अपने तीनों भाइयों के लिए अनेक बार सम्पत्ति त्यागी फिर भी इसको आगे आगे सम्पत्ति मिलती ही गई, लेकिन इसके तीनों बड़े भाइयो के पास से

विशाल सम्पत्ति भी एक बार नहीं किन्तु अनेक बार चली गई। इस प्रकार तुम्हारे तीन पुत्रों से चौथे पुत्र धन्ना मे जो अन्तर है वह अन्तर मुनि को पूर्व-भव में हर्षपूर्वक दान देने के कारण ही है। इसको सद्गुण रूपी सम्पति प्राप्त होने एवं इसके भाइयों में सद्गुणों का अभाव होने का कारण पूर्व-भव का वह कारण है जो मैंने बताया है।

मुनि द्वारा अपने पूर्वभव का वृत्तान्त सुन कर धन्ना के तीनों भाइयों को बहुत प्रसन्नता हुई। उनमें और धनसार में मुनि का उपदेश सुनकर संसार की ओर से विरक्तता तो पहले आ ही गई थी, मुनि द्वारा वर्णित पूर्व-वृत्तान्त सुन कर वह विरक्तता और बढ़ गई। धनसार ने अपने चारों लडकों से कहा कि अब तुम लोग यह घरबार सम्हालो, मैं संयम लेकर आत्मा का कल्याण करूँगा। धनसार के मुँह से यह निकलते ही उसके तीनों बड़े पुत्र कहने लगे, कि हमने तो पहले से ही संयम लेने का विचार कर रखा है! इसलिए हम भी आपके साथ ही संयम लेंगे। हमने अब तक अपना जीवन क्लेश-कलह में ही व्यतीत किया है। न तो इहलौकिक कार्य ही किया है, न पारलौकिक ही। हमारा जीवन अब तक व्यर्थ रहा है। नीतिज्ञों का कथन है कि—

धर्मार्थ काम मोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम्॥

अर्थात्—जिसे धर्म अर्थ काम और मोक्ष इन चारों में से किसी एक की भी प्राप्ति नहीं हुई, उसका जन्म उसी प्रकार निरर्थक है जिस प्रकार बकरी के गले के स्तन निरर्थक होते हैं।

हमने धर्म अर्थ काम और मोक्ष इन चारो में एक को भी प्राप्त नहीं किया, इस कारण अब तक का हमारा जीवन व्यर्थ गया, लेकिन अब हम अपने शेष जीवन को व्यर्थ न जाने देंगे, किन्तु धर्म और मोक्ष-प्राप्ति में लगावेंगे।

धन्ना के भाइयों का कथन समाप्त होते ही धनसार की पत्नी बोली, कि मैं भी संयम लेकर पति का अनुगमन करूँगी और धन्ना की तीनों भौजाइयाँ भी ऐसा ही कहने लगीं। धन्ना अपने भाइयों का परिवर्तन देखकर आश्चर्य मे पड़ गया। उसने अपने भाइयों से कहा, कि वृद्ध माता-पिता का संयम लेकर आत्मकल्याण करना उचित है, लेकिन आप लोग संयम क्यों लेते हैं! अब तक पारस्परिक विरोध से अपन शान्तिपूर्वक एक जगह न रह सके और अब जब कि विरोध शमन हुआ है, तथा अपन चारों भाई शान्तिपूर्वक सम्मिलित रहने लगे हैं, तब आप संयम लेकर मुझे फिर अकेला बनाना चाहते हैं! आप कृपा करके संयम मत लीजिये, किन्तु पिताजी के स्थान पर घर बार सम्हाल कर मेरी रक्षा कीजिये। ऐसा करते हुए आप धर्म ध्यान करके आत्मा का कल्याण भी कर सकते हैं। मैं अब आपको वह चिंतामणि

देने के लिए भी तय्यार हूँ, जिसे आप लोग चाहते थे, फिर भी मैंने आप लोगों के स्वभाव को दृष्टि में रख कर नहीं दी थी।

इस प्रकार धन्ना ने अपने भाइयों एवं अपनी भौजाइयों को घर रहने के लिए बहुत समझाया, सब तरह का प्रलोभन भी दिया, परन्तु किसी ने भी घर रहना स्वीकार नहीं किया। अन्त में पत्नी सहित धनसार तथा उसके तीनों बड़े पुत्र एवं उनकी तीनों वधुओं ने घरबार त्यागकर संयम स्वीकार किया और आत्मा का कल्याण करने लगे। घर मे केवल धन्ना ही अपनी आठो पत्नियों सहित रह गया लेकिन उसकी भावना भी यही बनी रहती थी कि मैं कब पिता और भाइयों की तरह संयम लेकर आत्म-कल्याण करने लगूँगा। वह दिन धन्य होगा, जब मैं भी इस असार संसार से निकल जाऊँगा ! इस प्रकार की भावना वह किया ही करता था, इतने ही मे एक ऐसी बात हो गई, जिससे धन्ना शीघ्रता-पूर्वक और अनायास संयम-मार्ग में प्रवर्जित हो गया।

धन्ना मुनि

चला विभूतिः क्षणभंगि यौवनं
कृतान्त दन्तान्तरवर्ति जीवितम् ।
तथाप्यवज्ञा परलोक साधने
नृणामहो विस्मयकारि चेष्टितम् ॥

अर्थात्—विभूति चंचल है, यौवन क्षणभंगुर है, और जीवन काल के दाँतों में है, तो भी लोग परलोक साधन की उपेक्षा करते हैं। मनुष्यों की यह चेष्टा विस्मयकारी है।

कवि ने यह बात ऐसे लोगों को लक्ष्य करके कही है, जो धन-सम्पत्ति के रक्षण एवं उपभोग में ही लगे रहते हैं, या जवानी के नशे में ही मस्त हैं, या यह समझ बैठे हैं कि

हम कभी मरेंगे ही नहीं। ऐसे लोग परलोक को बिलकुल ही भूल जाते हैं। बल्कि यदि कोई महात्मा ऐसे लोगों को परलोक-साधन का उपदेश सुनाने लगते हैं, तो ऐसे लोग उस उपदेश को सुनना भी पसन्द नहीं करते, उसके अनुसार आचरण करना तो दूर की बात रही। ऐसे लोग सम्भवतः यह समझते हैं, कि 'हमारा यह धन-वैभव सदा ऐसा ही रहेगा, और हम सदा ही इसके स्वामी रह कर इसी तरह आनन्द करते रहेंगे। हमारी यह जवानी कभी नष्ट ही न होगी, तथा हम जवानी में भोगे जानेवाले भोग इसी तरह भोगते ही रहेंगे। हम कभी मरेंगे ही नहीं, फिर हमें इस लोक के सुख के सिवा और किसी विषय में विचार करने की ही क्या आवश्यकता है!' ऐसा समझने के कारण ही परलोक साधन की ओर ध्यान नहीं दिया जाता। कवि ने, ऐसा समझ बैठनेवालों के प्रति आश्चर्य प्रकट किया है। क्योंकि ऐसा समझना भूल ही नहीं है, किन्तु नितान्त मूर्खता है। संसार में बड़े-बड़े धनिक हुए हैं, और होंगे, परन्तु किसी का भी धन न तो स्थिर रहा ही है, न रहता ही है, न रहेगा ही। धन-सम्पदा का स्वभाव ही चंचल है। चंचलता के कारण ही लक्ष्मी का नाम चंचला है। जो चंचला है, वह एक जगह कैसे ठहर सकती है! एक कवि ने तो यहाँ तक कह डाला है, कि—

या स्वसद्मनि पद्मेऽपि सन्ध्यावधि विजृम्भते ।
इन्दिरा मन्दिरेऽन्येषा कथं तिष्ठति सा चिरम् ॥

अर्थात—जो लक्ष्मी कमल रूपी अपने घर मे भी केवल सन्ध्या तक ही रहती है वह दूसरे के घर में अधिक दिनों तक कैसे ठहर सकती है !

पौराणिकों ने कमल को लक्ष्मी का घर माना है। सन्ध्या के समय कमल श्रीहीन (बन्द) हो जाता है। उसमें से श्री (लक्ष्मी) चली जाती है। इसी बात को लेकर कवि कहता है, कि जब लक्ष्मी अपने स्वयं के ही घर में नहीं ठहरती है, तब दूसरे के घर में कैसे ठहरेगी !

इस प्रकार जिस सम्पत्ति पर गर्व करके परलोक विस्मृत किया जाता है या परलोक साधन की उपेक्षा की जाती है वह सम्पदा अस्थिर है, स्थिर नहीं है। जिस जवानी पर गर्व किया जाता है, या जिसके नशे में मस्त रहकर परलोक नहीं साधा जाता है, वह जवानी भी स्थिर नहीं रहती। वृद्धावस्था आने पर जवानी जाने की बात तो दूर रहो, आठ चार रोज की बीमारी में ही जवानी का अन्त हो जाता है और बुढ़ापा आ जाता है। इसी तरह जीवन भी सदा नहीं रहता। कोई बचपन में ही मर जाता है, कोई जवानी में और कोई वृद्ध होकर मरता है, परन्तु प्रत्येक शरीरधारी के जीवन का अन्त अवश्य होता है। वह अन्त कब

होगा, इसका भी कुछ निश्चय नहीं है। धन, युवावस्था और जीवन की अस्थिरता को सभी लोग जानते हैं। सभी लोग यह देखते हैं, कि धनवान निर्धन हो जाते हैं, जवान वृद्ध हो जाते हैं और बालक से लेकर वृद्ध तक सभी तरह के लोग मरते हैं। इन बातों को जानते हुए भी लोग परलोक साधन की ओर ध्यान नहीं देते, इसी पर कवि ने आश्चर्य प्रकट किया है।

इहलौकिक पदार्थों की अस्थिरता को जानते हुए भी जो लोग इहलौकिक कामों में ही रचे पचे रहते हैं, उनको बुद्धिहीन ही कहा जावेगा, बुद्धिमान नहीं कहा जा सकता। जो बुद्धिमान हैं, वे या तो इन सब बातों को दृष्टि में रख कर स्वयं ही सावधान हो जाते हैं, या किसी के उपदेश अथवा किसी की ओर से सूचना मिलने पर सावधान होकर परलोक—साधन में लग जाते हैं। फिर चाहे वह सूचना किसी भी रूप में क्यों न मिली हो। बुद्धिमान व्यक्ति हँसी या व्यङ्ग के रूप मे कही गई बात भी अपने लिए सूचना रूप मानकर सम्हल जाते हैं, और त्याज्य को त्यागकर उपादेय को अपना लेते हैं। धन्ना से सुभद्रा ने साधारण बात चीत में ही यह कहा था, कि 'स्वयं सांसारिक वैभव में फँसे रहकर जो भोगों को त्याग रहा है उसको कायर कहना अनुचित है।' वैसे देखा जावे तो सुभद्रा का यह कथन बहुत मामूली बात थी, परन्तु धन्ना बुद्धिमान था, इसलिए वह सुभद्रा के इस कथन को सूचना रूप

मानकर किस प्रकार परलोक साधन के लिए तय्यार हो गया, किस प्रकार उसने अपनी आठ पत्नियों धन—भण्डार और सम्मान-प्रतिष्ठा से ममता उतार दी, तथा किस प्रकार संयम मे प्रव्रजित होकर आत्म कल्याण करने लगा आदि बातें इस प्रकरण से ज्ञात होगी।

धन्ना की पत्नी सुभद्रा का भाई शालिभद्र बहुत ही धनवान था। महाराजा श्रेणिक भी उसके यहाँ की अपार द्रव्यराशि को देखकर चकित रह गया था। राजा श्रेणिक जब शालिभद्र के घर गया था, उस समय शालिभद्र को अपनी माता के आग्रह से राजा श्रेणिक को अभिवादन करने के लिए महल से नीचे उतरना पड़ा था। यद्यपि माता की आज्ञा मानकर शालिभद्र ने महल से नीचे उतर राजा श्रेणिक को अभिवादन तो किया लेकिन उसके लिए राजा श्रेणिक को अपना स्वामी मानकर इस नाते अभिवादन करना असह्य हुआ और इस विषयक अधिक विचार करने पर उसे संसार से ही घृणा हो गई। इतने ही में राजगृह नगर के बाहर उद्यान में भगवान महावीर का पधारना हुआ। भगवान पधारे हैं, यह जानकर शालिभद्र भी भगवान को वन्दन करने के लिए गया। वहाँ भगवान महावीर का उपदेश सुनकर शालिभद्र को संसार से विरक्ति हो गई। परिणामतः वह संयम लेने के लिए अपनी बत्तीस स्त्रियों को त्याग कर एक दम निकलना चाहा किन्तु माता की युक्तियों से वह प्रतिदिन एक-एक को समझा कर त्यागने लगा।

"मेरे भाई शालिभद्र को संसार से वैराग्य हो गया है और वह मेरी बत्तीस भौजाइयों में से नित्य प्रति एक-एक को समझा कर त्यागता जा रहा है' यह समाचार सुभद्रा ने भी सुना। यह समाचार सुनकर सुभद्रा को बहुत ही दुःख हुआ। जिस मेरे भाई ने जीवन भर आनन्द ही आनन्द भोगा है, जो बहुत कोमल शरीरवाला है और जिसे यह भी मालूम नहीं है कि दुःख कैसा होता है, वह मेरा भाई संयम में होनेवाले कष्ट किस तरह सहेगा, भिक्षा किस तरह करेगा आदि विचारों ने सुभद्रा के हृदय में उथल-पुथल मचा दी। वह ऐसे दुःख में थी, इतने ही में धन्ना स्नान करने के लिए आया। अपने पति धन्ना को सुभद्रा अपने हाथ से ही स्नान कराया करती थी। धन्ना को स्नान करने के लिए आया देखकर सुभद्रा क्षण-भर के लिए अपने हृदय का दुःख दबा कर—धन्ना को स्नान कराने गई।

सुभद्रा, धन्ना को स्नान कराने लगी, परन्तु उसके हृदय में बन्धु-वियोग का दुःख उथल-पुथल मचा रहा था। सहसा उसको यह विचार हुआ, कि मेरा भाई जब संयम ले लेगा तब मेरी भौजाइयों को कैसा भयङ्कर दुःख होगा! मेरी भौजाइयों को कभी एक दिन के लिए भी पति-वियोग का दुखः नहीं सहना पड़ा है। वे मेरे भाई के आसपास उसी तरह बनी रही हैं, जिस तरह जीभ के आस-पास दाँत बने रहते हैं। ऐसी दशा में सहसा उन पर पति-वियोग

का जो दुःख: आ पड़ेगा उसे सहकर वे किस तरह जीवित रहेंगी ! जिस तरह मुझे ये पति प्रिय हैं, उसी तरह उन्हें भी मेरा भाई प्रिय है।

इस प्रकार विचारती हुई सुभद्रा के हृदय का धैर्य छूट गया। दुःख के कारण उसकी आंखों से गरम-गरम आँसू निकल पड़े। उस समय सुभद्रा, धन्ना का शरीर मलती हुई उसे शीतळ जल से स्नान करा रही थी, इसलिए उसकी आँखों से निकले हुए गरम आँसू धन्ना के शरीर पर ही पड़े। अपने शरीर पर गरम गरम बूँदें गिरीं जानकर, धन्ना चौंक-सा उठा। ये गरम बूँदें कहाँ से गिरीं, यह जानने के लिए इधर-उधर देखते हुए धन्ना ने सुभद्रा के मुँह की ओर देखा, तो उसे सुभद्रा की आँखों में आँसू देख पड़े। अपनी प्रिय पतिव्रता पत्नी की आँखों से आँसू गिरते देखकर धन्ना को आश्चर्य हुआ। वह कुछ निश्चय न कर सका, कि आज सुभद्रा की आँखों से आँसू क्यों गिर रहे हैं !

धन्ना ने सुभद्रा से कहा, कि—प्यारी सुभद्रा, आज तुम्हें ऐसा क्या दुःख है जो तुम आँसू बहा रही हो ? मैंने दुःख के समय भी तुम्हारी आँखों में आँसू नहीं देखे, फिर आज तुम्हारी आँखों में आँसू क्यों ? आज तुम्हें ऐसा क्या दुःख है ? जहाँ तक मैं समझता हूँ, तुम सब तरह सुखी हो। तुम पितृगृह की ओर से भी सुखी हो, और मेरी ओर से भी। तुम धनिक-शिरोमणि

शालिभद्र की अकेली तथा लाडली बहन हो और मेरी पत्नी हो। यद्यपि तुम्हारी सात सौतें हैं, परन्तु उन्होंने तुम्हें अपनी स्वामिनी मान रखा है, तथा वे स्वेच्छापूर्वक तुम्हारी दासियाँ बनी हुई हैं। फिर समझ में नहीं आता, कि तुम्हें किस दुःख ने आ घेरा है, जिससे तुम आँसू बहा रही हो! यदि अनुचित न हो तो तुम अपना दुःख मुझे भी सुनाओ।

धन्ना का कथन सुन कर सुभद्रा का हृदय दुःख से और भी उमड़ पड़ा। अपने दुःख का आवेग रोककर उसने करुण स्वर में कहा, कि—नाथ, मेरा भाई शालिभद्र संसार से विरक्त हो रहा है। वह संयम लेने की तयारी कर रहा है, तथा इसके लिए मेरी एक-एक भौजाई को एक एक दिन में समझाता और त्यागता जा रहा है। जब वह मेरी बत्तीसों भौजाइयों को समझा चुकेगा, तब घर त्यागकर, संयम ले लेगा। मेरा एक मात्र भाई-जिसने कभी कष्ट का नाम भी नहीं सुना है—संयम लेगा और इस प्रकार मैं पितृगृह की ओर से सुखरहित हो जाऊँगी। मुझे भाई की ओर का जो सुख प्राप्त था वह नष्ट हो जावेगा, तथा मेरा भाई संयम में होने वाले कष्ट किस प्रकार सहेगा आदि विचारों से ही मुझे दुःख है और मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े हैं।

सुभद्रा का कथन समाप्त होने पर धन्ना, व्यङ्गात्मक रीति से हँस पड़ा। उसने सुभद्रा के कथन का उपहास करते हुए उससे

कहा, कि तुम्हारा भाई शलिभद्र वीर नहीं किन्तु कायर है। यदि वह कायर न होता, तो अपनी एक-एक पत्नी को समझाने में एक एक दिन क्यों लगाता ! संसार मे वैराग्य होने के पश्चात स्त्रियों को समझाने के बहाने बत्तीस दिन रुकने की क्या आवश्यकता थी ! क्या बत्तीसों पत्नियो को एक ही दिन मे और कुछ ही समय में नहीं समझाया जा सकता ? वैराग्य होते ही जो संसार-व्यवहारों से अलग नहीं हो गया, वह वीर नहीं किन्तु कायर है। ऐसा कायर व्यक्ति क्या तो संयम स्वीकार करेगा, और क्या संयम का पालन करेगा। ऐसे कायरों के लिए दुःख करना भी व्यर्थ है।

सुभद्रा को यह आशा थी, कि मेरे पति मेरे भाई को किसी प्रकार समझाकर संसार-व्यवहार में रोके रहने और इस प्रकार मुझे दुःखमुक्त करने का प्रयत्न करेंगे। लेकिन उसको अपने पति की ओर से ऐसी बात सुनने को मिली, जो आशा के विरुद्ध होने के साथ ही भाई का अपमान करनेवाली भी थी। सुभद्रा को पति के मुख से यह सुनकर बहुत ही दुःख हुआ, कि तुम्हारा भाई कायर है। यह बात सुभद्रा के हृदय को छेद गई। उसने धन्ना से कहा कि—नाथ ! आप मेरे भाई को कायर कैसे कह रहे हैं ! क्या मेरा भाई कायर है ? बत्तीस स्त्रियो एवं स्वर्ग-सी सम्पदा त्यागना क्या कायरता है ? आप कहते हैं कि बत्तीस

स्त्रियों को समझाने के बहाने बत्तीस दिन रुकने की क्या आवश्यकता है? लेकिन इस समय में ऐसी सम्पदा और बत्तीस स्त्रियाँ त्यागकर संयम लेने की तैयारी करनेवाला, मेरे भाई के सिवा दूसरा कौन है ! इस तरह की भोग-सामग्री वर्तमान में किसने त्यागी है ! ऐसा त्याग सरल नहीं है। अपन तो सांसारिक भोगों में ही पड़े रहें और जो त्यागता है उसको कायर कह कर उसकी निन्दा करें, यह उचित तो नहीं है। भोगियों को उन लोगों की निन्दा न करनी चाहिए, जो भोगों को त्याग चुके हैं अथवा धीरे-धीरे भी—त्याग रहे हैं।

सुभद्रा के इस कथन ने धन्ना को एक दम से जागृत कर दिया। वह सुभद्रा का कथन सुनता जाता था, और अपने हृदय में यह सोचता जाता था कि वास्तव मे सुभद्रा का कथन ठीक है। मैं स्वयं तो विषय-भोग में पड़ा रहूँ, और जो एक दम से नहीं परन्तु धीरे-धीरे भी भोगो को त्याग रहा है उसको कायर बताऊँ, यह अनुचित ही है। शालिभद्र को कायर बताना तभी ठीक हो सकता है, जब मैं एक दम से भोगों को त्याग दूँ, और यदि मैं ऐसा न कर सकूँ तो फिर मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि शालिभद्र कायर नहीं किन्तु वीर है तथा मैं कायर हूँ। मुझ को सुभद्रा के कथन से बुरा न मानना चाहिए, किन्तु सुभद्रा के कथन को सदुपदेश रूप मान संसार-व्यवहार से निकल कर सयम

स्वकार करना चाहिए और सुभद्रा को यह बता देना चाहिए कि वीरता ऐसी होती है।

इस प्रकार विचार कर धन्ना ने सुभद्रा से कहा, कि भद्रे ! तुमने मुझे जो उपदेश दिया है उसके लिए मैं तुम्हारा बहुत आभारी हूँ। संसार में ऐसी स्त्रियाँ कम ही निकलेंगी, जो अपने पति को ऐसा उपदेश दें। अधिकांश स्त्रियाँ अपने पति को सांसारिक विषय भोगो मे फसाये रखने का ही प्रयत्न करती हैं, भोगों से निकालने-वाली तो कोई तुमसी बिरली ही होती हैं। यद्यपि तुमने जो कुछ कहा है वह अपने भाई का पक्ष समर्थन करने के लिए ही परन्तु मैं तुम्हारे कथन को अपने लिए चुनौती मानता हूँ और यह निश्चय करता हूँ कि मैं संयम लूँगा। मेरा और तुम्हारा अब तक दाम्पत्य—सम्बन्ध रहा है। सर्वविरति संयम की अपेक्षा यह सम्बन्ध दूषित है, इसलिए आज मैं इस सम्बन्ध को तोड़ता हूँ। अब से तुम मेरे लिए मेरी माता या बहन के समान हो। तुम मेरे शरीर पर से हाथ हटाओ। अब मैं इस नाशवान शरीर को निर्मल बनाने के बदले अविनाशी आत्मा को संयम रूपी जल से स्नान कराकर निर्मल बनाऊँगा।

जिस प्रकार सोता हुआ सिंह बाण लगने से जागृत हो जाता है और आलस्य त्यागकर बाण मारनेवाले की चुनौती स्वीकार कर लेता है, उसी प्रकार धन्ना भी सुभद्रा के वचनों से जागृत हो

उठा, तथा संयम लेने के लिए तैयार हो गया। उसने सोचा कि मेरी प्रधान—पत्नी ने मुझे अप्रत्यक्ष रूप से संयम लेने की स्वीकृति दे दी है, इसलिए अब मुझे और किसी से स्वीकृति लेने की भी आवश्यकता नहीं रही है। इस प्रकार सोचकर धन्ना अपने शरीर पर से भद्रा का हाथ हटाकर उठ खड़ा हुआ और बाहर जाने लगा। धन्ना का कथन सुनकर तथा उसे जाते देखकर, सुभद्रा हक्की-बक्की हो गई। वह दौड़कर धन्ना के सामने आ उसके पैरों पर गिर पड़ी, तथा हाथ जोड़कर कहने लगी, कि-नाथ, आप कहाँ जा रहे हैं? बात ही बात में आप यह क्या करने के लिए तैयार हुए हैं? मैंने जो कुछ कहा वह अपने भाई का पक्ष लेकर ही, न कि इस उद्देश्य से कि आप हम लोगों को छोड़ कर संयम ले लें। हो सकता है कि मैंने बन्धु-वियोग के दुःख में कोई अनुचित बात कह डाली हो, इसलिए अपने कथन के विषय में मुझे पश्चात्ताप है और मैं आपसे बार-बार क्षमा मांगती हूँ। आप मेरा अपराध क्षमा करिये। आप पुरुष हैं। आपको स्त्रियों की बात पर इस तरह ध्यान देना उचित नहीं है। यदि आप भी स्त्रियों का अपराध क्षमा न करेंगे, स्त्रियों के प्रति उदारता न रखेंगे तो फिर पुरुष लोग किसका आदर्श सामने रखकर स्त्रियों का अपराध क्षमा करेंगे? मैं भाई के विरक्त होने से पहले ही दुःखी हूँ। मैं सोचती थी कि आप मेरे भाई को समझा कर मेरा

दुःख मिटावेंगे, लेकिन आप तो मुझे और दुःख में डाल रहे हैं। जब कोई यह सुनेगा कि सुभद्रा की बातों के कारण उसके पति गृह-संसार त्याग कर संयम ले रहे हैं, तब वह मुझे भी क्या कहेगा और आपको भी क्या कहेगा ! यदि अपराध किया है तो मैंने, मेरी सात बहनों ने कोई अपराध नहीं किया है। फिर आप उन्हें कैसे त्याग सकते हैं । यदि मैं अपराधिन हूँ तो मुझे त्याग दीजिये। मैं वह सब दण्ड सहने को तैयार हूँ जो आप मुझे देंगे, लेकिन मेरे अपराध के कारण मेरी सात बहनों को दण्ड मत दीजिये। मेरे और मेरी सात बहनों के जीवन आप ही हैं। आपके सिवा हमारा कौन है ! यदि आप भी हमें न कुछ अपराध के कारण त्याग जावेंगे, तो फिर हमारे लिए किसका सहारा होगा ? इसलिए मैं प्रार्थना करती हूँ, कि आप मेरा अपराध क्षमा कर दीजिये और गृह-त्याग का विचार छोड़ दीजिये। यह प्रार्थना करने के साथ ही मैं यह भी निवेदन कर देती हूँ, कि हम सब आपको किसी भी तरह न जाने देंगी। स्त्रियों का बल नम्रता एवं अनुनय—विनय करना है। हम आपको रोकने में अपना यह सारा बल लगा देंगी, लेकिन आपको कदापि न जाने देंगी।

सुभद्रा का कथन सुनकर धन्ना समझ गया, कि सुभद्रा मेरे से प्रेम होने के कारण ही मुझे रोकना चाहती है और साथ ही यह ऐसा भी सोचती है कि ये मेरी बातों पर से संयम ले रहे हैं

इसलिये सब लोग मेरी निन्दा करेंगे। यह समझ कर धन्नाने सुभद्रा से कहा, कि—बहन सुभद्रा, तुम यह क्या कह रही हो! तुमने मुझे अभी ही अपने वीरतापूर्ण शब्दों द्वारा इस संसार-जाल से निकाला है और अब फिर उसी में फँसाने का प्रयत्न करती हो! तुम्हारे वचनों से ही मेरा आत्मा जागृत हुआ है और मैं संयम लेने को तैयार हुआ हूँ, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं तुम से रुठकर संयम ले रहा हूँ। तुमने मेरा उपकार किया है, अपकार नहीं किया है। वास्तव में तुम मेरी गुरु बनी हो। तुमने मेरे आत्मा को घोर दुःखमय संसार से निकालकर कल्याण-मार्ग पर आरूढ़ किया है। थोड़ी देर के लिए अपनी स्वार्थ-भावना अलग करके तुम्हीं विचार करो, कि मेरा हित संसार त्याग कर संयम लेने में है, या विषय-भोगों में फँसे रहने में है! क्या विषय-भोगों में फँसे रहने पर आत्मा का कल्याण हो सकता है? यदि नहीं, तो फिर मेरा संयम लेना क्या अनुचित है? रही यह बात कि तुम लोगों को मेरे चले जाने से दुःख होगा, लेकिन विचार करो कि वह दुःख क्यों होगा! इस-लिए न कि मेरे चले जाने से तुम्हारे विषय-भोग छूट जावेंगे? इस तरह तुम अपने स्वार्थ के लिए ही मुझे रोकती हो, लेकिन यह स्वार्थ यदि प्रसन्नता से न छोड़ोगी, तो कभी विवश होकर तो छोड़ना ही पड़ेगा, और उस दशा में मेरे आत्मा का वह कल्याण

न होगा, जो प्रसन्नता से विषय-भोग त्यागने पर हो सकता है। आज मैं स्वेच्छा से संयम ले रहा हूँ, परन्तु यदि मेरी मृत्यु हो जावे तो उस दशा में तुम्हे पुरुष-सुख से वंचित रहना पड़ेगा या नहीं ? और जब रहना पड़ेगा, तब मुझे कल्याण-मार्ग से रोकने का यही अर्थ हुआ कि तुम क्षणिक एवं नाशवान पुरुष-सुख के लिए मेरा अहित करना चाहती हो ! सुभद्रा, जरा विचार करो। यदि तुम्हे मुझ से प्रेम है, तो उसका बदला मेरे अहित के रूप में न दो। अपने स्वार्थ के लिए मुझे अवनति में न डालो। नीतिकारों ने कहा ही है कि—

यौवनं जीवितं चित्तं छाया लक्ष्मीश्च स्वामिता।
चचलानि षडेतानि ज्ञात्वा धर्मरतो भवेत्॥

अर्थात्—जवानी, जीवन, मन, शरीर की छाया धन और प्रभुता ये छहों चंचल हैं यह जानकर धर्म-रत होना चाहिए।

तुम्हारे कथन द्वारा इस बात को जानकर भी क्या मैं इन्हीं में उलझा रहूँ ? धर्म में रत न होऊँ ? सांसारिक विषय-भोग चाहे जितने भोगो, तृप्ति तो होती ही नहीं है और अन्त में छूटते ही हैं। फिर स्वेच्छा से उन्हें त्यागकर संयम द्वारा आत्म-कल्याण क्यों न किया जावे ! यह मनुष्य-शरीर बार बार तो मिलता ही नहीं है। न मालूम कितने काल तक दुःख भोगने के पश्चात् यह मनुष्य भव मिला है। क्या इसको विषय-भोग में ही नष्ट कर

देना बुद्धिमानी होगी ? क्या फिर ऐसा अवसर मिलेगा, कि मैं स्वेच्छा पूर्वक विषय-भोग से निवृत्त हो संयम द्वारा आत्मा का कल्याण करूँ ? यदि नहीं, तो फिर मेरा मार्ग क्यों रोक रही हो ? मुझे जाने दो। मैंने तुम्हें अपनी बहन कहा है। इस पवित्र संबंध को तोड़ कर फिर अपवित्र संबन्ध जोड़ने का प्रयत्न मत करो। तुम नीतिज्ञों के इस कथन की ओर ध्यान दो—

यावत्स्वस्थ मिदं कलेवर गृहं यावच्च दूरे जरा
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषाः कार्यः प्रयत्नो महान्
प्रोद्दीप्ते भवने च कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः॥

अर्थात—जब तक शरीर रूप गृह स्वस्थ है, वृद्धावस्था दूर है, इन्द्रियों की शक्ति मारी नहीं गई है, और आयुष्य नष्ट नहीं हुआ है, तबतक बुद्धिमान को आत्मा के कल्याण का पूरा प्रयत्न कर लेना चाहिए। जब ये सब बातें न रहेंगी, तब आत्मकल्याण के लिए प्रयत्न करना वैसा ही निरर्थक होगा, जैसा निरर्थक प्रयत्न घरमें आग लगने पर कुआ खोदने का होता है।

धन्ना को समझाने तथा रोकने के लिए सुभद्रा ने बहुत प्रयत्न किया। उसकी सातों सौतें भी आ गईं और उनने भी धन्ना से बहुत अनुनय-विनय की, परन्तु वैराग्य के रंग से रंगे हुए धन्ना पर दूसरा रंग न चढ़ा। उसने सब को इस तरह का उत्तर दिया

और ऐसा समझाया, कि जिससे वे सब अधिक कुछ न कह सकीं। बल्कि धन्ना के समझाने का सुभद्रा पर तो ऐसा प्रभाव हुआ, कि वह भी संयम लेने के लिए तैयार हो गई। उसने धन्ना से कहा, कि—आपके समझाने का मुझ पर जो प्रभाव हुआ है, उसके परिणाम स्वरूप मैं भी वही मार्ग अपनाना चाहती हूँ, जो मार्ग आप अपना रहे हैं। इसलिए आप कृपा करके मुझे भी संयम-मार्ग से जोड़ने के लिए साथ ले लीजिये। आप थोड़ी देर ठहरिये, मैं अभी आपके साथ चलती हूँ।

सुभद्रा को भी संयम लेने के लिए तत्पर देखकर, धन्ना को बहुत प्रसन्नता हुई। उसने सुभद्रा से कहा, कि—तुम्हारे विचारों का मैं अभिनन्दन करता हूँ। तुम तैयार होओ, तब तक मैं शालिभद्र से मिल कर उसकी दबी हुई वीरता जागृत करने का प्रयत्न करूँ।

सुभद्रा से इस प्रकार कह कर तथा अपनी शेष पत्नियों को समझा बुझाकर धन्ना, शालिभद्र के घर गया। उसने भद्रा से पूछा, कि शालिभद्र कहाँ हैं? अपने जामाता को अनायास आया देखकर तथा उसके शरीर पर पूरी तरह वस्त्राभूषण न देखकर भद्रा आश्चर्य में पड़ गई, लेकिन उसने यह विचार कर अपना आश्चर्य दबा दिया, कि सम्भवतः ये शालिभद्र के वैराग्य का समाचार सुन कर एक दम शालिभद्र को समझाने के लिए आये हैं। वह, धन्ना

का स्वागत करके उसे शालिभद्र के पास ले गई। शालिभद्र ने भी धन्ना का स्वागत-सत्कार किया। धन्ना ने-शालिभद्र से कहा, कि— आप मेरे स्वागत-सत्कार की बात छोड़ कर यह बताइये कि आपका क्या विचार है? मैंने सुना है कि आप संयम लेने वाले हैं। धन्ना के इस कथन के उत्तर में शालिभद्र ने कहा, कि— आपने जो कुछ सुना है वह ठीक ही है। यह सांसारिक सम्पदा मुझे अनाथ बनाये हुई है, परतन्त्रता में डाले हुई है, इसलिए मैं इसको त्याग कर संयम लेना चाहता हूँ, तथा इसके लिए मैं इन स्त्रियों को समझा रहा हूँ, जो मुझे अपना पति मान रही हैं, परन्तु वास्तव में न तो मैं ही इन्हें स्वतन्त्र बना सकता हूँ, न ये मुझे स्वतन्त्र बना सकती हैं।

शालिभद्र का कथन समाप्त होने पर धन्ना ने उससे कहा, कि- संसार त्यागने की वीरता का आवेश आने पर भी स्त्रियों को समझाने के लिए अधिक समय तक रुक कर उस आवेश को ठंडा पड़ने देना, यह आपमें भूल हो रही है। जब संयम लेना ही है, और इसके लिए पूरी तरह विचार कर चुके हैं, तब अधिक दिनों तक रुका रहने की क्या आवश्यकता है? वीर रस से भरा हुआ व्यक्ति भविष्य की चिन्ता नहीं किया करता, और जो अपने पश्चात् के सम्बन्ध में चिन्ता करता है उसके लिए यही कहा जा सकता है, कि वह अभी गृह-संसार त्यागने से पूरी तरह समर्थ

नहीं है। इसलिए मैं तो यह कहता हूँ, कि संयम लेने जैसे शुभ कार्य में विलम्ब अवांछनीय है।

भद्रा को धन्ना की ओर से यह आशा थी कि ये शालिभद्र को संयम न लेने के लिए समझावेंगे, लेकिन उसने जब यह देखा कि ये तो शालिभद्र को शीघ्र संयम लेने के लिए उपदेश दे रहे हैं, तब उसे बहुत ही आश्चर्य और दुःख हुआ। उसने धन्ना से कहा कि—आप शालिभद्र को यह क्या उपदेश दे रहे हैं। क्या आप भी शालिभद्र को संयम न लेने की सम्मति न देंगे?

भद्रा के इस प्रश्न के उत्तर मे धन्ना ने उससे कहा, कि—शालिभद्र से मेरा जो सम्बन्ध रहा है उसको दृष्टि मे रख कर मैं शालिभद्र को वही सम्मति दे सकता हूँ, जिससे शालिभद्र का हित हो। हितैषी सज्जन ऐसा ही किया करते हैं। जो इसके विरुद्ध करते हैं, वे हितैषी नहीं हैं। मैं चाहता हूँ कि शालिभद्र ने जो वीरतापूर्ण विचार किया है, उस विचार को ये वीरता पूर्ण रीति से ही कार्योन्वित करें। इसी विचार से मैं शालिभद्र के पास आया हूँ। तुम्हारी पुत्री के उपदेश से मैं भी वही मार्ग अपनाने के लिए तैयार हुआ हूँ, जिस मार्ग को शालिभद्र अपनाना चाहते हैं। तुम्हारी पुत्री केवल मुझे ही उपदेश देकर नहीं रही है, किन्तु वह भी संयम लेने की तैयारी कर रही है। मैंने सोचा, कि जिनके कारण हम लोगों ने संयम लेने का विचार किया है,

वे शालिभद्र हम लोगों से पिछड़े हुए न रह जावें। यह सोचकर मैं शालिभद्र को उसी प्रकार ललकारने आया हूँ, जिस प्रकार वीरता बताने के लिए सिंह को ललकारा जाता है।

धन्ना का यह कथन सुन कर भद्रा को तो—पुत्र, पुत्री एवं जामाता तीनों ही संयम ले रहे हैं इस विचार से—दुःख हुआ, परन्तु शालिभद्र को प्रसन्नता हुई। उसके हृदय में संयम का अंकुर तो उत्पन्न हो ही गया था। धन्ना के कथन-रूपी जल से वह अंकुर बढ़ गया, और वह भी धन्ना के साथ ही दीक्षा लेने के लिए तय्यार हो गया। शालिभद्र को दीक्षा लेने के लिए तय्यार करके धन्ना अपने घर आया। सुभद्रा अपनी सौतों को समझा बुझाकर दीक्षा लेने की तय्यारी कर रही थी। राजा श्रेणिक ने जब यह सुना कि शालिभद्र और धन्ना दोनों ही संसार से विरक्त हो गये हैं, तथा संयम लेने की तय्यारी कर रहे हैं, तब वह भी धन्ना के यहां आया। उसने दीक्षोत्सव की तय्यारी कराई। अन्त में सुभद्रा सहित धन्ना, पालकी में बैठ कर शालिभद्र के यहाँ चला। उधर शालिभद्र भी अपनी पत्नियों को समझा बुझाकर दीक्षा लेने के लिए तय्यार हो गया था और धन्ना की प्रतीक्षा कर रहा था। इतने में वह पालकी शालिभद्र के यहाँ पहुँच गई, जिसमें सुभद्रा सहित धन्ना बैठा हुआ था। इन दोनों को देखकर शालिभद्र प्रसन्न हुआ, परन्तु भद्रा का दुःख बढ़ गया। वह कहने लगी, कि

यदि मुझे धैर्य देने के लिए सुभद्रा रही होती तब भी ठीक था, परन्तु वह भी तो जा रही है ! भद्रा को विकल देख कर सुभद्रा ने उसे समझा बुझाकर धैर्य दिया।

राजा श्रेणिक ने शालिभद्र के दीक्षोत्सव की भी तय्यारी कराई। शालिभद्र भी एक पालकी में बैठा। शालिभद्र के साथ उसकी माता भद्रा रजोहरण पात्र आदि लेकर बैठी। एक पालकी में सुभद्रा सहित धन्ना बैठा हुआ था, और दूसरी में भद्रा सहित शालिभद्र। धन्ना की शेष सात पत्नियाँ धन्ना की पालकी के आस-पास थीं, और शालिभद्र की बत्तीस पत्नियाँ शालिभद्र की पालकी के आस-पास थीं। राजा श्रेणिक तथा नगर के और सब लोग भी साथ थे।

उत्सवपूर्वक सब लोग भगवान महावीर की सेवा में उपस्थित हुए। धन्ना सुभद्रा और शालिभद्र पालकियों से उतर कर भद्रा के आगे आगे भगवान महावीर के सामने गये। आँखो से आँसू गिराती हुई भद्रा ने भगवान से प्रार्थना की, कि—हे प्रभो, मेरा पुत्र शालिभद्र, मेरी पुत्री सुभद्रा और मेरे जामाता धन्नाजी, ये तीनों संसार के दुःख से घबराकर आपकी सेवा में उपस्थित हुए हैं और आपसे संयम लेकर संसार के जन्ममरण रूपी दुःख से मुक्त होना चाहते हैं। मैं आपको शिष्य शिष्या रूपी भिक्षा देती हूँ। आप मेरे द्वारा दी गई यह भिक्षा स्वीकार कीजिये।

भगवान से इस तरह प्रार्थना करके भद्रा ने शालिभद्र सुभद्रा और धन्ना से कहा, कि—तुम तीनों जिस ध्येय को लेकर गृह-संसार त्याग रहे हो तथा संयम ले रहे हो, वह ध्येय पूरा करना, संयम का भली प्रकार पालन करना, संयम मे होने वाले कष्ट भली प्रकार सहना, तप करना, सब सन्तों की सेवा करना, और सब के कृपापात्र बनकर ऐसा प्रयत्न करना कि जिसमें फिर इस संसार में जन्म कर किसी माता को दुःखी न करना पड़े।

भद्रा की आज्ञा एवं धन्ना शालिभद्र और सुभद्रा की प्रार्थना से भगवान ने धन्नाजी शालिभद्रजी और सुभद्रा को दीक्षा दी। भगवान ने दीक्षा देकर सुभद्रा को सती चन्दनबाला के सुपुर्द कर दी। दीक्षा-कार्य समाप्त होने पर शालिभद्रजी एवं धन्नाजी की त्यक्त पत्नियों भद्रा और राजा श्रेणिक आदि सब लोग अपने अपने घर गये, तथा भगवान महावीर भी सन्त सतियों सहित राजगृह से विहार कर गये।

मोक्ष !

रम्यं हर्म्यतलं न किं वसयते श्राव्यं न गेयादिकं
किं वा प्राणसमा समागम सुखं नैवाधिकं प्रीतये ।
किन्तूद्भ्रान्त पतत्पतङ्ग पवन व्यालोल दीपाङ्कुरो-
च्छाया चंचल माकलय्य सकलं सन्तो वनान्तंगताः ॥

अर्थात्—क्या रहने के लिए उत्तमोत्तम महल और सुनने के ळिए उत्तमोत्तम गीत न थे, तथा क्या उन्हें प्यारी स्त्रियों के समागम का सुख न था जो सन्त लोग जंगळ में रहने गये ? उन्हें यह सब कुछ प्राप्त था, लेकिन उनने इन सब को उसी प्रकार चंचल समझ कर छोड दिया, जिस प्रकार पतङ्ग के पंखों की हवा से हिळनेवाले दीपक की छाया चंचल होती है, और इसी कारण वे वन में रहते हैं ।

जो महात्मा लोग गृह-संसार त्यागकर वन में निवास करते हैं, वे वन में इसलिए नहीं रहने लगे हैं कि संसार में उन्हें विषयजन्य सुख प्राप्त न थे। किन्तु इसलिए रहने लगे हैं, कि यह संसार स्वयं को विषय भोग की आग से नष्ट कर रहा है, इसलिए यदि हम इसमें रहे तो संसार के लोगों की तरह हमारा भी विनाश होगा। इस तरह स्वयं को सांसारिक विषय-भोगों की आग से बचाकर अपूर्व शान्ति में स्थापित करने के लिए ही महात्मा लोग गृह त्यागकर वन में रहते हैं। जो लोग घर स्त्री प्रभृति न होने के कारण अथवा संसार भार वहन करने की अयोग्यता के कारण, या गृह स्त्री आदि नष्ट हो जाने के कारण संसार से विरक्त हो जाते हैं, उनकी विरक्ति श्रेष्ठतम नहीं हो सकती। श्रेष्ठ वैराग्य तो वही है, जो प्राप्त सांसारिक सुख स्वेच्छा पूर्वक त्यागे गये हों, और वह भी इस भावना से कि हम विषय भोग की आग मे न जलें।

धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि ने, श्रेष्ठतम वैराग्य होने से ही गृह नगर का निवास त्याग कर संयम लिया था। भगवान से दीक्षा लेकर दोनों मुनि संयम का पालन करने लगे। उन दोनों मुनि ने मास मास खमण की तपस्या प्रारम्भ कर दी। इस तरह की तपस्या करते हुए उन दोनों को बारह बरस बीत गये। बारह बरस व्यतीत होने के पश्चात्, वे दोनो भगवान के साथ-फिर

राजगृह आये। वह दिन उन दोनों मुनि के पारणे का था। इधर राजगृह नगर में भगवान के पधारने की खबर हुई। भद्रा ने भी सुना, कि भगवान पधारे हैं और उन्हीं के साथ मुनिव्रतधारी मेरे पुत्र तथा जामाता का भी आगमन हुआ है। यह जानकर भद्रा एवं उसकी पुत्रवधुओं को बहुत ही आनन्द हुआ। वे सब दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी करने लगीं।

भद्रा के यहाँ तो भगवान एवं उनके साथ की मुनिमण्डली का दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी हो रही थी, और उधर धन्ना मुनि तथा शालिभद्र मुनि भिक्षा के लिए नगर में जाने की स्वीकृति प्राप्त करने को भगवान की सेवा में उपस्थित हुए। भगवान ने दोनों मुनि को भिक्षा के लिए नगर मे जाने की स्वीकृति देकर शालिभद्र मुनि से कहा, कि—हे शालिभद्र, आज तेरी माता के हाथ से तुम दोनों का पारणा होगा।

भगवान से स्वीकृति प्राप्त करके धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि भिक्षा के लिए नगर में गये। उन दोनों ने विचार किया, कि जब भगवान ने पारणा होने के विषय में निश्चय कर दिया है, तब किसी दूसरे के घर जाना व्यर्थ है। अपने को भद्रा के ही घर चलना चाहिए। इस तरह विचार कर, वे दोनो मुनि भद्रा के यहाँ आये, लेकिन भद्रा के यहाँ तो भगवान का दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी हो रही थी, तथा तपादि के कारण उन दोनों मुनि

की आकृति एवं उनके शरीर में भी ऐसा अन्तर पड़ गया था, कि जिसमे भद्रा के यहाँ उन्हे किसी ने भी न पहिचाना। अवसर न देखकर दोनों मुनि भद्रा के घर से लौट पड़े। किसी को अपना परिचय भी नहीं दिया।

भद्रा के घर से निकल कर दोनों मुनि आपस में कहने लगे, कि भगवान ने यह कहा था कि तेरी माता के हाथ से पारणा होगा, लेकिन भद्रा के यहां से तो खाली लौटना पड़ा! कुछ भी भिक्षा नहीं मिली। कदाचित् सूर्य चन्द्र तो वदल भी सकते हैं, परन्तु भगवान ने जो कुछ कहा वह कदापि मिथ्या नहीं हो सकता। इसलिए अपने को एक वार फिर भद्रा के घर चलना चाहिए। सम्भव है कि इस वार उसके घर से अपने को भिक्षा मिले।

इस प्रकार विचार कर दोनों मुनि फिर भद्रा के घर गये, लेकिन इस वार भद्रा के गृहरक्षक सेवकों ने उन्हे द्वार पर ही रोक दिया, भीतर नहीं जाने दिया। दोनों मुनि लौट चले। उनने निश्चय किया, कि पारणा हो या न हो, अव आज अपने को भद्रा के यहाँ न जाना चाहिए, किन्तु भगवान की सेवा में लौट चलना चाहिए।

दोनों मुनि चले जा रहे थे। जाते हुए दोनों मुनि को एक दूध बेंचनेवाली वृद्धा ने देखा। मुनियों को देख कर वृद्धा बहुत

ही हर्षित हुई। उसे इतना हर्ष हुआ, कि उसके स्तनों में दूध की धारा छूटने लगी। उस वृद्धा ने दोनों मुनि के सन्मुख खड़ी होकर प्रार्थना की, कि—हे प्रभो, मेरे पास दूध है, आप लोग कृपा करके थोड़ा दूध लीजिए। यदि आपने मेरे हाथ से दूध लेने की कृपा की तो मैं स्वयं को बहुत सद्भागिन मानूँगी।

वृद्धा की प्रार्थना सुनकर दोनों मुनि ने विचार किया, कि अपन इस वृद्धा की प्रार्थना कैसे अस्वीकार कर दें। एक ओर तो भद्रा के घर का अनादर, और दूसरी ओर इसके द्वारा की जाने वाली यह विनम्र प्रार्थना। दोनों में कैसा अन्तर है! यद्यपि भगवान ने यह कहा था कि तुम्हारी माता के हाथ से पारणा होगा, लेकिन भगवान की इस बात के आशय को भगवान ही जानें। अपन इस वृद्धा की प्रार्थना कैसे ठुकरा दें।

इस प्रकार विचार कर दोनों मुनि ने, वृद्धा के सन्मुख अपने पात्र रख दिये। वृद्धा ने हर्ष तथा उत्साह के साथ दोनों मुनि के पात्र दूध से भर दिये, और हर्षित होती हुई तथा अपना जन्म सफल मानती हुई वह अपने घर गई।

दोनों मुनि पारणा कर के भगवान की सेवा में उपस्थित हुए। दोनों को देख कर भगवान ने उनसे कहा, कि—तुम दोनों पहले दो बार भद्रा के यहाँ गये थे, परन्तु तुम्हें भद्रा के यहाँ से भिक्षा नहीं मिली। जब तुम लौटे आ रहे थे, तब तुम्हे दूध बेंचने

वाली एक वृद्धा मिली, जिसने तुम्हें दूध की भिक्षा दी। इस पर से तुम यह सोचते होओगे, कि भगवान के कथनानुसार हमारा पारणा हमारी माता के हाथ से नहीं हुआ, परन्तु हे शालिभद्र, वह दूध वहरानेवाली वृद्धा तेरी पूर्वभव की माता ही है। उस वृद्धा के प्रताप से ही तुझे इस भव मे सांसारिक सम्पदा प्राप्त हुई, और फिर उस सांसारिक सम्पदा को त्याग कर तू यह संयम रूप सम्पत्ति प्राप्त कर सका है।

यह कह कर भगवान ने कहा, कि—हे शालिभद्र, पूर्वभव में तू एक ग्वाल का बालक था। तू जब बालक था, तभी तेरा पिता मर गया था, इसलिए तेरी वह दूध देनेवाली वृद्ध माता तुझे लेकर इस राजगृह नगर में ही रहने लगी थी। तेरी माता लोगों के यहाँ मेहनत मजदूरी करती थी और तू लोगो की गायों के बछड़े चराया करता था। उस समय तेरा नाम संगम था। एक दिन, दूसरे लड़कों को खीर खाते देख कर तूने अपनी माँ से खीर माँगी। तेरी माँ ने इधर उधर से दूध शक्कर चाँवल आदि लाकर तेरे लिए खीर बनाई। वह तेरे लिए परस कर काम करने चली गई। तू खीर ठंडी होने की प्रतीक्षा में थाली में खीर लेकर बैठा था, इतने ही में एक तपस्वी साधु भिक्षा के लिए आये। यद्यपि तूने पहले कभी खीर नहीं खाई थी, फिर भी उन मुनि को देख कर तुझे हर्ष हुआ, तथा तूने प्रसन्नतापूर्वक थाली में की

सब खीर मुनि को वहरा दी। मुनि के जाने के पश्चात् तू थाली में लगी हुई खीर चाटने लगा, इतने ही में तेरी माता आ गई। उसने तुझे और खीर दी। तूने इतनी अधिक खीर खाई, कि जिसे पचाना तेरी शक्ति से बाहर था। इस कारण तुझे संग्रहणी हो गई, और अन्त में उसी रोग से तेरी मृत्यु हो गई, परन्तु तेरे हृदय में उन मुनि का ध्यान बना ही रहा, जिन्हें तूने खीर का दान दिया था। खीर का दान देने एवं अन्त समय मे मुनि का ध्यान करने के कारण ही इस भव में तुझे इहलौकिक तथा पारलौकिक सुख-सामग्री प्राप्त हुई। इस प्रकार जिसने तुझे दूध का दान दिया वह वृद्धा तेरी पूर्वभव की माता ही है।

भगवान का कथन सुनकर धन्ना और शालिभद्र मुनि को बहुत ही आनन्द हुआ। साथ ही उन्हें यह विचार भी हुआ, कि भगवान ने पूर्वभव का वृत्तान्त सुना कर हमारी आँखें खोल दी हैं। भगवान ने यह बता दिया है कि पूर्वभव में कैसे-कैसे कष्ट सहने पड़े, और किस कार्य के परिणाम स्वरूप इस भव में संयम की यह योगवाई मिली। इस योगवाई के प्राप्त होने पर भी क्या अपन ऐसा प्रयत्न न करेंगे, कि जिससे अपने को फिर जन्म-मरण न करना पड़े, और कष्ट न सहना पड़े। यदि अपन ने ऐसा प्रयत्न न किया तो यह अपनी भयङ्कर भूल होगी। अब अपना शरीर

भी क्षीण हो गया है, इसलिए अपने को पंडितमरण द्वारा शरीर त्याग कर जीवनमुक्त हो जाना चाहिए।

इस प्रकार विचार कर धन्ना मुनि तथा शालिभद्र मुनि ने भगवान से संथारा करने को आज्ञा माँगी। भगवान ने उन दोनों को संथारा करने की स्वीकृति दे दी। दोनों मुनि पर्वत पर चढ़ गये। वहाँ उनने एक एक शिला पर विधिवत पादोपगमन संथारा कर लिया।

भद्रा तथा उसकी पुत्रवधुएँ एवं धन्ना की सातों पत्नियाँ भगवान को वन्दन करने के लिए गईं। भगवान को वन्दन कर चुकने के पश्चात् भद्रा ने भगवान से कहा, कि—प्रभो, धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि क्यों नहीं दिखते ? भद्रा के इस प्रश्न के उत्तर में भगवान ने कहा, कि—हे भद्रा, वे दोनों ही मुनि भिक्षा के लिए तुम्हारे घर आये थे, परन्तु तुमने उन्हें नहीं पहचाना, न तुम्हारे यहाँ से उन्हें भिक्षा ही मिली। वे दोनों मुनि तुम्हारे यहाँ से लौटे आ रहे थे, इतने ही में मार्ग में शालिभद्र मुनि की पूर्वभव को माता मिल गई, जिसने दोनों मुनि को दूध वहराया। पूर्वभव की माता द्वारा प्राप्त दूध से पारणा करके, दोनों मुनि ने अपना-अपना शरीर अशक्त जानकर और अवसर आया देखकर, मेरी स्वीकृति ले वैभारगिरि पर्वत पर संथारा कर लिया है।

भगवान से यह सुनकर, भद्रा एवं धन्नाजी और शालिभद्रजी की पत्नियों को बहुत ही दुःख तथा पश्चात्ताप हुआ। भद्रा कहने

लगी, कि वे, दोनों मुनि मेरे घर आये फिर भी मैंने उन्हें नहीं पहचाना, न उन्हें भिक्षा ही दे सकी ! इस प्रकार दुःख और पश्चात्ताप करती हुई भद्रा उसकी पुत्रवधुएँ और धन्ना की पत्नियाँ, पर्वत पर धन्ना मुनि तथा शालिभद्र मुनि का दर्शन करने के लिए गईं। दोनो का दर्शन करके भद्रा तथा उसके साथ की सब स्त्रियाँ रुदन करती हुई पश्चात्ताप करने लगीं, एवं अपने अपराध के लिए क्षमा मांगने लगीं। यद्यपि दोनो मुनि को सुनाकर भद्रा सहित सब स्त्रियो ने बहुत रुदन तथा पश्चात्ताप किया, परन्तु उन संथारा किये हुए दोनों मुनि ने न तो उनके रुदन या पश्चात्ताप की ओर ध्यान ही दिया, न उनकी ओर देखा ही। भद्रा आदि ने उन दोनों मुनि से एक बार उनकी ओर देखने और कुछ कहकर सान्त्वना देने की बहुत प्रार्थना की, बहुत विलाप किया, परन्तु सब व्यर्थ हुआ। धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि उसी प्रकार दृढ़ रहे, जिस प्रकार मेरु पर्वत अविचल रहता है। भद्रा आदि ने एक बार नहीं किन्तु कई बार यह प्रयत्न किया कि धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि एक बार हमारी ओर देखकर हम से कुछ कहे, लेकिन वे अपने एक भी बार के प्रयत्न में सफल नहीं हुईं।

कई लोगों का कहना है कि धन्ना मुनि तो संथारे में अविचल रहे, परन्तु शालिभद्र मुनि ने भद्रा का रुदन सुन आँखे खोल कर भद्रा आदि की ओर देख दिया था। परिणामतः संथारा समाप्त

होने पर धन्ना मुनि तो सिद्ध बुद्ध एवं मुक्त हो गये, लेकिन शालिभद्र मुनि सिद्ध बुद्ध मुक्त होने के बदले सर्वार्थसिद्ध विमान में गये। किन्तु ऐसा कहना ठीक नहीं है। वास्तविक बात यह है, कि शालिभद्र मुनि का आयुष्य सात लव कम था, इससे धन्ना मुनि तो सिद्ध हो गये और शालिभद्र मुनि सर्वार्थसिद्ध विमान में गये। यह बात गलत है, कि शालिभद्र मुनि ने संथारे में भद्रा आदि की ओर देखा था।

दोनों मुनि का संथारा पूर्ण हुआ। राजा श्रेणिक ने उनके शव का उत्सवपूर्वक अग्नि संस्कार किया। पश्चात् वह भद्रा आदि सब को समझाबुझाकर घर लाया। राजगृह के भव्य लोग धन्ना और शालिभद्र मुनि की जोड़ी को हृदय में रखकर आत्म-कल्याण करने लगे।

उपसंहार

चरितानुवाद मनोविनोद के लिए नहीं हुआ करता है । चरि-तानुवाद का उद्देश्य, चरित्र द्वारा मनुष्य को सद्‌कार्य एवं दुष्कार्य का परिणाम बताकर दुष्कार्यों से बच सत्कार्य में प्रवृत्त होने की शिक्षा देना है । प्रस्तुत कथा का उद्देश्य भी यही है । इस कथा में आये हुए पात्रों के चरित्र से भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षा मिलती है । इस कथा के मुख्य नायक हैं धन्नाजी । धन्नाजी ने अपने पूर्व भव से महात्मा को दान दिया था । उस दान एवं दूसरे सुकृत के फल स्वरूप इस भव में उनको ऋद्धि-सम्पदा उसी प्रकार घेरे रही, जिस प्रकार चन्द्र को चन्द्रिका घेरे रहती है । यद्यपि उनने अनेक बार गृह-सम्पत्ति को त्यागा, लेकिन गृह-सम्पत्ति ने उन्हें उस समय तक नहीं त्यागा जब तक कि वे संयम में प्रव्रजित नहीं हो गये, किन्तु वह दौड़-दौड़ कर धन्नाजी के आगे आगे ही आती रही । इसके विरुद्ध धन्नाजी के तीनों भाइयों को अनेक बार धन्नाजी द्वारा त्यक्त-सम्पत्ति प्राप्त हुई, लेकिन वह सम्पत्ति उनके पास उसी तरह

नहीं ठहरी, जिस तरह फूटे घड़े में जल नहीं ठहरता है किन्तु निकल जाता है। साथ ही उन्हें वार-वार कष्ट भी सहने पड़े, अपमानित भी होना पड़ा, और उन्होंने अपना जीवन दूसरे के सहारे ही व्यतीत किया। ऐसा होने का कारण यही था, कि उन्होंने पूर्वभव में मुनि को दिये गये दान का विरोध किया था। इस पर से यह शिक्षा लेनी चाहिए, कि दान आदि सुकृत एवं उनके अनुमोदन का फल श्रेष्ट होता है इसलिए ये कार्य आचरणीय हैं, लेकिन सुकृत के विरोध का फल निकृष्ट तथा दुःखपूर्ण होता है, इसलिए ऐसे कार्य त्याज्य हैं। यदि कोई व्यक्ति स्वयं दान नहीं दे सकता या दूसरे सुकृत नहीं कर सकता, तो वह उनके अनुमोदन रूप सुकृत कर सकता है, परन्तु सुकृत का विरोध करना तो और पाप बांधना है, जिसका परिणाम दुःख ही है।

अब यह देखते हैं कि पूर्व भव के उक्त कृत्यों के कारण धन्नाजी और उनके भाइयों के कार्य एवं स्वभाव में कैसा अन्तर रहा, और उस अन्तर का क्या परिणाम हुआ। धन्नाजी का स्वभाव सहनशील साहसी एवं दूसरे की उन्नति से प्रसन्न होने का था। वे चाहते थे, कि मेरे कारण किसी को—और विशेषतः भाइयों को—किसी प्रकार का कष्ट न हो तो अच्छा। वल्कि वे अपने आपको कष्ट में डालकर अपने भाइयों को सुखी वनाना चाहते थे। लेकिन उनके भाइयों का स्वभाव उनके स्वभाव के विलकुल विपरीत था। वे

दूसरे की बड़ाई मिटाकर बड़े बनना चाहते थे। उनमें दूसरे की प्रशन्सा सुनने सहने की शक्ति न थी। वे दूसरे की उन्नति से कुढ़ते थे। उनमें दूसरे से निष्कारण वैर एवं कलह करने की भावना रहती थी। वे साहसी तथा पुरुषार्थी भी न थे, किन्तु पर-भाग्योपजीवी थे। इस प्रकार उनमें वे अवगुण विद्यमान थे, जो मनुष्य को पाप की ओर प्रेरित करते हैं। इन अवगुणों के कारण उन्हे कैसे कैसे संकट सहने पड़े, यह इस कथा से ज्ञात ही है। इसलिए धन्ना और उसके भाइयों के चरित्र से गुणग्राही होने एवं अवगुण त्यागने की शिक्षा मिलती है। साथ ही इनके चरित्र से अपने दुष्कृत्यों का पश्चात्ताप करने और संयम लेकर पाप-मुक्त होने अथवा आत्मकल्याण करने की शिक्षा भी मिलती है। धन्ना के भाई जब अपने अवगुण समझ गये तब उन्होंने पश्चात्ताप करने में भी देर नहीं की। बल्कि मुनि द्वारा अपने पूर्व कृत्य जान कर, वे सर्वथा पापरहित होने के लिए संयम मे प्रवर्जित हो गये। इसी प्रकार धन्नाजी भी प्राप्त धन सम्पत्ति में ही नहीं उलझे रहे, किन्तु आत्म-कल्याण करने के लिए सब को त्यागकर संयम स्वीकार किया, उत्कृष्ट रीति से संयम का पालन किया और अन्त में मोक्ष प्राप्त किया। इस प्रकार इस चरित्र से अपनी भूल स्वीकार करके पश्चात्ताप करने की भी शिक्षा मिलती है, और चिन्तामणि जैसा रत्न भी आत्मा का कल्याण नहीं कर सकता

ऐसा मानकर सब सम्पत्ति त्याग आत्म-कल्याण के लिए संयम-मार्ग अपनाने की भी शिक्षा मिलती है।

धन्ना के पिता धनसार के चरित्र से प्रधानतः यह शिक्षा मिलती है, कि उचित बात भी उन लोगों के सामने कहना ठीक नहीं है, जो असहिष्णु या ईर्षालु हैं। ऐसा करने से कलह एवं अनर्थ की सम्भावना रहती है। यदि धनसार अपने तीनों लड़कों के सामने समय-समय पर धन्ना की प्रशन्सा न किया करता, तो सम्भवतः उसके तीनों लड़कों के हृदय में धन्ना के प्रति ईर्षाग्नि न धधकती। अपने बुद्धिहीन तीनों लड़कों से, धन्ना को मनुष्य के शव की जाँघ में से रत्न मिलने और चिन्तामणि रत्न मिलने की बात कहकर धनसार ने कोई बुद्धिमानी का कार्य नहीं किया था। इसी प्रकार धनपुर में सुभद्रा की प्रशन्सा करके भी उसने भूल ही की थी। सुभद्रा को जेठानियों के हृदय में सुभद्रा के प्रति दुर्भाव उत्पन्न होने का कारण धनसार की यह भूल ही थी। चार व्यक्तियों में से किसी में विशेषता और किसी में न्यूनता होना अस्वाभाविक नहीं है, लेकिन विशेपता और न्यूनता को ऐसा रूप न देना चाहिए जिससे दूसरे को बुरा मालूम हो या किसी प्रकार का अनर्थ उत्पन्न हो।

स्त्रियों के लिए सुभद्रा का चरित्र आदर्श है। सुभद्रा केवल सुख में ही पति की सङ्गिनी नहीं रही, किन्तु पति के लिए उसने

घोरातिघोर कष्ट सहे। यदि चाहती तो वह भी कुसुमश्री और सोमश्री की तरह अपने पिता के घर जा सकती थी। उसका पिता सम्पन्न था, इसलिए उसे पिता के यहाँ रहने मे किसी प्रकार का कष्ट नही हो सकता था। लेकिन उसने कष्ट सहकर भी पति को खोजना अपना कर्त्तव्य समझा, इसीलिए उसने सिर पर रख कर मिट्टी तक ढोई। इस प्रकार सुभद्रा का चरित्र सुख और दुःख दोनों में पति की साथिनी रहने की शिक्षा देने के साथ ही स्त्रियों को यह भी शिक्षा देता है, कि दुःख के समय सुख के प्रलोभन मे पड़ जाने पर, सतीत्व की रक्षा नहीं हो सकती। सतीत्व की रक्षा वही स्त्री कर सकती है, जो दुःख से न घबरावे और सुख पर न ललचावे। अपरिचित धन्ना ने सुभद्रा को कैसे प्रलोभन दिये थे। और वे भी ऐसे समय में, जब कि सुभद्रा को अपने पति धन्ना का यह भी पता न था कि धन्ना जीवित है या नहीं, उसको मिट्टी ढोने की मजदूरी करके जीवन-निर्वाह करना पड़ता था, पराये घर छाछ माँगने जाना पड़ता था, और उस पर भी जेठानियों की जलीकटी बातें सुननी पड़ती थीं। फिर भी सुभद्रा ने प्रलोभन में पड़कर परपुरुष की कामना नहीं की।

सुभद्रा के चरित्र से एक शिक्षा और भी मिलती है। सुभद्रा जानती थी कि मेरे तीनों जेठ मेरे पति से द्रोह रखते हैं, मेरे पति को मेरे जेठों के कारण बार-बार कष्ट में पड़ना पड़ा है, फिर भी

उसने धन्ना से अपने जेठों के विरुद्ध कुछ नहीं कहा। भली स्त्रियाँ कष्ट तो सहलेती हैं, लेकिन गृहकलह उत्पन्न नहीं करतीं, न बढ़ाती ही हैं, किन्तु मिटाने का ही प्रयत्न करती हैं। सुभद्रा का यह चरित्र भी स्त्रियों के लिए आदर्श है, और सब से बड़ा आदर्श उसका अपने पति के साथ दीक्षा लेना है। ऐसा करके सुभद्रा ने यह सिद्ध कर दिया, कि सच्ची पतिव्रता कैसी होती है, और वह कहाँ तक पति का अनुगमन करती है।

इस तरह इस चरित्र से ऐसी अनेक शिक्षाएँ मिलती हैं, जिनको दृष्टि में रखकर मनुष्य इहलौकिक सुख भी प्राप्त कर सकता है और पारलौकिक सुख भी। जो जैसा पात्र होगा, वह इस कथा से उसी तरह की शिक्षा ग्रहण करेगा। जिसका उपादान कारण अच्छा है, वह व्यक्ति इस कथा से अच्छी शिक्षा लेकर निश्चय ही अपने आत्मा का कल्याण करेगा।